Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण महिलाओं में विकास योजनाओं के प्रति जागरूकता एवं प्रभाविकता : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

आरती
शोधार्थिनी– समाजशास्त्र
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
डॉ. जयप्रकाश यादव
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

सारांश
दुनिया के किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या का लगभग आधा हिस्सा महिलाओं का है जो हमेशा से विभिन्न चुनौतियों का सामना करती आ रही है जैसे गुणवत्तायुक्त शिक्षा की कमी, बेहतर स्वास्थ्य एवं पोषण का अभाव, आर्थिक निर्भरता, लैंगिक असमानता आदि द्य ग्रामीण महिलाओं के इन स्थितियों एवं परिस्थितियों को देखते हुए उनके उपयुक्त विकास के लिए सरकार द्वारा कई महत्वपूर्ण योजनाएं एवं कार्यक्रम संचालित किये जा रहे हैं । जो ग्रामीण महिलाओं को जागरुक एवं प्रभावित कर एक सशक्त एवं आत्मनिर्भर महिला बन रही है जिससे महिलाएं अब अपने जीवन में एक सकारात्मक बदलाव ला पा रही हैं। महिला बाल विकास और राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन जैसे आदि कार्यक्रमों द्वारा महिलाओं को स्वास्थ्य एवं पोषण के लिए कुछ राशि भी प्रदान की जा रही है जिससे न सिर्फ महिलाएं बल्कि एक स्वस्थ समाज भी निर्मित हो रहा है। सरकार अब बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ और कौशल विकास उद्यमिता मंत्रालय द्वारा महिलाओं को शिक्षण और प्रशिक्षण जैसी सेवाएं प्रदान कर रही है। स्थानीय पंचायतों में उनके लिए 33ः आरक्षण का प्रावधान भी किया गया है जिससे राजनीतिक सक्रियता में भी उनकी भागीदारी बढ़ सके। परिणामस्वरुप योजनाओं द्वारा विकास के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी बड़ी है किंतु अभी भी ग्रामीण महिलाओं में योजनाओं के प्रति जानकारी का अभाव और समाज में व्याप्त पूर्वाग्रह जैसी धारणाओं ने उन्हें लाभान्वित होने से वंचित किया है जिसे अधिक से अधिक जागरूकता और डिजिटल प्रौद्योगिकी की सहायता से दूर किया जा सकता है। ताकि ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं योजनाओं के प्रति जागरूक होकर उससे लाभान्वित हों ।

प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन गुणात्मक व्याख्यात्मक दृष्टिकोण से किया गया है जिसका उद्देश्य ग्रामीण महिलाओं में विकास योजनाओं के प्रति जागरूकता एवं प्रभावित का अध्ययन करना है ।

मुख्य शब्द : ग्रामीण महिलाएं, विकास योजनाएं, जागरूकता और प्रभाव, सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण।

प्रस्तावना : ग्रामीण समाज में महिलाओं को आज भी पति के लिए चरित्र, संतान के लिए ममता, समाज के लिए शील, विश्व के लिए ममता और जीवन मंत्र के लिए करुणा सजाने वाली समझा जाता है। वैदिक काल में महिलाएं स्वतंत्रता थी और उन्हें पुरुषों के बराबर अधिकार प्राप्त था महिलाओं को धर्म शिक्षा और स्वयं पति चलने का अधिकार था, परंतु धीरे–धीरे उनकी स्थिति गिरती गई और मध्य युग में गिरावट की स्थिति एक एकदम चरम पर आ गई। समाज में विभिन्न कुप्रथाओं का आगमन प्रारंभ हुआ, जैसे– बाल विवाह, लैंगिक भेदभाव, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा आदि ।आधुनिक काल में समय ने एक बार पुनः करवट लिया और अंग्रेजी शासन काल में देश में सामाजिक–आर्थिक आर्थिक जागृति उत्पन्न होने लगी। समाज सुधारकों और नेताओं का ध्यान महिलाओं की बद्तर स्थिति की ओर आकृष्ट हुआ। तत्पश्चात महिलाओं की स्थिति में सुधार होना प्रारंभ हुआ। फिर भी ग्रामीण परिवेश में महिलाएं परंपरागत दृष्टिकोण में सामाजिक विधानों के निर्मित हो जाने के बावजूद भी तमाम कठिनाइयों का अनुभव करती हैं ।

ग्रामीण समाज में आबादी का एक बड़ा हिस्सा महिलाओं का है। जहां पर गरीबी ग्रामीण परिवार की महिलाओं को अधिक दुष्प्रभावित करती है। गरीबी का महिलाओं के आर्थिक अवसरों और स्वतंत्रता के अभाव से सीधा संबंध है। पारिवारिक निर्णय में उनकी भागीदारी न के बराबर होती है। क्योंकि उन्हें आर्थिक संसाधन शिक्षा और सहयोग आसानी से सुलभ नहीं होते हैं। ग्रामीण समाज में महिलाओं की स्थिति एक जैसी नहीं होती है और क्षेत्र के हिसाब से उनकी अलग–अलग आवश्यकताएं होती हैं।

ग्रामीण महिलाओं की समग्र विकास के लिए महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी पहलुओं चाहे वे सामाजिक–आर्थिक आर्थिक हो या राजनीतिक, का प्रभावी सम्मिलन आवश्यक है। ग्रामीण महिलाओं को विकास की मुख्य धारा में सम्मिलित करना एक सतत प्रक्रिया है और समय की मांग के अनुसार महिलाओं को उनकी क्षमता का एहसास कराना, उनके उज्जवल भविष्य हेतु उन्हें जागरूक करना, उनके मार्गदर्शन और स्वास्थ्य पोषण में सुधार हेतु सरकार समय–समय पर महिला विकास से संबंधित विभिन्न योजनाएं और कार्यक्रम चल रही है। जिसका उद्देश्य महिलाओं को सामाजिक–आर्थिक रूप से सशक्त कर एक योग्य और आत्मनिर्भर महिला बनाना है ।

साहित्य समीक्षा

शर्मा, योगेंद्र (2018) का प्रस्तुत पुस्तक में कहना है कि महिला सशक्तिकरण को केवल आर्थिक आत्मनिर्भरता तक ही नहीं, बल्कि शिक्षा सामाजिक सम्मान और निर्णय निर्माण की क्षमता से भी जोड़ना है। इन्होंने महिला विकास के विभिन्न क्षेत्रों में हुए सकारात्मक परिवर्तनों के साथ–साथ सामाजिक असमानताओं और पितृसत्तात्मक मानसिकता को प्रमुख बाधा के रूप में रेखांकित किया है। इसमें महिलाओं के प्रभावी सशक्तिकरण हेतु सामाजिक चेतना, महिला जागरूकता और कानून की सुदृढ़ आवश्यकता पर बोल दिया गया है ।

डॉ राधिका गुप्ता, ने अपनी पुस्तक में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका, उनके समक्ष आने वाली चुनौतियों से निपटना और उन्हें सशक्त बनाने जैसे रणनीतियों की चर्चा की है। इन्होंने बताया कि ग्रामीण समाज में लैंगिक असमानता, शिक्षा और जागरूकता की कमी, स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुंच और आर्थिक संसाधनों की अनुपलब्धता ग्रामीण महिला विकास की प्रमुख चुनौतियां हैं। डॉक्टर राधिका गुप्ता का मानना है कि ग्रामीण महिलाओं में जागरूकता, बढ़ती रोजगार के अवसर और वित्तीय सहायता प्रदान कर उनकी स्थिति को बेहतर बनाया जा सकता है ।

सौरभ ,समीरा(2018) ने अपने लेख श्सशक्त होती ग्रामीण महिलाएंश में पाया कि सरकार पिछले दो दशकों में महिलाओं में जागरूकता बढ़ाने के प्रयासों को केंद्र के अंतर्गत अधिक समग्र और तीव्र मिशन के रूप में समेकित किया है और उन्हें मिशन श्पूर्ण शक्तिश के अंतर्गत समायोजित किया है। जो विभिन्न मंत्रालयों

द्वारा चलाए जा रहे महिला–उन्मुख कार्यक्रमों के लिए एकल विंडो की व्यवस्था करता है। इंटरनेट और सोशल मीडिया ने महिला सक्रियता को ऑनलाइन रूप से मजबूती प्रदान की है। डिजिटल इंडिया जैसी परियोजनाएं महिलाओं के लिए ई–लर्निंग के अवसर प्रदान कर रही हैं और महिलाओं के लिए आय के साधन भी सृजित हो रहे हैं ।

मिश्रा ,जेपी (2020) ने श्कृषि और ग्राम समृद्धि में महिलाओं की भूमिकाश संबंधी लेख में लिखा है कि विश्व स्तर पर विकसित और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने यह प्रमाणित किया है कि महिलाओं की भागीदारी एक राष्ट्र की समावेशी और स्थाई अर्थव्यवस्था के लिए अनिवार्य है। एक जीवंत अर्थव्यवस्था और समृद्ध समाज का निर्माण तभी हो सकता है जब लगभग 50 प्रतिशत महिलाओं की आबादी विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में पूरी तरह से सम्मिलित हो। ग्रामीण और कृषि समृद्धि में महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करने के लिए पुराने ढंग के कानूनों और नीतियों को पुनः जांचने और सुधारने व कौशल विकास हेतु सरकार की कई नूतन पहले महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं ।

उद्देश्य

1. ग्रामीण महिलाओं में विकास योजनाओं के प्रति जागरूकता एवं प्रभावित का अध्ययन करना ।

शोध विधिः

प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन गुणात्मक एवं व्याख्यात्मक परिपेक्ष में किया गया है। जिसमें शोध विधि का चयन इस उद्देश्य से किया गया है कि सरकार द्वारा चलाई गई योजनाओं का प्रभाव ग्रामीण महिलाओं पर न सिर्फ संरचनात्मक रूप से पड़ता है, बल्कि महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण और जीवन शैली से संबंधित सूक्ष्म स्तरों को भी प्रभावित करता है। इन प्रभावों से आए हुए परिवर्तन न सिर्फ संख्यात्मक आंकड़ों से ही समझे जाते हैं बल्कि इसके अनुभवों पर आधारित गुणात्मक व्याख्या की भी आवश्यकता होती है ।

तथ्यों का संकलनः

प्रस्तुत शोध– पत्र प्रमुखताः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिसमें विषय से संबंधित प्रतिष्ठित पुस्तक, शोध आलेख, पत्र– पत्रिकाएं, महिला रिपोर्ट व नीतिगत दस्तावेज आदि। इन स्रोतों द्वारा संकलित तथ्यों का उद्देश्य यह जानना है कि सरकारी एवं सरकारी योजनाओं के प्रति ग्रामीण महिलाओं में जागरूकता का स्तर क्या है ? कैसे वे उससे प्रभावित हो रही हैं ? उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति में किस प्रकार का परिवर्तन आ रहा है ? जिसका विश्लेषण व्याख्यात्मक दृष्टिकोण से किया गया है ।

महिला विकास से संबंधित योजनाओं का व्याख्यात्मक विश्लेषणः

ग्रामीण महिलाएं सामाजिक एवं आर्थिक रूप से बहुत ही पिछड़ी हुई है जिनके विकास के लिए सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएं एवं कार्यक्रम संचालित किया जा रहे हैं। ताकि महिलाएं अधिक से अधिक शिक्षित एवं जागरूक होकर सामाजिक–आर्थिक एवं लैंगिक भेदभाव जैसी समस्याओं से मुक्त हो सके। इस प्रकार ग्रामीण समाज में महिला से संबंधित विशाल वृद्धि की संभावना को देखते हुए स्वस्थ जागरूकता के साथ–साथ सुलभ और किफायती स्वास्थ्य सेवाओं की आवश्यकता को पूरा करने के लिए स्वास्थ्य तकनीकी, स्टार्टअप्स, ग्रामीण स्वास्थ्य देखभाल पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं, जिससे उनकी विकास संभावनाएं काफी मजबूत हो रही हैं और महिलाएं भी लाभकारी क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए उत्सुक हो रही हैं। अब गांवों में महिलाओं व बालिकाओं को सुरक्षित वातावरण प्रदान करने व लैंगिक समानता को सुनिश्चित करने के लिए महिला सभा के माध्यम से कार्य किया जा रहा है। महिलाएं जहां अक्सर अपनी बात को कहने में संकोच करती थीं, अब वहीं वे महिला वार्ड पंच की अध्यक्षता में महिला सभा द्वारा अपनी हर समस्या के बारे में बोल पा रही हैं। इसके माध्यम से अब ग्रामीण समाज में महिला सुरक्षा, अपराधों पर रोक, बालिकाओं को पोषण, बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं तथा सामाजिक व राजनीतिक सशक्तिकरण पर बल दिया जा रहा है।

इतना ही नहीं महिलाएं अभी योजनाओं का लाभ प्राप्त कर कृषि एवं पशुपालन संबंधी नई – नई तकनीक का प्रयोग करना सीख गई हैं । जिसमें ग्रामीण महिलाओं के उत्थान हेतु सरकार द्वारा प्रधानमंत्री मातृ वंदन योजना, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन , जननी सुरक्षा योजना, पोषण अभियान, बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ, वन स्टाफ सेंटर, महिला हेल्पलाइन, कामकाजी महिला छात्रावास, आंगनबाड़ी योजना, प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, प्रधानमंत्री मुद्रा योजना, राष्ट्रीय महिला कोष, महिला ई– हॉट, महिला उद्यमिता मंच, वित्तीय सुरक्षा कार्यक्रम, महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम, प्रधानमंत्री जनधन योजना, प्रधानमंत्री बीमा सुरक्षा योजना, अटल पेंशन योजना व महिला सशक्तिकरण परियोजना आदि। जिसका प्रभाव महिलाओं के विभिन्न स्तरों पर देखने को मिल रहा है–

गुणवत्तायुक्त शिक्षा एवं स्वास्थ्य में वृद्धि–

भारतीय समाज में बेटियों के प्रति जिस प्रकार का भेदभाव विद्यमान है इससे न सिर्फ सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को गहरा नुकसान पहुंचा है, बल्कि यह सामाजिक मानवता के लिए अभिशाप है। जिसकी जड़ता को मिटाने के लिए 22 जनवरी 2015 को बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ नामक योजना का प्रारंभ किया गया जो न सिर्फ बेटियों की शिक्षा को प्रोत्साहित करती है बल्कि सामाजिक सोच को भी उत्प्रेरित करती है। इस योजना से समाज में बेटियों के प्रति भेदभाव को खत्म करने में लोगों में जागरूकता बढ़ी है। जिला एवं ब्लॉक टास्क फोर्स गठित कर इस योजना समेत अनेक कार्यक्रमों को जनआंदोलन का रूप दिया गया है। महिलाओं के बेहतर स्वास्थ्य एवं पोषण को ध्यान में रखते हुए कई योजनाएं एवं कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं जो आर्थिक उत्पादकता में वृद्धि के साथ–साथ एक स्वस्थ समाज का भी निर्माण करता है।

सामाजिक और आर्थिक विकास में वृद्धि–

महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक विकास वृद्धि में विकास योजनाओं का प्रमुख योगदान रहा है। इसके माध्यम से समाज में न सिर्फ लैंगिक भेदभाव में कमी आई है, बल्कि महिलाओं में आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान में वृद्धि हुई है। अब महिलाएं कौशल प्रशिक्षण प्राप्त कर स्वरोजगार एवं जीवन स्तर में सुधार कर आर्थिक आय में अपनी वृद्धि दर्ज कर रही हैं । जिससे महिलाएं न सिर्फ आर्थिक रूप से सशक्त हो रही है, बल्कि देश की आर्थिक विकास में भी उनका योगदान बढ़ रहा है।

ग्रामीण पंचायत में बढ़ती हुई महिला भागीदारी–

ग्राम पंचायत में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाने के लिए 33ः आरक्षण का प्रावधान किया गया है जिससे महिलाओं को पंचायत द्वारा राजनीति में अपनी क्षमता का नेतृत्व करने का अवसर प्राप्त हुआ है विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि विकास योजनाओं के कारण ग्रामीण पंचायत में महिलाओं की निरंतर भागीदारी बढ़ी है जो न केवल महिला सशक्तिकरण का संकेत है, बल्कि ग्रामीण विकास और मजबूत लोकतंत्र के लिए अति आवश्यक है।

निष्कर्ष व सुझावः

प्रस्तुत शोध – पत्र के अध्ययनोंपरान्त निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सरकार द्वारा ग्रामीण महिलाओं के विकास हेतु अनेकों योजनाएं और कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं, जिससे महिलाएं सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक रूप से सशक्त हो सके। परिणामतरू ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाएं अपने अधिकार के प्रति जागरूक हुई है और उनकी स्थिति में एक सकारात्मक परिवर्तन भी हुआ है। लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में इन योजनाओं की पहुंच काफी सीमित मात्रा में है और इसका लाभ भी बहुत ही कम महिलाओं को प्राप्त हो रहा है। क्योंकि अभी भी ग्रामीण महिलाओं में योजनाओं के सम्बन्ध में जागरूकता का अभाव है, जिसके लिए विभिन्न उपायों की आवश्यकता है। इसमें सरकार जो भी प्रयास कर रही है उसमें कार्यरत लोग भी अपने

दायित्वों का पूर्ण निर्वहन नहीं कर रहे हैं और स्थानीय स्तर पर किसी प्रकार का कोई सेमिनार व कार्यशालाओं का आयोजन भी नहीं किया जा रहा है जो सरकार की बहुत बड़ी चूक है। इस प्रकार ग्रामीण महिलाओं में योजनाओं की प्रभाविकता बढ़ाने के लिए मीडिया, इंटरनेट, रेडियो, टेलीविजन और अन्य प्लेटफार्मों के माध्यम से लोगों को जागरूक करना होगा साथ ही साथ महिलाओं को स्वयं अपने अधिकार के प्रति एकत्र होकर आवाज उठाना होगा, जिसका महिलाओं पर दूरगामी प्रभाव पड़ सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

(1) मीना,जनक सिंह (2015), भारत में मानवाधिकार और महिलाएं, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर पृ. 42–43

(2) श्रीवास्तव, राकेश (2018), ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरणरू आगे की राह, वर्ष 64, मासिक अंक 3, जनवरी 2018,पृ.59

(3) शर्मा, वीरेंद्र प्रकाश,(2022), रिसर्च मेथडोलाजी, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

(4) शर्मा, योगेन्द्र (2018), महिला सशक्तीकरणरूदशा और दिशा,लोक भारती प्रकाशन

(5) डॉ राधिका गुप्ता (2020), वुमन रूरल डेवलपमेंटरू इश्यूज एंड स्ट्रेटजीज

(6) मिश्र, मीरा (2016), कुपोषण की रोकथामरू महिला स्वास्थ्य की भूमिका, वर्ष 60, अंक 2, फरवरी 2016

(7) सौरभ, समीरा (2018), सशक्त होती ग्रामीण महिलाएं, वर्ष 64, मासिक अंक 3 जनवरी (2018)

(8) मिश्रा, जेपी (2020), कृषि और ग्रामीण समृद्धि में महिलाओं की भूमिका, वर्ष 66, अंक 7,मई 2020

(9) डॉ अनिल सैनी,(2021), विकास योजनाएं व महिला प्रस्थितिरू एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, प्राची डिजिटल पब्लिकेशन,उधम सिंह नगर, उत्तराखंड

(10) पासी, संतोष जैन तथा जैन आकांक्षा,(2020), स्वस्थ्य एवं पोषित महिलाएं सशक्त राष्ट्र की आधारशिला, वर्ष 66, अंक 7, मई (2020)

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण महिला ओं का सशक्तिकरण एवं प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना

डॉ0 महेन्द्र कुमार,

असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, महाराज बलवंत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय
गंगापुर, वाराणसी

सारांश

एक महिला अपने आप में सम्पूर्ण होती है। महिलाओं में सृजन, पोषण और परिवार की ताकत निहित है। वैसे भी भारतीय संस्कृति में महिला को शक्ति के रूप में देखा जाता रहा है, परन्तु यह इसका एक पहलू है। दूसरा पहलू यह है कि भारत में महिलाओं की स्थिति बहुत चुनौतीपूर्ण रही है। विशेषकर ग्रामीण महिलाओं की। परिवार के विभिन्न निर्णयों में उनकी भूमिका तो दूर की बात, वे अपनी जिन्दगी के लिए भी आवाज नहीं उठा पाती है। अति प्राचीन काल से महिलाएँ पुरुषों के अधीन रही है। एक माँ, पत्नी और पुत्री के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन करने में उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता रहा है।

पिछले कुछ वर्षों से ग्रामीण महिलाओं के जीवन में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। नगरीय महिलाओं की भांति ग्रामीण महिलाएँ भी जब घर की चारदीवारी तक सीमित नहीं रह गयी है। महिलाएँ अब जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं।

सरकार ने भी ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए अनेक प्रयास किए है। इसके अन्तर्गत अनेक योजनाएँ लागू की गई हैं, जैसे– बेटी बचाओ, बेटी बढ़ाओ, मुद्रा योजना, स्कील इण्डिया, आयुष्मान योजना आदि जिसमें से प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना भी एक प्रमुख योजना है, जिसने ग्रामीण महिलाओं के उत्थान में सहायता की है। इसी को ध्यान में रखते हुए मैंने अपने शोध–पत्र से ग्रामीण महिला सशक्तिकरण में प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना के महत्व को बताने का प्रयास किया है।

मुख्य शब्द (Keywords)– ग्रामीण महिला, महिला सशक्तिकरण, सरकार, प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना।

प्रस्तावना

''यदि आपको विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास हो जाने पर समाज का विकास स्वतः हो जाएगा।'' **–पं0 जवाहर लाल नेहरू**

प्राचीन काल महिलाओं का स्वर्णिम युग रहा है। पुरुष प्रधान व्यवस्था के बावजूद महिलाओं का समाज में सम्मान था, उन्हें तमाम तरह की स्वतन्त्रताएँ थी। महिलाएं अपने ज्ञान प्रखर पाण्डित्य और प्रतिभा से समाज को यह बता सकीं कि वे पुरुषों से किसी प्रकार कम नहीं थी, परन्तु मध्यकाल में महिलाओं की स्थिति गिर गयी। उनकी प्रगति अवरूद्ध हो गयी। ब्रिटिश काल में महिलाओं में सामाजिक चेतना आयी। कई कुप्रथाओं

का कानून बनाकर उन्मूलन किया गया परन्तु फिर भी अधिक प्रगति नहीं हुई, क्योंकि ब्रिटिश सरकार ने इस ओर ध्यान नहीं दिया। साथ ही महिला शिक्षण भी नगण्य रही।

सशक्तिकरण एक व्यापक शब्द है, जिसमें अधिकारों एवं शक्तियों का समावेश है। यह एक ऐसी मानसिक अवस्था है जो कुछ विशेष आन्तरिक, शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि परिस्थितियों पर निर्भर करती है। जिसके लिये समाज में आवश्यक कानूनों, सुरक्षात्मक प्रावधानों और उनके भली भांति क्रियान्वयन करने के लिए सक्षम प्रशासनिक व्यवस्था का होना आवश्यक है।

महिला सशक्तिकरण का अभिप्राय महिलाओं को पुरुषों के समान वैधानिक, राजनीतिक, मानसिक, सामाजिक और आर्थिक सभी क्षेत्रों में स्वतन्त्र रूप से भाग लेने के अधिकार से है। महिला में इस तरह की क्षमता विकसित करना जिसमें कि वे अपनी इच्छानुसार जीवन–निर्वाह कर सकें एवं उनके अन्दर आत्म विश्वास और स्वाभिमान जागृत हो सके।

इस प्रकार महिला सशक्तिकरण एक ऐसी सामाजिक क्रिया है जिसमें महिलाओं के सर्वसम्पन्न और विकसित होने के लिए सम्भावनाओं के द्वार खुले, नये विकल्प तैयार हों, भोजन, पानी, घर, शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधायें, शिशु पालन, प्राकृतिक संसाधन, बैंकिंग सुविधायें, कानूनी और प्रतिभाओं के विकास के पर्याप्त रचनात्मक अवसर प्राप्त हों। महिला सशक्तिकरण के अन्तर्गत सामान्य तौर पर निम्नांकित चार तत्वों को सम्मिलित किया जाता है–

1. संसद व विधान मण्डलों में महिलाओं की भागीदारी का अंश।
2. प्रशासन एवं प्रबन्धन में उनकी भागीदारी का प्रतिशत।
3. प्रोफेशनल एवं तकनीकि सेवाओं में उनका अनुपात।
4. महिलााओं की प्रति व्यक्ति आमदनी और उनकी तुलनात्मक आर्थिक स्थिति।

महिला सशक्तिकरण की माप के लिए यद्यपि उपरोक्त चार तत्वों के अतिरिक्त अन्य मुद्दों को भी शामिल किया जा सकता है, जैसे शैक्षिक स्थिति, स्वास्थ्य सम्बन्धी स्थिति, देशाटन की सुविधा, निर्णय का अधिकार सत्ता के साथ–साथ सम्पत्ति में पुरुषों के बराबर उनका हक आदि।

किसी भी सदस्य एवं विकसित समाज के निर्माण में स्त्री एवं पुरुष दोनों की सहभागिता आवश्यक है। परन्तु यह एक विडम्बना ही है कि समाज में उन्हें बराबरी का दर्जा शायद ही कभी प्राप्त हुआ हो। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सरकार द्वारा महिलाओं की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए अनेक योजनायें बनायी गयी। स्कूल कालेजों में पढ़ाई के साथ–साथ उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी, तभी आज देश में सामाजिक आर्थिक और व्यवसायिक क्षेत्रों में महिलायें अपने गुण और शिक्षा के दम पर बड़ी संख्या में डाक्टर, प्रोफेसर, प्रशासनिक अधिकारी, वकील और इंजीनियर तक नजर आ रही हैं। कला साहित्य एवं राजनैतिक क्षेत्र में काफी मात्रा महिलाओं ने अपनी पहुँच बनायी है। लेकिन साथ ही यह भी सच है कि सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों के साथ अपनी उपस्थिति दर्ज करानी चाहिए थी। उतनी सम्भव नहीं हो पायी है।

घर परिवार के बाहर काम करने वाली महिलाओं का शोषण बराबर जारी है। वे पुरुषों के समान कार्य करती हैं। लेकिन उन्हें पुरुषों के बराबर मजदूरी नहीं दी जाती। न्यूनतम मजदूरी और समान कार्य के लिए समान मजदूरी का कानून है लेकिन इसके बावजूद श्रमिक महिलाओं का शोषण नहीं रुका है। निजी शिक्षण सस्थाओं में भी महिलायें शोषण का शिकार है। घर परिवार के भीतर महिला उत्पीड़न का भी एक प्रमुख कारण दहेज लोलुपता है। घर आयी बहू को नौकरानी समझने की मनोवृत्ति, बहू द्वारा लड़के के बजाय लड़की का जन्म दिया जाना, उसका गर्भ धारण करने योग्य न होना, अशिक्षा या असुन्दरता, पत्नी के चरित्र का अकारण संदेह आदि महिला उत्पीड़न के अंग है।

एमनेस्टी इंटरनेशनल द्वारा हाल ही में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार भारत में 40 प्रतिशत विवाहित महिलाओं को महज इस कारण लात घूसे मारे जाते हैं या उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है कि उनका भोजन या सफाई पसन्द नहीं आयी। खुद महिलाओं की सोच में इन बातों का असर इतना ज्यादा है कि कई बार वे हिंसा का समर्थन करने लगती हैं क्योंकि अभी भी अधिकांश महिलाओं का मानना है कि यह सब तो चलता है लेकिन इस तरह की यातना सहने का असर उनके मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य पर पड़ता है। 'वीमेन्स' संस्था की ओर आयोजित एक कान्फ्रेंश में डाक्टरों ने बताया कि देश भर में मनोरोग वार्डों में 60 प्रतिशत महिलायें पागल नहीं घरेलू हिंसा की शिकार हैं। सरकार ने महिलाओं का यौन उत्पीड़न रोकने संबन्धी कानून बनाने के अलावा, महिला सशक्तिकरण आन्दोलन कैसे सुदृढ़ करने के लिए अपने संवैधनिक सुरक्षा के साथ–साथ एक कारगर संस्थागत ढांचा भी खड़ा किया है। महिलाओं एवं बच्चों के विकास को आवश्यक गति प्रदान करने के लिए 1915 में मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अन्तर्गत अलग से एक विभाग महिला और बाल विकास विभाग का गठन किया गया। यह विभाग नोडल संगठन के रूप में अपनी भूमिका के अन्तर्गत योजनायें, नीतियां और कार्यक्रम तैयार कर रहे सरकारी संगठनों के प्रयासों में समन्वय स्थापित करता है।

1992 में स्थापित राष्ट्रीय महिला आयोग को आवंटित कार्य एवं जिम्मेवारियाँ काफी व्यापक और विविध है। महिलाओं के अधिकारों की रक्षा से सम्बन्धित तमाम पहलुओं और सशक्तिकरण प्रक्रिया को बढ़ावा देने के सभी प्रयासों को इस दायरे में लाया गया है। आयोग कानूनों की समीक्षा करता है, महिला उत्पीड़न के अधिकारों के उल्लंघन और कार्य स्थल का यौन शोषण जैसी व्यक्तिगत शिकायतों की जांच करता है तथा महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण के लिये सक्षम अधिकारों को उपयुक्त कदम उठाने के बारे में सुझाव देता है। आयोग पारिवारिक महिला अदालतें आयेजित करता है। जिसमें परिवार के झगड़ों में उचित परामर्श दिया जाता है।

सेवाओं को दायरे में लाने, लघु ऋण उद्योगों को बढ़ावा देने पर बल देते हुए 'स्वयं सहायता समूहों' के माध्यम से महिलाओं के विकास एवं सशक्तिकरण हेतु 'स्वयं सिद्ध' नाम से समन्वित परियोजना चलायी जा रही है। डेयरी, कृषि, दुकानदारी, फेरी तथा हस्तशिल्प जैसी आय उत्पादक गतिविधियाँ शुरु करने के लिए गरीब महिलाओं को ऋण सहायता तथा लघु–वित्त सहायता उपलब्ध कराने के उद्देश्य से 1993 में एक राष्ट्रीय महिला कोष की भी स्थापना की गई थी। एक ग्रामीण विकास एवं सशक्तिकरण एवं परियोजना भी 1998 में शुरु की गई थी जिसे बाद में बदलकर 'स्वःशक्ति परियोजना' नाम कर दिया गया। इस परियोजना को कुछ ही राज्यों में लागू किया गया है तथा इसका उद्देश्य कड़ी मेहनत और समय को कम करने वाले साधनों, स्वास्थ्य तथा साक्षरता का उपयोग करके विश्वास में वृद्धि करने और आय उत्पादक गतिविधियों हेतु दक्षतायें प्रदान करके बेहतर जीवन स्तर के संसाधनों तक महिलाओं की पहुंच बढ़ाना है।

पिछले एक शताब्दी से लिंग–भेद का अनुपात घटा है जहाँ वर्ष 2001 में प्रति एक हजार पुरुषों पर 933 महिलायें थी वहीं 2011 की जनगणना में यह संख्या 940 हुई है। उल्लेखनीय है कि देश के महानगरों में स्थिति और विस्फोटक है। दिल्ली में प्रति हजार पुरुषों पर 866 महिलायें, पंजाब में 893 महिलायें, हरियाणा में 877 महिलायें, गुजरात में 918 महिलायें और बिहार राज्य में 916 थी। सभी संख्यायें राष्ट्रीय औसत से कम हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1 अरब 21 करोड़ 5 लाख 69 हजार 57 है। इनमें महिलाओं की जनसंख्या 58 करोड़ 74 लाख 47 हजार 730 है। और पुरुषों की जनसंख्या 62 करोड़ 74 लाख 21 हजार 843 है।

सम्पूर्ण भारत में महिलाओं की साक्षरता दर 65.5 प्रतिशत है। केरल में यह सर्वाधिक 92.2 प्रतिशत है तथा बिहार में न्यूनतम 73.4 प्रतिशत है।

महिला सशक्तिकरण तभी सम्भव है, जब महिलायें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होकर, वास्तविक रूप से निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त कर सकेंगी। महिलाओं में क्षमताओं और ऊर्जा की कोई कमी नहीं है, आवश्यकता सिर्फ यह है कि उन्हें सही अवसर मिले। जैसे–जैसे महिलायें शिक्षित होंगी, वे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होती जाएंगी, शिक्षा उनके आत्मविश्वास व कार्य कुशलता को बढ़ायेगी, साथ ही देश के नीतिगत फैसलों में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकेंगी।

महिला सशक्तिकरण का एक प्रमुख तत्व ग्रामीण महिला सशक्तिकरण है। ग्रामीण महिलाएँ हमेशा से भारतीय समाज में एक उपेक्षित वर्ग रही हैं। आज भी लगभग 86.1 प्रतिशत ग्रामीण महिलाएं कृषि कार्यों में संलग्न है। ग्रामीण भारत में चुनिन्दा महिलाओं का भूमि पर स्वामित्व होता है। अधिसंख्य कृषि श्रमिक महिलाएँ है और उन्हें मुख्य रूप से शारीरिक श्रम के कार्य सौंपे जाते हैं महिलाओं में कृषि में पारंगत बनाने के लिए कोई कौशल विकास कार्यक्रम शायद ही चलाया जा रहा है।

भारत में ग्रामीण महिला सशक्तिकरण में सबसे बड़ी बाधा उनका अशिक्षित होना है। भारत की 2011 की जनगणना के अनुसार कुल भारतीय महिलाओं में 43.54 प्रतिशत महिलाएं निरक्षर हैं। महिला–पुरुष साक्षरता का अन्तर आज भी 16.68 प्रतिशत है। ग्रामीण महिला सशक्तिकरण में महिला स्वास्थ्य सेवाओं की कमी भी एक बाधा रही है। ग्रामीण भारत में हर तीसरी महिला कुपोषित है और हर दूसरी महिला एनेमिया की शिकार हैं।

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा था कि, ''जब तक महिलाओं की स्थिति नहीं सुधरेगी, तब तक इस दुनियां के कल्याण की कोई सम्भावना नहीं है।'' यह कथन आज वर्तमान में भी सत्य प्रतीत हो रही है क्योंकि अवसर मिलने पर आज महिलायें जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सराहनीय कार्य कर रही हैं। और ग्रामीण महिलाएँ भी अब पीछे नहीं है। इस परिवर्तन को लाने में हाल के वर्षों में सरकार ने भी अहम भूमिका निभाई है। सरकार इस सन्दर्भ में अनेक महत्वपूर्ण कदम उठा रही है जिनमें **''प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना''** एक प्रमुख योजना रही है। जिसने ग्रामीण महिला सशक्तिकरण में अहम भूमिका निभाई है।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना

इस योजना को 1 मई 2016 को उत्तर प्रदेश के जनपद बलिया, स्वतन्त्रता संग्राम के प्रणेता मंगल पाण्डे की भूमि से शुरू किया गया। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय द्वारा ऐसे ग्रामीण और वंचित परिवारों, जोकि ईंधन के रूप में जलावन लकड़ी, कोयला, गोबर के उपले आदि जैसे पारम्परिक खाना पकाने के ईंधन का उपयोग कर रहे थे के लिए एलपीजी जैसे स्वच्छ खाना पकाने के ईंधन को उपलब्ध कराने के उद्देश्य से एक प्रमुख योजना के रूप में आरम्भ किया गया। पारम्परिक खाना पकाने के ईंधन के उपयोग से ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य के साथ–साथ पर्यावरण पर भी हानिकारक प्रभाव पड़ता है। सन् 2016 में योजना के पहले चरण में लगभग 5 करोड़ परिवारों को गैस कनेक्शन प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था। अप्रैल 2018 में योजना का दायरा बढ़ाकर 8 करोड़ कर दिया गया था और 30 जुलाई 2021 तक इस योजना के माध्यम से 79995022 लाभार्थियों को लाभ पहुँचा है। इस योजना के अन्तर्गत सरकार सभी बी0पी0एल0 तथा ए0पी0एल0 राशन कार्ड धारक महिलाओं को एल0पी0जी0 कनेक्शन के लिए रू0 1600/– की आर्थिक सहायता भी प्रदान कर रही है। इसी के साथ इस योजना के अन्तर्गत चूल्हा खरीदने के लिए तथा पहली बार एल0पी0जी0 सिलेंडर भरने में आने वाले खर्च को चुकाने के लिए ई0एम0आई0 की सुविधा भी प्रदान की जाती है।

पिछले 4 वर्षों में इस योजना के अन्तर्गत लगभग 8 करोड़ एल0पी0जी0 कनेक्शन प्रदान किए गए है। अब देश में एल0पी0जी0 उपभोक्ताओं की संख्या देश में 29 करोड़ हो गई है।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना 2.0

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने 10 अगस्त 2021 को महोबा, उत्तर प्रदेश में वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से एल0पी0जी0 कनेक्शन सौंपकर उज्ज्वला 2.0 का शुभारम्भ किया। इस योजना के अन्तर्गत 2021–22 के बजट में एक करोड़ और लोगों को एल0पी0जी0 गैस कनेक्शन देने की घोषणा की गई है। प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना 2022 का लाभ 18 वर्ष से अधिक आयु की महिलाओं को उपलब्ध है।

प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना का राज्यवार कनेक्शन वितरण

क्रम सं0	राज्य का नाम	कुल एल0पी0जी0 कनेक्शन वितरित
1.	अण्डमान एवं निकोबार	13103
2.	आन्ध्र प्रदेश	390998
3.	अरुणांचल प्रदेश	44668
4.	असम	3493730
5.	बिहार	8571668
6.	चण्डीगढ़	88
7.	छत्तीसगढ़	2998629
8.	दादर एवं नगर हवेली	14438
9.	दमन व द्वीप	427
10.	दिल्ली	77051
11.	गोवा	1082
12.	गुजरात	2907682
13.	हरियाणा	730702
14.	हिमाचल प्रदेश	136084
15.	जम्मू एवं कश्मीर	1203246
16.	झारखण्ड	329035
17.	कर्नाटक	3151238
18.	केरल	256303
19.	लक्ष्यद्वीप	292
20.	मध्य प्रदेश	7179224
21.	महाराष्ट्र	4437624
22.	मणिपुर	156195
23.	मेघालय	150664
24.	मिजोरम	28123
25.	नागालैण्ड	55143
26.	उड़ीसा	4750478
27.	उत्तर प्रदेश	14743862

इस योजना का भारतीय ग्रामीण क्षेत्रों में गहरा प्रभाव पड़ा है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में एल0पी0जी0 कनेक्शन बहुत कम परिवारों में देखा जाता था, शहरी क्षेत्रों में भी मध्यम परिवारों में ही इसका प्रयोग देखा जाता था। इस योजना के बाद गरीबी रेखा के नीचे के लोगों को एल0पी0जी0 कनेक्शन सुगमता से प्राप्त हो रहे हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में लगभग 5 लाख मृत्यु सिर्फ और सिर्फ अशुद्ध ईंधन के

प्रयोग से उत्पन्न होने वाले रोगें से हुई है। कई कम उम्र के लोगों की मृत्यु भी इसमें शामिल है, जिसके अन्तर्गत हृदय संबंधित विकार, स्ट्रोक आदि बड़े कारण है। इस योजना से इन समस्याओं का निवारण हो रहा है।

इस योजना का ही प्रभाव है कि–

1. घर में धुयें के प्रकोप से मुक्ति मिली है इससे ग्रामीण परिवारों की महिलाओं, बच्चों सभी के स्वास्थ्य में सकारात्मक परिवर्तन उत्पन्न हुए।
2. लकड़ी बीनने, जलाउ लकड़ी लाने की कठिनाइयों से मुक्ति मिली। लकड़ी बीनना ग्रामीण महिलाओं के लिए एक कठिन कार्य रहा है। जिसमें उनका बहुत समय लगता था और शारीरिक ऊर्जा भी व्यय होती थी जिससे महिलाओं को मुक्ति मिली और वे अपने समय को परिवार में दे पा रही हैं।
3. इस योजना से बहुत बड़ी संख्या में परिवारों ने जंगल जाना पूर्णतः बन्द कर दिया। इसमें निश्चित रूप से महिलाओं को अपने गांव/परिवारों में सुरक्षित परिवेश मिला है और इस योजना से महिला सशक्तिकरण के प्रयासों को बल मिला है।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में परम्परागत, ईंधन लकड़ी/कंडे ही है। इन दोनों के उपयोग से घर का परिवेश निश्चित रूप से प्रदूषित होता है, जो परिवार के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। इस योजना से घर का परिवेश साफ सुथरा बना, खांसी, जुकाम, दमा आदि जो धुएं के कारण होते हैं उनसे राहत मिली है। यह बहुत बड़ा सकारात्मक परिवर्तन है। इससे व्यापक पर्यावरण व स्वास्थ्य सुधार होने के साथ–साथ ग्रामीण परिवारों के स्वास्थ्य पर होने वाले अनावश्यक खर्चे में भी कमी आयी है।
5. इस योजना के लाभार्थी महिलाओं को खाना बनाने का कार्य अब पहले से आसान हो गया है और समय भी कम लगता है। ग्रामीण परिवारों की महिलाऐं बचे समय का अन्य जिम्मदारियों में लगा रही हैं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना ने महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है उज्ज्वला योजना से महिलाओं को धुंआ रहित वातावरण में भोजन पकाने की सुविधा मिली है। इससे उनका स्वास्थ्य बेहतर हुआ है और ईधन संग्रह करने में लगने वाले समय की बचत हुई है। इस समय का उपयोग महिलाएं अपनी आय बढ़ाने और अन्य सामाजिक कार्यों के लिए कर रही हैं।

निष्कर्ष

ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए यह आवश्यक है कि ग्रामीण महिलाओं को घर, परिवार, समाज व राष्ट्र में अपनी नैसर्गिक क्षमता, स्वतंत्रता व मुक्ति का बोध कराकर इतना सशक्त व सक्षम बनाया जाय कि वे अपने जीवन में व्यक्तिगत एवं सामाजिक निर्णय लेने की हकदार हो जाएं।

भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी का कथन है कि हमारी बेटियाँ घर और रसोई से बाहर निकलकर राष्ट्र निर्माण में व्यापक योगदान तभी दे पाएंगी, जब पहले घर और रसोई से जुड़ी समस्याएं हल होंगी इसीलिए बहनों, बेटियों के स्वास्थ्य, सुविधा और सशक्तिकरण को उज्ज्वला योजना ने बहुत बड़ा योगदान दिया है। लेकिन भारत में आज भी महिलाएँ खासतौर पर ग्रामीण महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उत्थान की मुख्यधारा से जुड़ने में रुकावट महसूस करती हैं।

विभिन्न बाधाओं को पार करती हुई ग्रामीण महिलाएँ सरकारी एवं गैर–सरकारी प्रयत्नों के बलबूते सशक्तिकरण की दिशा की ओर निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। सशक्त ग्रामीण महिलाएँ ही समाज व राष्ट्र को सशक्त कर सकती है। और इसमें प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना की भूमिका अति महत्वपूर्ण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण, 'योजना', अक्टूबर, 2008।
2. योजना, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, अक्टूबर 2018, पृ0 42–45।
3. कुरूक्षेत्र, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, जनवरी 2018, पृ0 12–13।
4. आर्थिक समीक्षा, 2014–15, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृ0 142–143।
5. श्रीवास्तव, बीना (2017), प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना–प्रभाव आंकलन, अटल विहारी वाजपेयी सुशासन एवं नीति विश्लेषण संस्थान, भोपाल, http://bhabha-coe.mapit.gov.in।

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

वैदिक एवं बौद्ध शिक्षा शिक्षा पद्धतियों के समग्र शिक्षा-दर्शन का राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक विश्लेषण

अनामिका सिंह
शोध छात्रा ,शिक्षाशास्त्र संकाय
डॉ राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या
डॉ नीलम सिंह
असि. प्रोफेसर ,शिक्षाशास्त्र संकाय
डॉ राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या

सार (Abstract)

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य वैदिक एवं बौद्ध शिक्षा पद्धतियों के समग्र शिक्षा-दर्शन का तुलनात्मक विश्लेषण करना तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के परिप्रेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता और अंतर्संबंध को स्पष्ट करना है। वैदिक शिक्षा में परा–अपरा विद्या, पुरुषार्थ-चतुष्टय, गुरुकुल-व्यवस्था और ब्रह्मचर्याश्रम के माध्यम से आध्यात्मिक, नैतिक, बौद्धिक एवं व्यावहारिक जीवन के संतुलित विकास पर बल दिया गया है। बौद्ध शिक्षा पद्धति चार आर्यसत्य, अष्टांगिक मार्ग, धम्म–विनय, करुणा और तर्कशीलता के आधार पर समावेशी, संवादात्मक एवं अनुभवाधारित शिक्षा मॉडल प्रस्तुत करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 समग्र, बहुविषयक, मूल्य-आधारित, कौशलोन्मुख तथा भारतीय ज्ञान-परंपरा से संपृक्त शिक्षा की परिकल्पना करती है। तुलनात्मक अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनेक प्रावधान वैदिक–बौद्ध शिक्षा के समग्र शिक्षा-दर्शन से प्रेरित हैं, किंतु उनका क्रियान्वयन वित्तीय, संरचनात्मक व सामाजिक चुनौतियों के अधीन है।

भारतीय सभ्यता में शिक्षा का अर्थ केवल सूचनाओं का संचय नहीं रहा, बल्कि जीवन के समग्र विकास, आत्मानुशासन, नैतिक उन्नयन, सामाजिक उत्तरदायित्व और आध्यात्मिक परिपक्वता की प्रक्रिया रहा है। प्राचीन भारतीय परंपरा में वैदिक और बौद्ध शिक्षा-दर्शन इस व्यापक दृष्टि के दो अत्यंत प्रभावशाली रूप हैं, जिनमें शिक्षा को मानव-निर्माण की केंद्रीय शक्ति माना गया। वैदिक परंपरा में शिक्षा का संबंध वेद, उपनिषद्, स्मृति एवं आचार-परंपरा से जुड़कर मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इन चारों पुरुषार्थों के संतुलित विकास

की ओर ले जाता है, जबकि बौद्ध परंपरा में शिक्षा का लक्ष्य दुःख की निवृत्ति, प्रज्ञा का विकास, करुणा का विस्तार और विवेकपूर्ण जीवन-निर्माण रहा। आधुनिक संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी शिक्षा को केवल रोजगार-उन्मुख या परीक्षा-केंद्रित गतिविधि मानने के बजाय समग्र, बहुविषयक, अनुभवाधारित और भारतीय ज्ञान-परंपरा से संबद्ध बनाने का प्रयास करती है. इस दृष्टि से देखा जाए तो प्राचीन भारतीय शिक्षा-दर्शन और समकालीन नीति-दृष्टि के बीच एक गहरा वैचारिक सेतु निर्मित होता दिखाई देता है, जिसके माध्यम से भारतीय शिक्षा को उसकी आत्मा और आधुनिकता दोनों के साथ जोड़ा जा सकता है।

वैदिक शिक्षा-पद्धति की मूल प्रेरणा उस विश्वदृष्टि से आती है जिसमें ज्ञान को जीवन के अंतिम सत्य और ब्रह्म-साक्षात्कार की दिशा में एक साधन माना गया। मुण्डक उपनिषद् में परा और अपरा विद्या का भेद शिक्षा के दो स्तरों को स्पष्ट करता है। अपरा विद्या में लौकिक ज्ञान, कर्मकाण्ड, शास्त्र, भाषा, गणना, शिल्प, ज्योतिष और व्यावहारिक उपयोगिता से जुड़ा ज्ञान आता है, जबकि परा विद्या आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान और तात्त्विक अनुभूति की ओर ले जाती है. इस विभाजन से यह स्पष्ट होता है कि वैदिक शिक्षा केवल बाह्य कौशल या पेशागत दक्षता तक सीमित नहीं थी; वह व्यक्ति को आंतरिक रूप से परिष्कृत करने, उसे जीवन के उच्चतर अर्थों से जोड़ने और उसे अपने अस्तित्व की गहराई में ले जाने का माध्यम भी थी। इसी कारण वैदिक शिक्षा का लक्ष्य केवल विद्वत्ता नहीं, बल्कि चरित्र, अनुशासन, संयम और आध्यात्मिक जागृति था। यह दृष्टिकोण शिक्षा को व्यापक मानव-निर्माण की प्रक्रिया बनाता है, जहाँ ज्ञान का मूल्य उसकी नैतिक और अस्तित्वगत उपयोगिता से आँका जाता है, न कि केवल उसकी सूचना-सामग्री से।

वैदिक शिक्षा में पुरुषार्थ-चतुष्टय का सिद्धांत अत्यंत केंद्रीय है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—ये चारों जीवन के चार आयाम हैं, और शिक्षा का कार्य इन सबके बीच संतुलन स्थापित करना है। धर्म का अर्थ केवल धार्मिक कर्मकाण्ड नहीं, बल्कि नैतिकता, कर्तव्यबोध, सामाजिक मर्यादा और सत्यनिष्ठा है। अर्थ आजीविका, समृद्धि और जीवन-निर्वाह की क्षमता से जुड़ा है। काम मानवीय इच्छाओं, भावनाओं, सौंदर्यबोध और जीवन की सहज प्रवृत्तियों के संतुलित विनियमन का संकेत देता है। मोक्ष आत्मिक मुक्ति और बंधन-मुक्त जीवन की सर्वोच्च अवस्था है। इस तरह वैदिक शिक्षा व्यक्ति को ऐसा समग्र मानव बनाने की चेष्टा करती है जो न केवल बौद्धिक रूप से सक्षम हो, बल्कि नैतिक रूप से उत्तरदायी, सामाजिक रूप से सजग और आध्यात्मिक रूप से उन्नत भी हो। यही कारण है कि वैदिक परंपरा में शिक्षा को जीवन से अलग किसी संकीर्ण संस्थागत प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि जीवन की पूर्णता का साधन माना गया। यह विचार आज भी आधुनिक शिक्षा की कई सीमाओं का उत्तर प्रस्तुत करता है, क्योंकि वर्तमान शिक्षा-व्यवस्था अक्सर रोजगार और परीक्षा-केन्द्रित होकर मानवीय, नैतिक और आध्यात्मिक आयामों को गौण कर देती है।

वैदिक शिक्षा का व्यावहारिक संस्थागत रूप गुरुकुल प्रणाली में दिखाई देता है। गुरुकुल केवल विद्यालय नहीं थे, बल्कि जीवन-संस्कारों के केंद्र थे, जहाँ विद्यार्थी गुरु के सान्निध्य में रहकर ज्ञान, अनुशासन, सेवा, श्रम, आत्मसंयम और सामाजिकता सीखता था। यहाँ शिक्षा और जीवन के बीच कोई विभाजन नहीं था। अध्ययन, सेवा, दैनिक कार्य, सामूहिक जीवन, प्रकृति-संपर्क और गुरु-शिष्य संवाद—ये सब मिलकर एक ऐसे शैक्षिक वातावरण का निर्माण करते थे, जिसमें सीखना केवल पाठ्यवस्तु ग्रहण करना नहीं, बल्कि जीवन जीने की कला सीखना था। गुरुकुल में छात्र को दैनिक जीवन के छोटे-छोटे कार्य भी करना पड़ते थे, जिससे उसमें स्वावलंबन, विनम्रता और श्रम के प्रति सम्मान विकसित होता था। यह शिक्षा-पद्धति पूर्णतः छात्र-केंद्रित थी, क्योंकि गुरु प्रत्येक विद्यार्थी की क्षमता, रुचि और प्रगति के अनुसार मार्गदर्शन करता था। इस व्यक्तिगत और संबंधपरक दृष्टि में शिक्षा का मानवीय स्वरूप अत्यंत स्पष्ट हो जाता है. आज की समग्र शिक्षा-चर्चाओं में जिस विद्यार्थी केंद्रित और व्यावहारिक शिक्षण की बात की जाती है, उसका बीज इसी परंपरा में दिखाई देता है

वैदिक शिक्षा का पाठ्यक्रम भी अत्यंत व्यापक और बहुविषयक था। वेद, वेदांग, व्याकरण, छंद, ज्योतिष, गणित, दर्शन, नीति, आयुर्वेद, युद्धकला, संगीत, शिल्प और खगोल जैसे विषय इसमें सम्मिलित थे। इससे स्पष्ट है कि प्राचीन शिक्षा में विषयों की कठोर सीमाएँ नहीं थीं। ज्ञान को खंडित इकाइयों में बाँटने के बजाय उसे जीवन और जगत की समग्र समझ के रूप में ग्रहण किया जाता था। यह बहुविषयक दृष्टि आधुनिक अंतर्विषयक सोच से बहुत निकट है। शिक्षा का उद्देश्य केवल स्मरण या पुनरुत्पादन नहीं था, बल्कि समझ, तर्क, निरीक्षण और विवेक का विकास करना था। इसी के अनुरूप श्रवण, मनन और निदिध्यासन जैसी शिक्षण-विधियाँ अपनाई जाती थीं। पहले गुरु से

ज्ञान सुना जाता, फिर उस पर मनन किया जाता, और अंततः गहन चिंतन व अभ्यास के माध्यम से उसे आत्मसात किया जाता। प्रश्नोत्तर, संवाद, दृष्टांत, अनुकरण और अनुभव-आधारित अधिगम भी वैदिक शिक्षा के अंग थे। इस प्रकार वैदिक परंपरा में शिक्षा का रूप सक्रिय, सहभागितापूर्ण और जीवनोपयोगी था, न कि निष्क्रिय और एकांगी। इस दृष्टि से वैदिक शिक्षा आज के रटन्त-आधारित शैक्षिक ढाँचे के लिए एक वैकल्पिक और प्रेरक मॉडल प्रस्तुत करती है।

वैदिक शिक्षा में मूल्य-शिक्षा का स्थान सर्वोपरि था। सत्य, अहिंसा, संयम, सेवा, विनय, कर्तव्यबोध और आत्मानुशासन जैसे मूल्यों को शिक्षा का आवश्यक परिणाम माना गया। विद्यार्थी से अपेक्षा की जाती थी कि वह केवल ज्ञानवान ही नहीं, बल्कि आचरणशील भी हो। ज्ञान और आचरण का यह संयोग भारतीय शैक्षिक दर्शन की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता है। शिक्षा का उद्देश्य चरित्र-निर्माण था, न कि केवल सूचना-संग्रह। इसीलिए गुरु को केवल शिक्षक नहीं, बल्कि मार्गदर्शक, नैतिक आदर्श और जीवन-प्रेरक के रूप में देखा जाता था। आधुनिक शिक्षा में जब नैतिक संकट, प्रतिस्पर्धा की अति, मूल्य-क्षरण और व्यक्तिवाद की समस्याएँ सामने आती हैं, तब वैदिक शिक्षा का यह पक्ष विशेष रूप से प्रासंगिक हो जाता है। यह शिक्षा बताती है कि ज्ञान तब तक पूर्ण नहीं है जब तक वह व्यवहार, संवेदना और सामाजिक उत्तरदायित्व में रूपान्तरित न हो।

बौद्ध शिक्षा-पद्धति वैदिक परंपरा से कुछ भिन्न होते हुए भी समान रूप से समग्र और मानवीय है। इसका दार्शनिक आधार चार आर्यसत्य हैं—दुःख, दुःख का कारण, दुःख का निरोध और निरोध का मार्ग। यह संरचना एक वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है, क्योंकि इसमें समस्या की पहचान, कारण-विश्लेषण, समाधान और समाधान तक पहुँचने के मार्ग—सभी चारों चरण क्रमबद्ध रूप से बताए गए हैं। शिक्षा के संदर्भ में यह दृष्टि अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह विद्यार्थी को प्रश्न पूछने, कारण खोजने, अनुभव के आधार पर निष्कर्ष निकालने और आत्मपरिवर्तन की दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। बौद्ध शिक्षा में अंधश्रद्धा की बजाय विवेक, परंपरा-स्वीकार की बजाय परीक्षण, और जड़ता की बजाय जागरूकता को महत्व दिया गया। इसीलिए बौद्ध शिक्षण पद्धति को तर्कसंगत, संवादात्मक और आत्मानुभव-प्रधान कहा जा सकता है। यह शिक्षा व्यक्ति को केवल जानकार नहीं, बल्कि सजग और करुणाशील बनाना चाहती थी।

अष्टांगिक मार्ग बौद्ध शिक्षा का व्यावहारिक और नैतिक आयाम प्रस्तुत करता है। सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्प, सम्यक वचन, सम्यक कर्म, सम्यक आजीविका, सम्यक प्रयास, सम्यक स्मृति और सम्यक समाधि—ये आठ अंग शिक्षा, आचरण और आत्मसंयम के विभिन्न पक्षों को समेटते हैं। सम्यक दृष्टि बौद्धिक स्पष्टता देती है, सम्यक संकल्प उद्देश्य की शुद्धता सिखाता है, सम्यक वचन संवाद की मर्यादा बताता है, सम्यक कर्म नैतिक आचरण का मार्ग है, सम्यक आजीविका जीवन-निर्वाह की शुद्ध पद्धति है, सम्यक प्रयास आत्मविकास की सतत प्रक्रिया को दर्शाता है, सम्यक स्मृति सजगता और आत्मचेतना का साधन है, तथा सम्यक समाधि मानसिक एकाग्रता और अंतर्दृष्टि का रूप है। इस प्रकार बौद्ध शिक्षा व्यक्ति के बौद्धिक, नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास का समन्वित रूप प्रस्तुत करती है। यह पद्धति शिक्षा को आत्मशुद्धि और सामाजिक करुणा से जोड़ती है, जिससे शिक्षा का दायरा व्यक्ति से समाज तक विस्तृत हो जाता है।

बौद्ध शिक्षा की संस्थागत संरचना भी अत्यंत विकसित थी। संघ, विहार और महाविहार बौद्ध शिक्षा के प्रमुख केंद्र थे, जिनमें नालंदा और विक्रमशिला जैसे विश्वविद्यालयों ने वैश्विक प्रतिष्ठा प्राप्त की। इन संस्थानों में दर्शन, तर्कशास्त्र, व्याकरण, चिकित्सा, गणित, खगोल, कला और धर्मशास्त्र का अध्ययन होता था। वहाँ भारत ही नहीं, एशिया के विभिन्न भागों से विद्यार्थी आते थे। इससे बौद्ध शिक्षा की अंतरराष्ट्रीयता, उदारता और बौद्धिक खुलेपन का पता चलता है। नालंदा जैसी संस्थाएँ केवल धार्मिक शिक्षा के केंद्र नहीं थीं, बल्कि समृद्ध ज्ञान-परिसरों के रूप में कार्य करती थीं, जहाँ विविध विचारधाराओं, भाषाओं और विषयों का संगम होता था. इस बहुविषयक और बहुसांस्कृतिक वातावरण ने बौद्ध शिक्षा को एक ऐसी वैश्विक परंपरा बनाया जो आज के अंतरराष्ट्रीय शिक्षा-परिदृश्य से असाधारण साम्य रखती है।

बौद्ध शिक्षा की शिक्षण-विधियाँ भी अत्यंत उन्नत थीं। प्रवचन, संवाद, शास्त्रार्थ, ध्यान, स्मरण और जातक कथाओं के माध्यम से शिक्षण किया जाता था। शास्त्रार्थ का उद्देश्य केवल वाद-विवाद नहीं, बल्कि सत्य की खोज था। यह पद्धति विद्यार्थियों को तर्क करने, प्रमाण प्रस्तुत करने, विरोधी दृष्टिकोणों को समझने और अपनी स्थिति को विवेकपूर्ण ढंग से स्थापित करने का अवसर देती थी। ध्यान और अभ्यास के माध्यम से आंतरिक अनुशासन, एकाग्रता और मानसिक स्थिरता विकसित होती थी। जातक कथाएँ नैतिक और सामाजिक मूल्यों को रोचक, स्मरणीय और अनुभवसुलभ रूप में प्रस्तुत करती थीं। इन शिक्षण-विधियों की विशेषता यह थी कि वे शिक्षार्थी को निष्क्रिय श्रोता नहीं रहने देती थीं, बल्कि उसे चिंतक, संवादकर्ता और आत्मविकासी बनाती थीं। यही कारण है कि बौद्ध शिक्षाशैली आज की शिक्षार्थी सहभागिता और चिंतनशील अधिगम की अवधारणाओं से गहरी संगति रखती है।

बौद्ध शिक्षा की सबसे बड़ी विशेषताओं में इसकी समावेशिता और सामाजिक खुलापन शामिल है। वैदिक परंपरा की तुलना में बौद्ध शिक्षा अधिक खुली, सर्वसुलभ और जाति-वर्ण-भेद से अपेक्षाकृत मुक्त मानी जाती है। बौद्ध संघ में प्रवेश और शिक्षा का अधिकार व्यापक था, जिससे समाज के विविध वर्गों को ज्ञान तक पहुँच मिली। करुणा, समानता, अहिंसा और लोककल्याण बौद्ध शिक्षा के मूल मूल्य थे। इस परंपरा ने ज्ञान को विशेषाधिकार न मानकर साझा मानव-संपदा के रूप में देखा। यह दृष्टि आधुनिक लोकतांत्रिक और समावेशी शिक्षा के लिए अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि आज भी शिक्षा तक समान पहुँच, सामाजिक न्याय और अवसर-समता शिक्षा-नीति के केंद्रीय प्रश्न बने हुए हैं. बौद्ध शिक्षा का यह रूप हमें बताता है कि ज्ञान का मूल्य तभी सार्थक है जब वह सबके लिए उपलब्ध हो और सामाजिक भेदभाव को कम करने में सहायक हो।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसी व्यापक पृष्ठभूमि में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज़ के रूप में सामने आती है। यह नीति शिक्षा को केवल औपचारिक अधिगम की प्रक्रिया नहीं मानती, बल्कि उसे व्यक्ति के संपूर्ण विकास, सामाजिक जिम्मेदारी, व्यावहारिक दक्षता, नैतिक गठन और सांस्कृतिक चेतना से जोड़ती है। नीति में 5+3+3+4 की संरचना अपनाई गई है, जो बाल्यावस्था से किशोरावस्था तक शिक्षा को अधिक विकासोन्मुख और आयु-उपयुक्त बनाती है. प्रारंभिक अवस्था में खेल, गतिविधि, भाषा और संवेदी अनुभव पर बल है; आगे चलकर अवधारणात्मक समझ, तर्कशक्ति, बहुविषयकता और कौशल-विकास को स्थान दिया गया है। यह संरचना इस बात को स्वीकार करती है कि शिक्षा का स्वरूप विद्यार्थियों की आयु, मनोवैज्ञानिक अवस्था और सीखने की ज़रूरतों के अनुसार बदलना चाहिए। इस दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 प्राचीन भारतीय शिक्षा की उस सोच से मेल खाती है जिसमें शिक्षा को जीवन-चरणों के अनुरूप ढाला जाता था।

नीति का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष उसका समग्र और बहुविष्यक दृष्टिकोण है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 यह मानती है कि शिक्षा को विषयों की कठोर सीमाओं में बाँधना उचित नहीं है। इसके बजाय विद्यार्थियों को ऐसे अवसर मिलने चाहिए जिनसे वे कला, विज्ञान, मानविकी, प्रौद्योगिकी और व्यावसायिक शिक्षा के बीच संबंध स्थापित कर सकें. यह दृष्टि वैदिक और बौद्ध दोनों परंपराओं से गहराई से मेल खाती है, क्योंकि दोनों में ज्ञान को एकीकृत और जीवन-संबद्ध रूप में देखा गया था। नीति में अनुभवात्मक अधिगम, गतिविधि-आधारित अधिगम, संवाद आधारित शिक्षण, आलोचनात्मक सोच और रचनात्मक समस्या समाधान पर भी बल दिया गया है। यह इस बात का संकेत है कि आधुनिक भारत फिर से उस शिक्षण-दृष्टि की ओर लौट रहा है जिसमें शिक्षा केवल सूचना का संचय नहीं, बल्कि अनुभव, चिंतन और सामाजिक उपयोगिता की प्रक्रिया है। भारतीय ज्ञान-परंपरा को पाठ्यक्रम और शिक्षक-प्रशिक्षण में सम्मिलित करने की नीति भी इसी दिशा का संकेत देती है।

तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो वैदिक, बौद्ध और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में कई गहरे साम्य मिलते हैं। तीनों ही शिक्षा के समग्र स्वरूप पर बल देते हैं। तीनों के लिए शिक्षा केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं, बल्कि चरित्र, विवेक, नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व का माध्यम है। वैदिक शिक्षा में परा और अपरा विद्या के बीच संतुलन है, बौद्ध शिक्षा में प्रज्ञा और करुणा के बीच, और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में ज्ञान, कौशल, मूल्य और जीवन-दक्षता के बीच संतुलन की बात की गई है. तीनों में बहुविषयकता का भाव भी मौजूद है। वैदिक और बौद्ध परंपराओं में विषय-संरचना खुली और व्यापक थी, जबकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 आधुनिक संस्थागत ढाँचे में उसी

लचीलेपन को पुनर्जीवित करना चाहती है. इस प्रकार नीति को प्राचीन परंपरा की यांत्रिक पुनरावृत्ति नहीं, बल्कि उसके आधुनिक पुनर्पाठ के रूप में देखा जा सकता है।

शिक्षण-विधियों के स्तर पर भी गहरी समानता दिखाई देती है। वैदिक परंपरा का श्रवण-मनन-निदिध्यासन, बौद्ध परंपरा का प्रवचन-शास्त्रार्थ-ध्यान और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का अनुभवाधारित, संवादात्मक एवं गतिविधि-आधारित शिक्षण एक साथ ज्ञान-निर्माण की सक्रिय प्रक्रिया पर बल देते हैं। इन सभी प्रणालियों में विद्यार्थी को निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं, बल्कि सक्रिय सहभागी माना गया है। इसी प्रकार मूल्य-शिक्षा के क्षेत्र में भी सभी प्रणालियाँ नैतिक विकास को केंद्रीय स्थान देती हैं। वैदिक शिक्षा में सत्य, अहिंसा, विनय और कर्तव्यबोध; बौद्ध शिक्षा में करुणा, सम्यक आचरण और अहिंसा; तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में संवैधानिक मूल्य, सामाजिक उत्तरदायित्व, नैतिक आचरण और भारतीय सांस्कृतिक चेतना—ये सब शिक्षा की अंतःप्रकृति को मानवीय बनाते हैं. इस तुलना से यह भी स्पष्ट होता है कि आधुनिक नीति ने प्राचीन मूल्यों को नए लोकतांत्रिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित करने का प्रयास किया है।

फिर भी, वैदिक और बौद्ध परंपराओं तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बीच कुछ महत्त्वपूर्ण भिन्नताएँ भी हैं। प्राचीन शिक्षा-दर्शन का अंतिम लक्ष्य प्रायः मोक्ष, आत्मज्ञान या दुःखनिवृत्ति जैसा आध्यात्मिक था, जबकि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का लक्ष्य अधिक बहुआयामी है—उसमें व्यक्तित्व-विकास के साथ-साथ रोजगार-क्षमता, कौशल, नवाचार, समानता और वैश्विक प्रतिस्पर्धा को भी स्थान दिया गया है। दूसरी ओर, प्राचीन परंपराओं में शिक्षा गुरु-केंद्रित और समाज-संचालित थी, जबकि आधुनिक नीति एक संस्थागत, नियामक और प्रणालीगत ढाँचे पर निर्भर करती है। अतः समानताओं के बावजूद यह समझना आवश्यक है कि प्राचीन शिक्षा-दर्शन को आधुनिक राज्य-व्यवस्था में यथावत लागू नहीं किया जा सकता; उसे समकालीन आवश्यकताओं के अनुरूप रूपांतरित करना होगा। यही रूपांतरण राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का कार्य है, और उसकी सफलता इसी पर निर्भर करती है कि वह प्राचीन आदर्शों को व्यवहारिक और समावेशी रूप में कितना लागू कर पाती है।

नीति के क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियाँ भी हैं। सबसे पहली चुनौती वित्तीय संसाधनों की है, क्योंकि व्यापक सुधारों के लिए पर्याप्त निवेश, आधारभूत ढाँचा, शिक्षण-सामग्री और संस्थागत समर्थन आवश्यक है। दूसरी चुनौती शिक्षक-प्रशिक्षण की है, क्योंकि यदि शिक्षक बहुविषयक, अनुभवाधारित और भारतीय ज्ञान-परंपरा-आधारित दृष्टि से प्रशिक्षित नहीं होंगे, तो नीति केवल काग़ज़ी दस्तावेज़ बनकर रह जाएगी। तीसरी चुनौती डिजिटल विषमता है, जो ग्रामीण और शहरी, संपन्न और वंचित वर्गों के बीच सीखने के अवसरों को असमान बना सकती है। चौथी चुनौती सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं की है, जिनके कारण शिक्षा तक पहुँच और गुणवत्ता में अंतर बना रहता है। इसके अतिरिक्त, पाठ्यक्रम-पुनर्गठन, मूल्यांकन-सुधार, भाषाई विविधता और संस्थागत स्वायत्तता जैसे क्षेत्रों में भी गंभीर और सतत प्रयासों की आवश्यकता है। इन चुनौतियों के बिना समग्र शिक्षा का आदर्श साकार नहीं हो सकता।

इन सबके बावजूद, यह स्पष्ट है कि वैदिक एवं बौद्ध शिक्षा-दर्शन और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के बीच एक महत्वपूर्ण वैचारिक संगति विद्यमान है। दोनों प्राचीन परंपराएँ व्यक्ति के आंतरिक और बाह्य विकास को साथ लेकर चलती हैं, और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी इसी संतुलन को आधुनिक संदर्भ में पुनः स्थापित करना चाहती है। वैदिक परंपरा की परा-अपरा विद्या, बौद्ध परंपरा की प्रज्ञा-करुणा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की समग्र, बहुविषयक एवं मूल्य-आधारित शिक्षा-दृष्टि मिलकर एक ऐसे शैक्षिक आदर्श की रचना करती हैं, जिसमें ज्ञान, चरित्र, कौशल और सामाजिक चेतना साथ-साथ विकसित हो सकते हैं। यदि भारतीय शिक्षा इन तीनों धाराओं से प्रेरणा लेकर आगे बढ़े, तो वह न केवल रोजगारोन्मुख बन सकती है, बल्कि मनुष्य को अधिक संवेदनशील, विवेकी, उत्तरदायी और संतुलित भी बना सकती है।

अंततः निष्कर्ष यही निकलता है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय शिक्षा को उसके प्राचीन वैचारिक स्रोतों से जोड़ने का एक गंभीर और दूरदर्शी प्रयास है। वैदिक और बौद्ध शिक्षा-पद्धतियों ने शिक्षा को जीवन, मूल्य, करुणा, अनुशासन और आत्मविकास से जोड़ा था; राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 उसी भावना को आधुनिक संरचनाओं, नीतिगत साधनों और समकालीन आवश्यकताओं के साथ पुनर्स्थापित करना चाहती है। यद्यपि इसके क्रियान्वयन में वित्तीय, प्रशासनिक और सामाजिक बाधाएँ हैं, फिर भी इसकी दिशा आशाजनक है। यदि

नीति को गंभीरता, संसाधन और संवेदनशीलता के साथ लागू किया जाए, तो भारतीय शिक्षा एक ऐसे रूप में विकसित हो सकती है जिसमें प्राचीन ज्ञान-परंपरा, आधुनिक विज्ञान, मानवीय मूल्य और सामाजिक उत्तरदायित्व एक साथ समाहित हों। यही वह बिंदु है जहाँ शिक्षा केवल परीक्षा या रोजगार का माध्यम नहीं रहती, बल्कि जीवन को अर्थ, दिशा और संवेदना देने वाली सच्ची संस्कृति बन जाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- Altakar, A. S. (1962). *Education in ancient India* (2nd ed.). Nand Kishore & Bros.
- Government of India, Ministry of Education. (2020). *National Education Policy 2020*. Government of India. https://static.pib.gov.in/WriteReadData/userfiles/file/NEPBookletFinalFO2Z.pdf
- Kaur, H. (2015). Relevance of Vedic education in the context of the National Education Policy (NEP) 2020. *Eduphoria, 2*(3), 35–42. https://icertpublication.com/index.php/eduphoria/eduphoria-vol-2-issue-3-2/relevance-of-vedic-education-in-the-context-of-the-naicertpublication
- Khandekar, S. R. (2025). A study on Indian Knowledge System and NEP 2020: Reimagining education for the 21st century. *ANVESHAK–International Journal of Management, 14*(2), 151–161. https://www.iimpanveshak.in/index.php/anveshak/article/view/173258iimpanveshak
- Rana, S. (2023). Holistic education in NEP 2020: A critical study of Vedic educational principles. *International Journal of Research Publication and Reviews, 6*(5), 18884–18887. https://ijrpr.com/uploads/V6ISSUE5/IJRPR47384.pdfijrpr
- Rai, S. K., Pallavi, K., & Singh, N. (2025). Implications of NEP 2020 for value-based education. *International Journal of Advanced Mass Communication and Journalism, 6*(1), 57–63. https://doi.org/10.22271/27084450.2025.v6.i1a.99masscomjournal
- Saha, R. (2025). Relevance and significance of Vedic education in relation to NEP 2020. *International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR), 7*(5), 1–7. https://www.ijfmr.com/papers/2025/5/58379.pdfijfmr
- Sharma, P. (2025). Education system in ancient Indian history and its relevance to NEP 2020. *International Journal of Research and Analytical World, 4*(8), 75–82.academicjournal.ijraw
- Singh, A. (2026). Ancient Indian education and NEP 2020: Bridging gurukul traditions with modern reforms. *The Academic, 11*(1), 1–15. https://theacademic.in/wp-content/uploads/2026/03/181.pdftheacademic
- University Grants Commission. (2023). *Guidelines for integration of Indian Knowledge Systems in higher education curricula*. UGC, Government of India.

- Vani, S. (2025). NEP 2020: Indispensable for strengthening ancient education. *Indian Journal of Psychology, 18*(1), 45–52. https://ijip.in/wp-content/uploads/2025/03/18.01.126.20251301.pdfijip
- Wallace, V. A. (2021). Nālandā: Integrative Buddhist monastic education in classical India. In S. K. McKechnie (Ed.), *Buddhist monastic traditions of southern Asia* (pp. 123–145). Center for Contemplative Research. https://centerforcontemplativeresearch.org/wp-content/uploads/2021/06/Vesna-A.-Wallace-Nalanda-Education.pdfcenterforcontemplativeresearch+1
- Yadav, R. (2025). Education in the Vedic era: A historical and philosophical study. *International Journal of Novel Research and Development, 10*(5), 23–30. https://ijnrd.org/papers/IJNRD2509082.pdfijnrd
- Zaveri, M. (2026). Indian Knowledge Systems as a foundation for value-based and skill-oriented education under NEP 2020. *Journal of Indian Educational Thought, 5*(1), 10–22. https://zenodo.org/records/18524574zenodo

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

श्रवण कुमार पटेल
शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
प्रो0 तेज बहादुर सिंह
समाजशास्त्र विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

सारांश :

प्रस्तुत शोध पत्र महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका से सम्बन्धित परिधि के अन्तर्गत सीमांकित है। शिक्षा का अर्थ केवल विद्यालय जाकर परीक्षा पास करना ही नहीं होता अपितु मानसिक, शारीरिक और वैचारिक विकास होने से होता है। एक स्त्री को शिक्षित करने से एक परिवार शिक्षित होता है और एक परिवार शिक्षित होने का मतलब आने वाली पीढ़ी को शिक्षित करना तथा पीढ़ियों को शिक्षित करने का मतलब है कि समाज व राष्ट्र को शिक्षित करना।

महिलाओं का स्वास्थ्य, शिक्षित, समझदारी, कुशल व्यवहार और बुद्धिमान होना समाज के लिए बहुत जरूरी है और यह शिक्षा के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। महिलाएँ परिवार, समाज, राष्ट्र के विकास में अपना सम्पूर्ण योगदान तभी दे पायेंगी जब वे स्वयं ही सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षिक आदि रूप से मजबूत होगी। महिलाओं की प्रस्थिति में बिना शिक्षा के सकारात्मक बदलाव ही सम्भव नहीं है। शिक्षा के माध्यम से ही उनमें जागरूता आयेगी और तर्कपूर्ण सोचने व विचारने की क्षमता विकसित होगी। महिलाओं को अनेक कठिनाइयों से मुक्ति, पारम्परिक रूप से भूमिका का निर्वहन करने और उनके अपने सामाजिक जीवन को बदलना इत्यादि शिक्षा के द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

मुख्य शब्द– सशक्तिकरण, शिक्षा, कठिनाइयाँ, चुनौतियाँ, जागरूकता, प्रोत्साहन, समाज व राष्ट्र।

प्रस्तावना :

किसी भी व्यक्ति, परिवार व समाज के सशक्तिकरण में महिला शिक्षा को एक प्रमुख कारक माना जाता है। औपचारिक रूप से शिक्षा व्यवस्था में महिलाओं का आगमन 19वीं सदी के मध्य के शुरूआत में ही हो गया था, परन्तु इन बदलावों को 20वीं सदी के मध्य में ही व्यापक रूप से स्वीकृति मिल सकी। स्त्रियों को सशक्त बनाने और उन्हें स्वयं के बारे में सही निर्णय लेने के लिए शिक्षित होना बहुत ही आवश्यक है। यद्यपि शिक्षा के माध्यम से ही हमें सही गलत के निर्णय लेने की प्रवृत्ति विकसित होती है एवं अच्छी शिक्षा उत्तम और दीर्घकालीन निर्णय लेने में सहायक होती हैं। अशिक्षित स्त्रियाँ अपने अनुभव के आधार पर ही

निर्णय लेती हैं। सरकार द्वारा महिलाओं के शिक्षा पर जो नीति–निर्माण की प्रक्रिया थी वह बहुत ही मंद गति से कार्य करती रही। स्त्री शिक्षा की सार्थकता को बढ़ाने के लिए विभिन्न समाज–सुधारकों और महिला संगठनों द्वारा गहन चिंतन एवं मनन किया गया। जिसमें ज्योतिबा फुले, राजाराम मोहन राय, गाँधी जी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, एनी बेसेन्ट, पंडिता रमाबाई, विवेकानन्द, सावित्रीबाई फुले आदि के प्रयास व ऑल इण्डिया वुमेन कांफ्रेंस ने महिलाओं की शिक्षा में प्रवेश की न केवल बात की अपितु यह एलान किया कि शिक्षा के माध्यम से स्त्रियों को उनकी भूमिकाओं का निर्वहन करने और जिम्मेदार नागरिक बनाने में मदद करनी चाहिए।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी महिलाओं की भूमिका को लेकर विवाद है। सभी लोग इस बात पर भी सहमत हैं कि महिलाओं को भी शिक्षित होने का अधिकार है, अपितु जिस प्रकार की शिक्षा महिलाओं के लिए उपयुक्त है, इसे लेकर वर्तमान समाज में भी द्वन्द्व की स्थिति बनी हुई है।

किसी भी राष्ट्र का विकास और वर्तमान स्थिति को यदि देखना है तो वहाँ की आधी आबादी के शिक्षा स्तर को देख लेना चाहिए। जब एक शिक्षित नागरिक से जो अपेक्षाएँ की जाती है तो उस पर आधारित समाज का विकास आश्रित रहता है। एक कुशल एवं उन्नत मानव संसाधन की उपलब्धता न हो हमें किसी भी समाज या राष्ट्र में पर्याप्त संसाधन होने पर उसके विकास के सभी रास्ते अवरूद्ध हो सकते हैं। वर्तमान परिवेश में भारत में महिलाओं की साक्षरता दर करीब 65 प्रतिशत है जिससे स्पष्ट होता है कि अभी भी महिलाओं की सहभागिता कम है। कई शोध अध्ययन से यह बात निकलकर सामने आयी है कि जिस परिवार की स्त्रियाँ शिक्षित होती है उस परिवार का पारिवारिक बजट संतुलित रहता है और वह परिवार और अन्य परिवारों के अपेक्षा अच्छा जीवन–यापन करता है। वहीं दूसरी ओर जिस परिवार की महिलाएँ अशिक्षित होती हैं उस परिवार का पारिवारिक आय–व्यय, वित्तीय योजना सहित जीवन स्तर की स्थिति बहुत ही दयनीय होती है। एक शिक्षित स्त्री ही शिक्षा के सार्थकता को समझती है और अपने बच्चों को भी शिक्षित बनाने के प्रति जागरूक रहती है। एक बेहतर मानव संसाधन का निर्माण जो आर्थिक प्रगति एवं सशक्तिकरण का आधार स्तम्भ होने की शुरूआत यहीं होती है।

किसी भी समाज के आबादी की लगभग 50 प्रतिशत संख्या स्त्रियों की होती है यदि इन्हें आबादी विकास की प्रक्रिया से अलग कर लिया जाए तो उस समाज की विकास गति मंद हो जायेगी। शोध और शिक्षा को अलग कर लिया जाये तो खेल–कूद और दूसरी प्रतियोगिताओं में स्त्रियों की भागीदारी कमजोर पड़ जायेगी। भारत का परम्परा 'अर्द्धनारीश्वर' की है अर्थात् दोनों एक–दूसरे के अधूरापन को दूर करते हैं। एक–दूसरे के अभाव को पूर्ण करते हैं।

शिक्षा का अर्थ मात्र विद्यालय जाने और परीक्षा उत्तीर्ण होने से नहीं माना जाता है अपितु मानसिक, शारीरिक एवं वैचारिक विकास करने से होता है। विद्यालयों में देखा जाए तो पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को खेल–कूद की व्यवस्था सही ढंग से नहीं होती है। खेल में विश्व पटल पर अच्छा प्रदर्शन करने वाली बेटियों के अभिभावकों द्वारा ध्यान देने का बेहतरीन तरीकों के कारण ही सम्भव हुआ है, जैसे– टेनिस, बैटमिंटन, हॉकी, कुश्ती, तीरंदाजी, निशानेबाजी आदि में भारतीय लड़कियों का बहुत ही शानदार प्रदर्शन रहा है। परन्तु दुःख की बात यह है कि मीडिया जितना तवज्जो पुरुष खिलाड़ियों को देती है उतनी तवज्जो महिला खिलाड़ियों को नहीं देती। महिलाओं के प्रति समाज का भी नजरिया बदलना होगा।

भारत में महिला शिक्षा की वर्तमान स्थिति–

आज के युग में अशिक्षित होना एक अभिशाप है क्योंकि यह विज्ञान का युग कहा जाता है। सन् 1947 में स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद महिलाओं के सामाजिक और शैक्षणिक स्थिति में अनेक परिवर्तन घटित हुए हैं। भारतीय स्त्रियाँ आज अज्ञानता, परतंत्रता, रूढ़िवादिता के बंधनों से मुक्त होकर सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर रही हैं और महिलाओं से सम्बन्धित मान्यताओं में बदलाव आ रहे हैं। सन् 2001 जनगणनानुसार

साक्षरता दर 65.38 प्रतिशत थी जबकि सन् 2011 में यह बढ़कर 74.04 प्रतिशत हो गयी। 2001 में पुरुष की साक्षरता दर 75.85 प्रतिशत तथा 2011 में बढ़कर 82.14 प्रतिशत हो गयी। स्त्रियों की साक्षरता दर 2001 में 54.16 प्रतिशत थी जो कि 2011 में 65.46 प्रतिशत बढ़कर हो गई। सन् 2011 जनगणना में स्त्रियाँ, पुरुषों के मुकाबले 16.68 प्रतिशत पीछे रह गयी और वहीं कुल साक्षरता 74.04 प्रतिशत से 8.58 प्रतिशत से बहुत पीछे रह गयी। वर्ष 2011 में भारत में महिला शिक्षा दर 91.95 प्रतिशत हो गयी जो कि वर्ष 2011 के मुकाबले में 26.94 प्रतिशत बढ़ोत्तरी हुई। सम्पूर्ण विश्व की महिला साक्षरता दर 79.9 प्रतिशत है जो कि इसके अपेक्षा 12. 86 प्रतिशत भारतीय महिलाएँ अधिक शिक्षित हैं।

उच्च शिक्षा में महिलाओं के नामांकन दर में बढ़ोत्तरी हो रही है। सन् 1950–51 में महिलाओं का उच्च शिक्षा में पंजीकरण 10.4 प्रतिशत था जबकि 1980–81 में बढ़कर 27.2 प्रतिशत, 1996–97 में 25 प्रतिशत हो गया। 18–23 वर्ष तक की लड़कियाँ 2014–15 में 23.7 प्रतिशत से बढ़कर सन् 2021–22 में 28.5 प्रतिशत नामांकन का दर हो गया।

महिलाओं की शिक्षा में बाधाएँ :

वर्तमान समय में सभी स्त्रियों एवं बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त करने का संवैधानिक अधिकार है। स्त्रियों को पूर्णरूप से शिक्षित करने के लिए सरकारी एवं गैर–सरकारी संगठनों द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। परन्तु इन सबके बावजूद भी महिलाएँ शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं। जैसे– सामाजिक भेदभाव, लैंगिक असमानता, लड़कियों से घरेलू काम लेना, पाठशाला में नामांकन न कराना आदि कई ऐसे कारण हैं जिससे कि समाज में महिलाओं के शैक्षणिक प्रगति में बाधा उत्पन्न करते हैं तथा इसके साथ ही साथ ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में उनके मूल अधिकारों के प्रयोग करने से रोकने वाले सांस्कृतिक एवं आर्थिक कारणों से साक्षरता दर में कमी होने का कारण रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य :

1. महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की आवश्यकता को जानना।
2. महिला सशक्तिकरण में शिक्षा के प्रति जागरूकता का आकलन करना।
3. महिलाओं के प्रति समाज में लैंगिक भेदभाव को समझना।
4. महिलाओं के सामाजिक एवं शैक्षणिक सशक्तिकरण को प्रभावित करने वाले कारणों का विश्लेषण करना।
5. महिला सशक्तिकरण के राह में आने वाले भ्रामक तथ्यों को पहचानना।
6. महिला शिक्षा से सम्बन्धित मुख्य सरकारी योजनाओं का विश्लेषण करना।
7. महिला शिक्षा द्वारा सामाजिक संतुलन के विकास के लिए उपयोगितापूर्ण सुझाव देना।

शोध प्रविधि :

यह शोध पत्र मूल रूप से वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। यह शोध पत्र महिला शिक्षा के माध्यम से महिला सशक्तिकरण को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है। इस शोध में उपयोग किये गये आँकड़ों के अध्ययन की आवश्यकता के अनुरूप विशुद्ध रूप से द्वितीयक स्रोतों से अनुग्रहित किया गया है। महिलाओं की वर्तमान स्थिति, पुरुषों के समान बराबर होना अभी भी महिलाओं के लिए बहुत दूर की कौड़ी साबित होती है। बल्कि न केवल वे हाशिए पर हैं क्योंकि सार्वजनिक हस्तियाँ आसत रूप से महिला शायद ही घर या बाहर निर्णय ले सकती हैं। जनगणना 2011 के अनुसार भारत का लिंगानुपात 940 है और महिलाओं की साक्षरता दर 65.46 प्रतिशत की अपेक्षा पुरुषों की साक्षरता दर 80 प्रतिशत के तुलना में 14.54 प्रतिशत कम है जो कि साक्षरता दर एवं लिंगानुपात हर समय चिंता का विषय रहा है। दोनों ही मामलों में हमारी लगभग आधी आबादी की जनसंख्या, पुरुषो की जनसंख्या के दौड़ में काफी पीछे रही हैं।

महिला सशक्तिकरण में महिला शिक्षा की आवश्यकता :

महिला सशक्तिकरण की धारणा एक नवीन विचार है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 1975 ई0 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष तथा 1976–1985 की अवधि को महिला दशक के रूप में मान्यता दिया था। भारत में नई सदी के प्रथम वर्ष 2001 को ''महिला सशक्तिकरण वर्ष'' के रूप में घोषित किया गया था। एक बेहतर परिवार के निर्माण में महिला शिक्षा की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है और एक प्रगतिशील राष्ट्र एवं आदर्श समाज के निर्माण में सम्पूर्ण योगदान देती है। यूनेस्को के नवीन आँकड़ों एवं तथ्यों से विदित होता है कि शिक्षा विकास के रूप में रूपान्तरित होती रहती हैं। इससे मालूम होता है कि– यदि आने वाले वर्षों में प्रति व्यक्ति आय के प्रतिशत में इजाफा करना हो, तो सभी बच्चों की शिक्षा तक समान रूप से पहुँच बनाना होगा। सभी महिलाएँ प्राथमिक तक शिक्षा ग्रहण कर लेती हैं, तो बाल–विवाह एवं शिशु–मृत्यु दर में छठें भाग के समान और प्रसूति मौतों में 2/3 भाग कमी लाई जा सकती है। यूनेस्को के नवीन विश्लेषण के अनुसार महिलाओं के शिक्षा के द्वारा सशक्त किया जाता है। शिक्षित महिलाओं एवं युवतियों से आशा की जा सकती है कि अपने अधिकारों की जानकारी एवं अधिकारों पर दावा करने का आत्मविश्वास भी अधिक होगा।

शिक्षा में समरूपता को प्रोत्साहन :

शिक्षा के द्वारा लोगों में लोकतंत्र की समझ को विकसित करने, सहिष्णुता एवं उसमें अन्तर्निहित विश्वास को प्रोत्साहित करती है और लोगों को अपने समुदायों की राजनीतिक जिंदगी में सह–जनभागीदारी अदा करने के लिए उत्साहित करती हैं। शैक्षणिक समानता से रोजगार के अवसरों में सुधार एवं आर्थिक विकास में वृद्धि यदि देश की उत्पादन एवं लाभ में वृद्धि करनी है तो सभी बच्चों तक शिक्षा की समान रूप से पहुँच बनानी होगी, जिससे कि आर्थिक विकास में वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। अगले कुछ वर्षों में देश के प्रतिव्यक्ति आय में 23 प्रतिशत की वृद्धि देखने को मिलेगी, जिनमें शिक्षा की दृष्टि से समानता होगी।

महिला शिक्षा को प्रोत्साहित करने वाली योजनाएँ :

महिलाओं, बालिकाओं को शिक्षित करने एवं शिक्षा के द्वारा महिलाओं को सशक्त करने के लिए केन्द्र सरकार ने अनेकों योजनाओं की शुरूआत की है। इन योजनाओं के माध्यम से महिलाओं को निश्चित रूप से हौसला मिला है, जिनमें से कुछ योजनाएँ निम्नवत् हैं–

(1) कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावास की योजना (1972) :

यह योजना 1972 में शुरूआत की गयी। इसका उद्देश्य मुख्य रूप से सरकारी जमीनों, बंजर जमीनों पर आवास बनाने से है जहाँ पर कामकाजी महिलाएँ रह सकें एवं काम करते हुए शिक्षा को प्राप्त कर सकें। 1 अप्रैल 2015 को इसे ''सखी सेन्टर्स'' कहा गया।

(2) महिला समाख्या योजना (1989) :

महिला समाख्या से आशय है कि महिलाओं को शिक्षा के द्वारा समानता देने से है। वर्तमान परिवेश में यह कार्यक्रम देश के विभिन्न राज्यों के 104 जिलों में चलाया जा रहा है। महिला शिक्षा के विकास हेतु सन् 1955 में हिन्दू विवाह अधिनियम तथा 1954 में बना विशेष विवाह अधिनियम है। अपराधिक दण्ड संहिता अधिनियम 1983 एवं महिला को अश्लील प्रस्तुतीकरण विरोध अधिनियम 1983 में बनाया गया।

(3) राजीव गाँधी योजना (सबला) (2000–01) :

किशोरियों के सशक्तिकरण के लिए भारत सरकार द्वारा इस योजना की शुरूआत की गयी थी। यह योजना देश के 200 पिछड़े जिले में लागू की गयी और 2009 तक निरन्तर चलती रही। इस योजना को महिला और बाल विकास मंत्रालय (भारत सरकार) के द्वारा 1 अप्रैल 2011 से सबला नाम देकर पूरे देश में लागू कर दिया गया। इस योजना का शत प्रतिशत बजट केन्द्र सरकार द्वारा दिया जाता है।

(4) स्वधारा योजना (2001) :

कठिन परिस्थितियों का सामना करने वाली महिलाओं के लिए सन् 2001 में इस योजना की शुरूआत हुई थी। इसके अधीन निम्न महिलाओं को शामिल किया गया है– दीन–हीन विधवा, जेल से रिहा महिला कैदी, प्राकृतिक आपदा की शिकार महिलाएँ, वेश्यालयों से मुक्त करायी गयी। इन महिलाओं में मानसिक रूप से विक्षिप्त महिलाएँ इत्यादि को शामिल किया गया।

(5) स्वावलम्बन योजना (2001) :

इस योजना को सन् 2010 में शुरू की गयी थी। इस योजना के अन्तर्गत महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता है जिससे कि महिला अपनी स्वयं की रोजगार कर सकती हैं। सन् 2016 में इस योजना का नाम बदलकर ''अटल पेंशन योजना'' कर दिया गया।

(6) बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ योजना (2015) :

इसके अन्पर्तगत देश के सभी 60 जनपदों में ''बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ'' योजना का विस्तार किया गया है। इस योजना की प्रधानमंत्री ने 22 जनवरी 2015 को पानीपत, हरियाणा से शुरूआत की। इसका लक्ष्य मुख्य रूप से बच्चों के लिंगानुपात में चिन्ताजनक गिरावट तथा जीवन परिवर्तन की निरन्तरता के साथ ही साथ महिला सशक्तिकरण से सम्बन्धित मुद्दों के समाधान के लिए एक बड़े कार्यक्रम की शुरूआत करना था।

(7) कन्या सुमंगला योजना (2019) :

यह योजना उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा चलायी जा रही है जिसकी शुरूआत भारत सरकार द्वारा 25 अक्टूबर 2019 को की गयी जिसमें बालिकाओं और महिलाओं को सामाजिक सुरक्षा के साथ–साथ कन्या–भ्रूण हत्या और बाल–विवाह जैसी कुरीतियों के रोकथाम के लिए बल मिलेगा और वहीं दूसरी ओर बालिकाओं को उचच शिक्षा व रोजगार के अवसरों की ओर बढ़ने का उचित समय मिलेगा।

भारत में महिला शिक्षा के स्रोत :

रामकृष्ण आयोग (1948–49)– इस आयोग द्वारा महिला शिक्षा को बढ़ावा देने वाली सुविधाओं को बढ़ाने की सिफारिश की गयी। महिलाओं को शिक्षित किये बिना व्यक्तियों को शिक्षित नहीं किया जा सकता है। इनको समाज में उच्च स्थान एवं सम्मान दिलाने के लिए एक ऐसा पाठ्यक्रम तैयार होना चाहिए।

राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति (1958)– इसको दुर्गाबाई समिति के नाम से भी जाना जाता है। सरकार द्वारा प्रत्येक राज्य में महिला शिक्षा के विकास के लिए सुविधापूर्ण विद्यालयों की व्यवस्था की गयी। इसमें ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा के हेतु विशेष प्रकार का प्रयास करना समाहित किया गया।

कोठारी आयोग (1964–66)– ग्रामीण एवं वंचित महिलाओं के लिए विशेष रूप से सार्वभौमिक शिक्षा को सुनिश्चित कराना है। प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा में महिलाओं के नामांकन स्तर को बढ़ाना और इण्टरमीडिएट स्तर तक बालिकाओं के लिए अलग से विद्यालय खोलने का प्रावधान किया गया। अनुसंधान इकाईयों की स्थापना कर महिला शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रावधान किया गया।

राममूर्ति आयोग (1990)– इस समिति ने महिलाओं की शिक्षा के लिए अलग से धन की व्यवस्था करने की सिफारिश की गयी इस योजना के माध्यम से विद्यालयों और महाविद्यालयों में अधिक से अधिक महिला अध्यापक की नियुक्ति करना तथा विद्यालयों में बालविकास, पोषण तथा स्वास्थ्य को समावेशित करना था।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1996)– महिलाओं की प्राथमिक शिक्षा के राह में आने वाले समस्याओं का हल करने की उचित व्यवस्था किया जाए। देश में लिंगभेद जैसे उत्पन्न हो रहे समस्याओं को जड़ से समाप्त करना। विभिन्न प्रकार के कला कौशलों से सम्पन्न संस्थानों को खोलना जो कि महिलाओं के विकास में निरन्तर सहायक हो सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020)– इसका उद्देश्य महिला छात्रों को साइकिल, साइकिलिंग समूह और पैदल समूहों के माध्यम से स्कूल तक पहुँच बनाना तथा समान गुणवत्ता वाली शिक्षा के लिए एक 'जेंडर इंक्लूजन फंड' की स्थापना करने का प्रावधान किया गया। निःशुल्क आवास सुविधा, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों का विस्तार करना। परिसर के अन्दर और बाहर सुरक्षा को बढ़ावा देना इत्यादि।

सुझाव :

महिलाओं की शिक्षा के प्रति नजरअंदाज और होने वाले पक्षपात को एक दिन में नहीं बदला जा सकता है। सरकार द्वारा देशभर में शिक्षा व्यवस्था से स्तर को ऊँचा उठाने के लिए सावधानीपूर्वक निर्माण की गयी इन योजनाओं के तहत् महिला सशक्तिकरण हुआ है, लेकिन इसके पीछे भारतीय नागरिकों का जनसहयोग रहा है। महिलाओं को शैक्षणिक रूप से और मजबूत बनाना होगा और इसके लिए महिला शिक्षा में आ रही अनेक प्रकार की रूकावट को दूर करना चाहिए।

इसके साथ ही साथ अनेक प्रकार के सुझाव हैं–

- महिलाओं को शिक्षा के लिए समानता का अवसर मिलना चाहिए।
- महिला शिक्षा के लिए आर्थिक रूप से सहयोग प्राप्त होना चाहिए।
- महिलाओं को शिक्षा के प्रति प्रोत्साहित करने के लिए जागरूक करना।
- महिलाओं को शिक्षा के क्षेत्र में लैंगिक रूप से असमानता की भावना नहीं होनी चाहिए।
- स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए आवासीय कन्या स्कूल की स्थापना की जानी चाहिए।
- स्त्रियों को शिक्षित करने के लिए संवैधानिक ढाँचे में बदलाव का प्रयास करना चाहिए।

निष्कर्ष :

निष्कर्ष के रूप में यह कह सकते हैं कि महिला सशक्तिकरण के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जिससे महिलाओं की स्थिति को सशक्त एवं सुदृढ़ किया जा सकता है। हमें देश को बदलने के लिए शिक्षा की गुणवत्ता में भी सुधार लाना होगा। वर्तमान परिवेश में महिलाओं तथा लड़कियों की शिक्षा के प्रति सहभागिता का कम होने का प्रमुख कारण शिक्षा में दोषपूर्ण व्यवस्था है। वर्तमान समाज में संचालित कार्यक्रम बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, कस्तूरबा आवासीय विद्यालय योजना, 'तेजस्विनी', अल्पसंख्यक मंत्रालय की नई मंजिल आदि योजनाओं को सुव्यवस्थित संचालन करना होगा ताकि इस सभी योजनाओं का पूर्ण रूप से लाभ महिलाओं व लड़कियों को मिल सकें।

शिक्षा के द्वारा ही महिलाओं में आत्मविश्वास, जागरूकता व अपने अधिकारों तथा सरकार द्वारा संचालित अनेक योजनाओं की जानकारी होगी जिससे कि वे कौशल विकास तथा स्वावलम्बन का विकास करके अपने स्वयं के निर्णय द्वारा एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में सहयोग करेंगी। सरकार का यह प्रयास होना चाहिए कि स्त्रियों को शिक्षा के माध्यम से सशक्त बनाने के लिए वे केवल स्वयं को ही नहीं बल्कि समाज को एक नई प्रकार की दिशा एवं दशा प्रदान कर सकें।

"मुझे सौ शिक्षित पुरुषों के मुकाबले दस शिक्षित स्त्रियों की आवश्यकता एवं जरूरत है जिसके द्वारा सम्पूर्ण राष्ट्र को शिक्षित किया जा सके।"– पं0 जवाहर लाल नेहरू

सन्दर्भ सूची :

- सौरभ, समीरा (2018) : ''सशक्त होती ग्रामीण महिलाएँ'', कुरुक्षेत्र, जनवरी 2018, पृ0सं0 14, 15, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, सी0जी0ओ0 काम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
- शर्मा, चन्द्रभूषण (2018) : ''बालिका शिक्षा से आयेगी देश में समृद्धि'', कुरुक्षेत्र, जनवरी 2018, पृ0सं0 39, 39, 40.
- सिंह, डॉ0 संतोष कुमार (2015) : ''महिला सशक्तिकरण एवं सरकारी प्रयास'', कुरुक्षेत्र, मार्च 2015 .
- योजना (2016) : ''कार्यक्रम व नीतियाँ, 14 दिवसीय प्रारम्भिक अध्ययन पैकेज'', 2016, ए–27 डी, सेक्टर–16, नोयडा–20130.
- शर्मा, रेखा (2023) : ''महिला सशक्तिकरण हाल के सुधार : सुशासन और सुधार'', सितम्बर 2023, सूचना भवन, सीजीओ परिसर, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
- चौहान एवं खुराना (2012) : ''भारतीय इतिहास में महिलाएँ'', लक्ष्मीनारायण अग्रवाल.
- शर्मा, योगेन्द्र (2018) : ''महिला सशक्तिकरण दशा और दिशा'', लोकभारती प्रकाशन, सितम्बर 2018.
- गुप्ता, डॉ0 कृष्णा (2009) : ''उच्च शिक्षा की लाभार्थी के रूप में भारतीय महिला'', जनजीवन प्रकाशन, जयपुर, 2009.
- लवानिया, एम0एम0 (2004) : ''भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र'', रिसर्च पब्लिशर्स, जयपुर.
- मालती, डॉ0 के0एम0 (2010) : ''स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य'', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली–110002.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

बघेलखंड का इतिहास एवं राजनीतिक वैभव

श्रीमती ज्योति सिंह
शोधार्थी, इतिहास
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
डॉ. अश्विनी कुमार द्विवेदी
शोध निर्देशक एवं सहायक प्राध्यापक, इतिहास
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह (स्वशासी उत्कृष्टता) महाविद्यालय, रीवा, (म.प्र.)

सारांश -

विंध्य पर्वतमाला की गोद में स्थित बघेलखंड भारतीय इतिहास में अपनी विशिष्ट राजनैतिक ,सामाजिक -सांस्कृतिक पहचान रखता है। भौगोलिक रूप से यह क्षेत्र मध्य भारत के उत्तर-पूर्वी भाग को समाहित करता है। बघेलखंड का राजनीतिक इतिहास केवल सत्ता के हस्तांतरण नहीं है,अपितु यह अदम्य साहस, कूटनीति और स्थापत्य कला का प्रतीक है।

इस शोध पेपर का मुख्य उद्देश्य बघेलखण्ड क्षेत्र में प्राचीन राजवंशों के उदय के साथ-साथ व्याघ्रदेव द्वारा स्थापित 'बघेल राजवंश' के उदय और उनके शासनकाल के दौरान बघेलों के राजनीतिक विकास का विश्लेषण करना है। इन शासकों के द्वारा न केवल विदेशी आक्रमणकारियों जैसे सल्तनत कालीन शासकों,सूरी एवं मुग़ल शासकों, के विरुद्ध अपने स्वाभिमान की रक्षा की, बल्कि मराठों के साथ जटिल राजनीतिक संबंध स्थापित किया |

बघेलों ने अंग्रेजों का भी बहुत प्रतिरोध करते हुए अपनी स्वायत्तता को भी बचाए रखा। बघेलों के संरक्षण में पल्लवित एवं पुष्पित हुई राजनीतिक जागृति ने इस क्षेत्र को मध्य भारत का एक राजनीतिक केंद्र बना दिया । प्रस्तुत शोध पत्र में समयानुसार गहोरा ,बांधवगढ़ से लेकर रीवा तक की राजधानी परिवर्तन की प्रक्रिया का विषद वर्ण किया गया है | बघेल शासकों की प्रशासनिक नीतियां ,सामरिक संबंधों का वर्णन और भौगोलिक दुर्गमता ,ने अपनी स्वतंत्र पहचान को अक्षुण्ण बनाए रखा। अंततः, यह शोध बघेलखंड के विस्मृत ऐतिहासिक तथ्यों को संकलित कर उसे मुख्यधारा में लाने का प्रयास करेगा और भारतीय इतिहास लेखन परंपरा में उचित स्थान प्रदान करेगा |

मुख्य शब्द :- बघेल राजवंश ,रीवा रियासत ,व्याघ्रदेव ,विंध्य क्षेत्र ,राजनीतिक स्वायत्तता ,गहोरा, पूर्ण उतरदायी शासन,बांधवगढ़, प्रजामण्डल,चावल वसूली |

प्रस्तावना:-

बघेलखण्ड का राजनैतिक विरासत अत्यंत समृद्ध, अद्वितीय एवं अकल्पनीय है | इस क्षेत्र की भौगोलिक संरचना ने बघेलखण्ड की राजनैतिक स्थिति को अत्यंत प्रभावित किया है | वर्तमान में यह क्षेत्र मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के मध्य में विद्यमान है | भूमि का अधिकांश क्षेत्र अनेक हृदय मोहित मनोरम प्राकृतिक विविधताओं को समाहित किए हुए है | यहाँ की अपार प्राकृतिक धन सम्पदा और खनिज संसाधनों ने इस क्षेत्र की महत्ता को बढ़ा दिया है | यहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों ने बघेलखण्ड की राजनैतिक वैभव और सांस्कृतिक परिदृश्य को पूर्णरूपेण प्रभावित किया है | यही कारण है कि हमेशा से इस क्षेत्र ने बाह्य आक्रमणकारियों और विरोधियों को हमेशा से आकर्षित किया | यहाँ का राजनैतिक इतिहास सदैव से गरिमामयी और गौरवपूर्ण रहा है जिस पर अधिकार करने के लिए बाह्य आक्रांताओं को मुंह की खानी पड़ी |

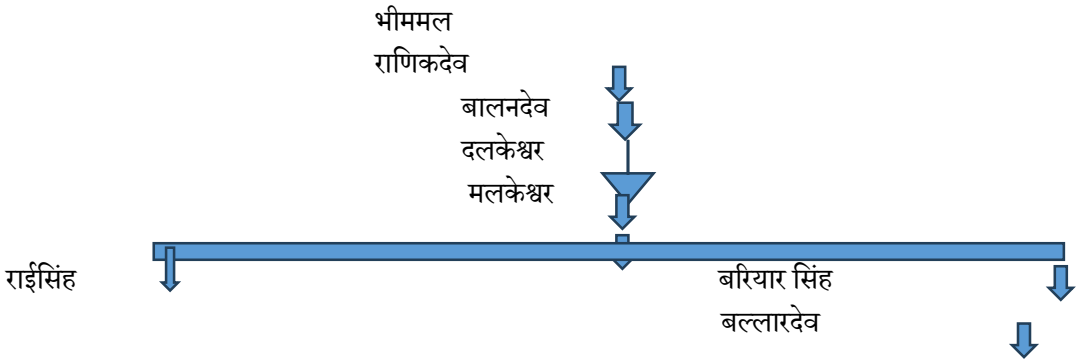
वैदिक कालीन ग्रंथो में इस क्षेत्र के बारे में विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होते है किन्तु धीरे -धीरे जनसँख्या का विस्तार होने लगा तब यह क्षेत्र प्रकाश में आया | यदि इस क्षेत्र की राजनीतिक व्यवस्था का सूक्ष्म अवलोकन किया जाय तो यहाँ पर महाजनपदों के समय से ही साम्राज्य विस्तारवादी नीति की होड़ मची हुई थी | समय के साथ ही यहाँ पर मौर्य, शुंग, गुप्त,उच्छकल्प,परिव्राजक तथा पुष्यभूति वंश के शासकों ने यहाँ पर अपनी सत्ता स्थापित की | अधिकार करने के लिए ध्यान केंद्रित किया तथा राजपूत काल में गुर्जर प्रतिहारों, कलचुरियों और चंदेल शासकों ने अपने बाहुबल से बघेलखण्ड की गौरवगान को सम्पूर्ण उत्तर भारत का सिरमौर बना दिया | बघेलों की प्रारंभिक राजधानी भट्ट गहोरा जो जिला चित्रकूट की कर्वी तहसील से 14 मील पर थी |[1]

बघेलखण्ड की राजनैतिक परिदृश्य में संक्रमण काल आता है | यह समय था, आदिम जनजातियां का जिन्होनें कुलीन वर्ग के लोगों के साथ संघर्ष किया | और समय-समय पर अपना साम्राज्य स्थापित किया किन्तु लगातार बाह्य आक्रमणों और उच्च वर्ग के दबाव के कारण ये आदिम जनजातियां अपनी राजनीति को चिरस्थायी नहीं कर सकीं | यद्यपि मुस्लिम आक्रांताओं से यह क्षेत्र काफी समय तक अछूता रहा किन्तु मुस्लिमों की लालच भरी कु -दृष्टि ने इस क्षेत्र को अवश्य प्रभावित किया | इन आक्रमणकारियों में महमूद गजनवी, मुहम्मद गोरी, कुतुबुद्दीन ऐबक,मलिक नुसरत उद्दीन तायसी आदि थे | इन सुल्तानों के समय दिल्ली सल्तनत की आंतरिक समस्या के कारण वे यहाँ ज्यादा समय तक इस क्षेत्र की अधिक नहीं दे सके | फलस्वरूप उन्हें संधि-समझौता करके वापस जाना पड़ा |

विंध्य क्षेत्र में बघेलों के राज्य और उनकी राजधानी भी समयानुसार परिवर्तित होती रही | दसवीं सदी के पश्चात् तीन-चार शताब्दियों तक इस क्षेत्र को भट्टा के नाम से जाना जाता था और जब बघेलों ने गुजरात के पाटन को छोड़कर गहोरा में बस गए तब से इसे भट्ट -गहोरा के नाम से जाना जाने लगा | इस बात को यहाँ जानना जरुरी है कि बघेलों के पूर्व कुछ समय के लिए यहाँ पर 13 सदी के आस-पास लोधी जमींदारों ने इसे अपनी राजधानी बनाकर शासन किया | रीवा राज्य बघेलों की खास कलमावली 'एकत्रा बांधवगढ़' से पता चलता है कि बघेला सरदारों ने लोधी जमींदारों से गहोरा छीनकर अपनी राजधानी बनाया |[2]

बघेलों सरदारों का आगमन गुजरात से माना जाता है जो गुजरात के पाटन वर्तमान अन्हिलवाड़ से 10 मील दक्षिण - पश्चिम में व्याघ्रपल्ली नामक गांव में स्थित है | बघेलों के आदिपुरुष व्याघ्र देव को माना जाता है | 1297 ईस्वी में अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण के कारण कर्ण देव बघेल भाग कर दक्षिण चला गया | इसी वंश के दो भाई गुजरात से भाग कर मध्य-पूर्व में भर राजाओं के यहां शरण ली और अपने को शक्तिशाली बनाकर गहोरा में बस गए |[3]

1732 से 1755 ईस्वी के मध्य लिखा गए ग्रन्थ 'बाँधोगढ एकत्रा' में बघेलों की समस्त वंश की सूची प्राप्त होती है जो निम्नवत है -



इस सूची में कितना स्पष्टता है इसके बारे में अलग-अलग पुस्तकों भिन्न -भिन्न साक्ष्य प्राप्त होते हैं |[4]

गहोरा में भीमलदेव से शासन का प्रारंभ माना जाता है फिर अनिक देव और बालन देव जागीरदार शासक बने | गहोरा की गद्दी पर बैठने वाला प्रथम स्वतन्त्र शासक बुल्लार देव या बल्लाल देव था | इसने महाराजाधिराज की उपाधि ग्रहण की थी | इसके प्रमाण बघेलखण्ड क्षेत्र से प्राप्त सती अभिलेख से होता है | इसके पूर्व इस वंश के शासक ठाकुर कहे जाते थे | यह दिल्ली के सुल्तान फिरोजशाह तुगलक (1351-1388) का समकालीन शासक था | इसका साम्राज्य गहोरा के पूर्व में गंगा-यमुना दोआब तक तथा तलहार में एक पट्टी के रूप में शामिल था | बुल्लार देव के पश्चात् उसका पौत्र वीरम देव (1360-1425) शासक बना | इनके समकालीन शासक कालपी के मालिक

जाफर, मालवा के खिलजी , नागौद के परिहार, , जौनपुर के शर्की सुलतान और दिल्ली में लोदी शासकों का शासन था | इनमें से गहोरा और कालपी राज्य के मध्य हमेशा संघर्ष की स्थिति बानी रहती थी |

वीरम देव के पश्चात नरसिंह देव गद्दी पर बैठा किन्तु इनके बारे में अत्यधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती है | इसके पश्चात् भैचन्द (1470-95) ने शासन सत्ता संभाली जिसने कालिंजर,प्रयाग,काशी, गया, बांधवगढ़, सरगुजा तक अपने साम्राज्य का विस्तार किया था |

भैचन्द के पश्चात शालिवाहन देव (1495-1500 ईस्वी) ने सत्ता संभाली इसके समय में बघेल शासकों और सिकंदर लोदी के बीच मित्रवत सम्बन्ध बना | इसके उत्तराधिकारी वीरसिंह देव (1500-40 ईस्वी) तक लोदियों के साथ सौहार्द्र का सम्बन्ध बना रहा | इसके पश्चात वीरभानू गद्दी पर बैठा | उसके समय में शेरशाह सूरी ने उत्तर भारत की राजनीति में प्रभुसत्ता स्थापित कर रखा था | शेरशाह सूरी और वीरभानू के मध्य संघर्ष हुआ | इसका कारण था वीरभानू द्वारा शेरशाह का अधिपत्य न स्वीकार किया जाना |[5]

वीरभानु के पश्चात राजा रामचंद्र देव (1555 -1592 ईस्वी) सिंहासनारूढ़ हुए | वीरभानु ने अपने जीवन काल में ही सत्ता रामचंद्र को सौंप दी | रामचंद्र की माता का नाम राजमती था |

(अथोपकारिकां गत्वा राज्यचर्चापरो: नृप: |
काले राजमती देवी गर्भप्रसवमिच्छति || [6]

इनके समय अफगानों एवं मुगलों के साथ घोर शत्रुता प्रारम्भ हुई | बघेल शासक राजा रामचंद्र ने अफगान शासक इब्राहीम सूर को परास्त कर उसे गिरफ्तार कर लिया | राजा द्वारा उसके साथ सहानुभूति पूर्वक व्यवहार किया | यह सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार मुगलों के साथ संघर्ष को बढ़ावा देता है | इसके पूर्व राजनीतिक परिस्थितियों को देखा जाए तो बघेलों एवं मुगलों के संबंध मुगल शासक हुमायूं के समय ठीक था | यह सम्बन्ध अकबर के समयसे बिगड़ता गया क्योंकि अफगान विरोधी गाजी खां एवं उसके साथी जो रामचंद्र के नियंत्रण में थे | उसे अकबर ने मुक्त करने की बात कही तो उसने मना कर दिया जो अकबर और राजा रामचंद्र के बीच युद्ध का कारण बना शासक अकबर के कड़ा-मानिकपुर के सूबेदार एवं बघेल शासक राजा रामचंद्र के मध्य बघेलों की राजधानी भट्ट-गहोरा में युद्ध हुआ | युद्ध में राजा रामचंद्र पराजित हुआ और गहोरा से भागकर बांधवगढ़ चले गए | इसके उपरांत इन्होनें घने जंगलों के बीच बांधवगढ़ को राजधानी बनाई और 1564 ईस्वी में बांधवगढ़ की गद्दी पर आसीन हुए | यह राजधानी भौगोलिक दृष्टि से अत्यधिक सुरक्षित थी | मुगल सूबेदार आसफ खान भट्ट-गहोरा की विजय के उपरांत बांधवगढ़ की ओर बढ़ा किंतु बीरबल की मध्यस्थता से अकबर और रामचंद्र के मध्य समझौता हो गया | फलस्वरूप अकबर ने आसफ खान को बांधवगढ़ से वापस लौटने का आदेश दिया | रामचंद्र ने अकबर अधीनता अवश्य स्वीकार कर ली किंतु कभी भी मुग़ल दरबार में उपस्थित नहीं हुआ | राजा रामचंद्र ने अपने पुत्र को अकबर के दरबार में भेजा | 1592 में रामचंद्र की मृत्यु के पश्चात वीरभद्र को राजा बनाकर बांधवगढ़ भेजा गया किंतु रास्ते में पालकी से गिरने के कारण उसकी मृत्यु हो गई | मृत्यु के समय उसका पुत्र विक्रमादित्य नाबालिक था |

मुगलों के लगातार दबाव और आपसी कलह के कारण बघेल शासक विक्रमादित्य ने राजधानी बांधवगढ़ से रीवा स्थानांतरित कर दी | इसके बाद से बघेलखण्ड क्षेत्र मध्य प्रदेश में शामिल होने तक रीवा ही राजधानी रही | विक्रमादित्य के गद्दी पर बैठते ही राज्य में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई | दूसरी तरफ बांधवगढ़ के सुदृढ़ एवं सुरक्षित किले को प्राप्त करने के लिए अकबर की महत्वाकांक्षा और बढ़ गई | इसके लिए उसने पात्रदास अधिकार देकर बांधवगढ़ पर नियंत्रण करने के लिए भेजा | उसने दुर्ग पर अधिकार कर वीरभद्र के दूसरे पुत्र दुर्योधन जो कि एक रखेल से उत्पन्न हुआ था को बांधवगढ़ पर शासन करने का अधिकार दे दिया |

1605 ईस्वी में अकबर की मृत्यु के पश्चात जहांगीर के शासनकाल में विक्रमादित्य को राजा बनाकर बांधवगढ़ भेजा गया | विक्रमादित्य बांधवगढ़ न जाकर रीवा चले गए और बिछिया तथा बीहड़ नदी के संगम पर सलीमशाह द्वारा अर्धनिर्मित किले का पुनर्निमाण कराकर रीवा को राजधानी बनाकर शासन करना प्रारम्भ किया | यद्यपि राजा विक्रमादित्य बांधवगढ़ को प्राप्त करने का बार-बार प्रयास करते रहे किन्तु मुग़ल शासक जहांगीर उन्हें दण्डित करने के लिए कछवाहा शासक मानसिंह को भेजा किन्तु विक्रमादित्य को मुगलों की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी और बांधवगढ़ का इलाका मानसिंह को पुरस्कार स्वरूप देना पड़ा | इस समय तक बघेल शासको के हाथ से भट्ट-गहोरा, कालिंजर तथा बांधवगढ़ निकलकर मुगलों के अधीन हो गए |

राजा विक्रमादित्य की 1624 ईस्वी में मृत्यु के बाद इनके पुत्र अमर सिंह (1624 - 1640 ईस्वी) उत्तराधिकारी बने | इनका शासनकाल राजनीतिक उथल-पुथल का था किंतु मुगल शासक शाहजहां के अति निकट होने के कारण इन्होंने बुंदेला शासक जुझार सिंह के विद्रोह को दबाया | इस कारण विंध्य क्षेत्र की दो रियासतें अर्थात बुंदेलखंड और बघेलखंड के मध्य संघर्ष प्रारंभ हुआ जो संघर्ष अनूप सिंह (1640-1660 ई.) के साथ भी चलता रहा | इसके आगे अनिरुद्ध सिंह (1704 -09 ईस्वी) और मुगल शासक औरंगजेब के बीच निकट

सम्बन्ध बने रहे | जब अवधूत सिंह (1709-55 ईस्वी) राजा बने तब ,उस समय पिता की मृत्यु के समय इनकी आयु महज 6 माह की थी ,कम आयु के कारण रियासत के रुष्ट सरदारों ने राज्य में अव्यवस्था फैला दी जिसका फायदा बुंदेलों ने उठाया | चूंकि नागौद , मैहर आदि बघेलों की रियासतों पर पहले ही बुंदेलों ने अधिकार कर लिया था | इसके बाद से पन्ना के बुंदेला शासक हृदयशाह ने रीवा पर आक्रमण किया किंतु मुगल शासको के हस्तक्षेप के कारण हृदयशाह को रीवा राज्य को छोड़ना पड़ा | उसने बिरसिंहपुर और चित्रकूट को जीत कर अपने अधीन कर लिया था |

बघेलखण्ड की राजनीति में राजा अजीत सिंह (1755-1809 ईस्वी) के समय में बघेलों की राजनैतिक स्थिति और भी खराब हो गई | इसका मुख्य कारण था अजीत सिंह के शासन काल में मुगल तथा मराठे दोनों कमजोर हो गए | अंग्रेजों ने अपनी शक्ति के माध्यम से अंग्रेजी साम्राज्य का विस्तार करने में लग गए | 1802 ई तक राजा अजीत सिंह पूरी तरह से अंग्रेजी सरकार के स्वामित्व में नहीं थे | 1803 ई.में मराठा साम्राज्य के हस्तक्षेप के कारण पुनः ब्रिटिश हुकूमत एवं बघेलों के बीच संधि का प्रयास हुआ किन्तु फिर से समझौता नहीं हो सका | समझौता इस लिए नहीं हो सका कि मराठों और बघेलों के मध्य विवाद था | वहीँ दूसरी तरफ मराठों और अंग्रेजों के मध्य भी विवाद था जब रीवा के समीप मुकुंदपुर में ब्रिटिश सरकार ने अपनी सेना नियुक्त की तब उस स्थिति में बघेलों ने सेना रखे जाने का किसी भी प्रकार का विरोध नहीं किया और न ही कोई संधि समझौता किया |

महाराजा जय सिंह (1809-33 ईस्वी) का शासन काल विंध्य क्षेत्र में प्रशासन की दृष्टिकोण से एक विभाजक रेखा है | 1809 ईस्वी में राज्यारोहण के समय रीवा राज्य की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी | राज्य पर बहुत अधिक कर्ज बढ़ गया था |[7]

ब्रिटिश सरकार और बघेल शासकों के मध्य पारस्परिक नजदीकी संबंध जयसिंह के शासन काल से माना जाता है | 1812 ईस्वी में रीवा राज्य से होकर मराठों के अधीन पिंडारियों की एक टुकड़ी मिर्जापुर में घुसी और वहां लूटपाट की क्योंकि यह क्षेत्र अंग्रेजों के प्रत्यक्ष प्रभाव में था |[8]

अंग्रेज रीवा राज्य पर अधिक नियंत्रण करना चाहते थे | इसलिए पिंडारियों द्वारा की गई लूटपाट की समस्त जिम्मेदारी महाराजा जय सिंह के ऊपर आरोपित कर दी | अंग्रेजों का आरोप था कि वह आंतरिक रूप से पिंडारियों से मिले हुए है और अपने राज्य में पिंडारियों को संरक्षण दिया है | [9]

ब्रिटिश सरकार ने रीवा राज्य पर दबाव में लाकर 1812 ईस्वी में संधि कर ली | यह संधि ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी और रीवा महाराजा जयसिंह के साथ समपन्न हुई जिसका मुख्य उद्देश्य था,सुरक्षा एवं मित्रता का संबंध स्थापित करना | यद्यपि ब्रिटिश सरकार द्वारा संधि का प्रस्ताव पूर्व में ही राजा अजीत सिंह के समय में ही रखा जा चुका था किन्तु उस संधि का क्रियान्वयन नहीं हो पाया | यह संधि बहुत दिनों तक क्रियान्वित नहीं रह सकी फलस्वरूप 1813 और 1814 ईस्वी में अन्य पूरक संधि करनी पड़ी | इसका कारण था की रीवा महाराजा द्वारा क्षति पूर्ति की धनराशि को समय पर ब्रिटिश सरकार को अदा न कर पाना |

रीवा राज्य पर संधि के माध्यम से नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य था कि महाराष्ट्र और संयुक्त प्रांत के मध्य रीवा राज्य को बफर स्टेट के रूप में स्थापित करना | इन संधियों के द्वारा रीवा राज्य के बाह्य मामलों पर अंग्रेजी सरकार का नियंत्रण स्थापित होना किन्तु आंतरिक मामलों में अभी भी वे स्वतन्त्र थे | इन संधियों के माध्यम से किसी भी बाह्य आक्रमण के होने पर ब्रिटिश सेना रीवा रियासत की मदद करेगी | इस मदद के फलस्वरूप ब्रिटिश सेना का संपूर्ण खर्च का वहन रीवा राज्य द्वारा किया जाएगा | यदि रीवा राज्य और अंग्रेजी सरकार की सेनाएं एक साथ किसी युद्ध में भाग लेंगी तो ब्रिटिश सेनापति के अधीन, रीवा रियासत के सेनापति को सैनिक कार्यों का संचालन करना होगा |

महाराजा जयसिंह के तीन पुत्र थे विश्वनाथ सिंह,लक्षमण सिंह और बलभद्र सिंह | परंपरा के अनुसार सबसे बड़े पुत्र राजा विश्वनाथ सिंह (1833-54 ईस्वी) को राजगद्दी प्राप्त हुई | उनकी उपलब्धियां राजा बनने से पूर्व युवराज काल में ही देखी जा सकती है | इसका प्रत्यक्ष प्रमाण 1814 की अंग्रेजी सरकार के साथ संपन्न हुई पूरक संधि में वे अपने पिता के साथ संयुक्त रूप से हस्ताक्षर किए | इन्होंने युवराज के रूप में महाराज जय सिंह की प्रशासनिक, राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया | राज्य विस्तार के रूप में इन्होंने वेणुवंशी ठाकुर प्रताप सिंह को पराजित किया| इसके पश्चात् मऊ नईगढ़ी के सेंगरों द्वारा किए जा रहे अत्याचार को समाप्त किया गया | वर्दी के चंदेल अजीत सिंह को अपने समक्ष समर्पण करने के लिए मजबूर किया, जिरौहा के साथ-साथ बांधवगढ़ पर अधिकार करना, रामनगर पर अधिकार कर अपनी क्षमता एवं योग्यता का प्रमाण प्रस्तुत करना आदि महत्त्वपूर्ण कार्य किए | महाराजा विश्वनाथ सिंह जब रीवा राज्य की गद्दी पर आसीन हुए तो सर्वप्रथम मऊ के सेंगर राजा अनिरुद्ध सिंह की गढ़ी पर नियंत्रण कर मऊ को रीवा रियासत में मिला लिया | [10]

इसके बाद पुनः नई गढ़ी के सेंगर ठाकुर छत्रधारी सिंह के ऊपर आक्रमण कर उन्हें अपनी नियंत्रण में किया और उनको बकाया राशि और कर अदा करने के लिए मजबूर कर दिया | महाराज द्वारा मड़वास,मझौली, महखोर, पथरोला के अधिकांश भागों को अपने नियंत्रण में कर रीवा राज्य के अंतर्गत मिलाया | इस प्रकार उनके राज्य में निरंतर वृद्धि हुई | जहां तक अंग्रेजों के साथ सम्बन्ध था वह मैत्रीपूर्ण संबंध जो महाराजा जयसिंह के समय से चला रहा था पूर्ववत रही | अभी भी अंग्रेज, रीवा राज्य के आंतरिक मामलों व प्रशासन में किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सके जो उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धियों में शामिल रही | इनके समय की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना थी युवराज रघुराज सिंह का विद्रोह जो 1842 घटी | युवराज रघुराज सिंह के विद्रोह का मुख्य कारण था कि वे स्वय राजा बनना चाहते थे किन्तु युवराज को समझाइश देकर शांत किया गया | इसके पश्चात् राज्य के षड्यंत्रकारियों को राज्य से बाहर निकल दिया गया |[11]

महाराजा रघुराज सिंह (1854-1880ईस्वी) महाराजा रघुराज सिंह का जन्म 1823 ईस्वी में महाराजा विश्वनाथ सिंह के घर हुआ था | विश्वनाथ सिंह की मृत्यु के पश्चात् 1854 ईस्वी में इनका राज्याभिषेक हुआ | राज्याभिषेक के उपरांत महाराज द्वारा राज्य की चतुर्दिक समस्यायों के समाधान के लिए निरंतर प्रयास किया गया | सर्वप्रथम राज्य की आर्थिक व्यवस्था में सुधार के लिए समस्त वस्तुओं की सूची विभिन्न स्थानों पर पट्टिकाओं पर लगाकर टंगवा दी गयी | उनके शासनकाल में भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण घटना घटी | वह थी 1857 की क्रांति और इस क्रांति में महाराज ने अंग्रेजों को समर्थन दिया था या क्रांतिकारियों का यह बात स्पष्ट नहीं है |

इस संबंध में स्पष्ट कहना कठिन है किंतु इतिहासकारों का मानना है कि इन्होंने साम्राज्य की सुरक्षा की दृष्टिकोण से बाह्य रूप से अंग्रेजों का समर्थन किया किंतु आंतरिक रूप से क्रांतिकारी के प्रति सहानुभूति रखते थे | उनके शासनकाल में क्रांति के दरम्यान आरा (बिहार) के बाबू कुंवर सिंह ने 5000 सैनिकों के साथ जिसमें असंतुष्ट पठान भी शामिल थे के साथ रीवा की तरफ बढे | क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए रीवा रियासत की जनमानस को प्रेरित करने के लिए आए और जब वे मऊगंज से रीवा प्रवेश करने के दौरान वहां के तहसीलदार ने इनका विरोध किया था तब इन्होंने रास्ता बदल कर बांदा के रास्ते से प्रवेश करने का प्रयास किया और इसी रियासत के डभौरा के रंजीत राय दीक्षित ने इनका स्वागत किया | महाराज रघुराज सिंह प्रशासनिक दक्षता में निपुण थे |[1] रीवा राज्य की सैन्य व्यवस्था के बारे में वायसराय लॉर्ड कर्जन तथा ब्रिटिश सैन्य अधिकारी किचनर ने आश्चर्य व्यक्त किया था | महाराज ने सैनिकों को यूरोपीय ढंग से प्रशिक्षित किया था | महाराज ने अपनी सैन्य टुकड़ी में मैदानी, पहाड़ी, दुर्ग और रिजर्व सेना को रखा था जो सैन्य गतिविधियों के संचालन को कुशलतापूर्वक निर्वहन करती थी |

कुंवर सिंह के रीवा आगमन के बाद से ही यहाँ पर क्रांति में तीव्रता दिखाई देती है | इसका प्रभाव दक्षिण तेलंगाना ब्राह्मण को लेफ्टिनेंट आसबॉर्न द्वारा गिरफ्तार किया जाना | तिलंगा की गिरफ्तारी के विरोध में रीवा के सरदार ठाकुर राणमत सिंह, पंजाब सिंह, धीर सिंह, श्याम शाह, गरुण सिंह, भरत सिंह जैसे क्रांतिकारियों ने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ विरोध करना प्रारम्भ किया | इन्हीं के समय मैहर रियासत की जागीर विजयराघौगढ़ के राजा सरजूप्रसाद ने ब्रिटिश सरकार का पुरजोर विरोध किया | इसी क्रांति में विजयराघौगढ़ का सब कुछ अंग्रेजों द्वारा नष्ट कर दिया गया | क्रांति के पश्चात रीवा रियासत की प्रशासनिक नियंत्रण में शिथिलता आई | जागीरदारों को राजाओं से स्वतंत्र कर दिया गया |

महाराज वेंकटरमण सिंह (1880-1918 ईस्वी)- इनका जन्म 1876 ईस्वी में शिवदानकुंवरि बड़ी चन्देलिन रानी के गर्भ से ग्राम कछियाटोला कृपालपुर में हुआ था | इनका राज्याभिषेक 1880 में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया के पोलिटिकल एजेंट कर्नल वार्कली के द्वारा हाथ पकड़कर गद्दी पर बिठाया गया | गद्दी मिलने के समय कैप्टन बार तथा राज्य के कई सरदार उपस्थित थे | पिता की मृत्यु के समय इनकी आयु महज 4 वर्ष की थी | ब्रिटिश सरकार ने राज्य का प्रशासन अपने हाथों में ले लिया और यह व्यवस्था 1880 से 1895 तक चलती रही | परिणामस्वरूप दरबारियों के विचार -विमर्श के उपरांत 1895 में राज्य का कार्यभार महाराज वेंकटरमण सिंह सौंप दिया गया | राजसिंहासन पर बैठने के उपरान्त उन लोगों के खिलाफ कार्रवाई का आदेश दिया जिन्होंने गद्दी प्राप्त करते समय ब्रिटिश सरकार के समर्थन में सहमति दी थी |

महाराज वेंकटरमण में 1911 ईस्वी में जॉर्ज पंचम के आने के उपलक्ष्य में दिल्ली दरबार का आयोजन किया गया जिसमें महाराज अपने लाव-लश्कर के साथै दिल्ली गए | महाराजा गुलाब सिंह (1922-46 ईस्वी)- इनका जन्म 1903 ईस्वी में हुआ था | महाराज वेंकट रमण की मृत्यु के समय गुलाब सिंह अवयस्क थे | युवराज काल में इन्हें राज्य की सेना का लेफ्टिनेंट नियुक्त किया गया | वे शिविर में एक साधारण सैनिक की भांति रहते थे |[13] उस समय तक अर्थात 1919 - 22 तक रीवा राज्य का प्रशासन रीजेंसी समिति को सौंपा गया | महाराज के वयस्क होने पर रीजेंसी समिति को समाप्त कर दी गई तथा एक नई समिति गठन किया गया | यह समिति महाराज को सलाह मशविरा देने का कार्य करती थी |

रीवा राज्य के विकास के लिए 1932 में पुनः इस समिति को समाप्त कर एक नवीन समिति पुनर्गठित की गई | इसमें एक अध्यक्ष वेकफील्ड सहित अन्य चार सदस्य थे फिर आगे एक राज्य परिषद का गठन किया गया | इसमें स्वयं महाराज अध्यक्ष थे |
महाराज द्वारा 1934 ईस्वी में पवाई कानून तथा 1935 में मालगुजारी कानून लागू किया जिसके कारण उनमें असंतोष की भावना व्याप्त थी | ये पवाईदार महाराज के खिलाफ षडयंत्र करने प्रारम्भ कर दिए | दूसरी तरफ़ इनका ब्रिटिश सरकार से भी अनबन च्जल रही थी | अंग्रेजों को मौके की तलाश थी और उन्हें मौका मिल गया | 1937 ईस्वी में चिकित्सा के लिए महाराज कलकत्ता जा रहे थे किन्तु रास्ते में इनके छलक उमाप्रसाद की तथा शंकरप्रसाद की गोली मारकर हत्या कर दी गई |[14]

ब्रिटिश सरकार द्वारा निरंतर रीवा रियासत के बाह्य एवं आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप के कारण 1942 से 1946 के मध्य अंग्रेजी सरकार और महाराजा गुलाब सिंह के बीच प्रत्यक्ष संघर्ष प्रारम्भ हो गया | इस कारण से अंग्रेज उन्हें सत्ता से हटाना चाहती थी और उन्हें इंदौर बुलाकर उनके ऊपर मुकदमा चलाया गया | मुकदमें में इन्हें दोषी नहीं ठहराया गया और बरी कर दिया | अतः ब्रिटिश सरकार महाराज को सत्ता देने के लिए विवश हो गई सत्ता सँभालने के पश्चात वे कुछ शर्तों के साथ रीवा में शासन किया | 16 अक्टूबर 1945 ईस्वी में दशहरा के अवसर पर भाषण के दौरान रियासत में पूर्ण उत्तरदायी शासन की घोषणा कर दी | इसके पश्चात महाराज को सत्ता से हटा दिया और इनके पुत्र मार्तण्ड सिंह को राजसिंहासन सौंप दिया | सिंहासन प्राप्ति के बावजूद वे औपचारिक रूप से शासन करते रहे | इनका राज्याभिषेक पिता महाराज गुलाब सिंह के जीवन काल में ही हो गया था | महाराज मार्तण्ड सिंह के शासन काल में प्रजामण्डल और चावल वसूली आंदोलन चलाया गया | इन्होनें केवल दो वर्ष शासन किया था और पूर्व प्रचलित प्रशासनिक व्यवस्था के स्थान पर नवीन शासन स्थापित करने का प्रयास किया किन्तु जल्द ही इन्होंने उत्तरदायी शासन की घोषणा कर दी | [15]
महाराज द्वारा सरवप्रथम एक संवैधानिक सुधार समिति बनाई | इस समिति का कार्य था लोकप्रिय शासन प्रणाली का बनाना | प्रारम्भ में इस समिति के अध्यक्ष कृष्णा स्वामी अय्यर थे किन्तु बाद में सर हरी सिंह गौर को अध्यक्ष बनाया गया | इस समिति ने सितम्बर 1946 से कार्य करना प्रारम्भ की और 27 मई 1947 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की | इस प्रस्तुत रिपोर्ट में रीवा राज्य की प्रजा को उत्तरदायी शासन के योग्य बताया किन्तु देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात् समिति की रिपोर्ट क्रियान्वित नहीं हो सकी | [16]

निष्कर्ष :-

बघेलों के राजनीतिक विकास में विभिन्न राजवंशों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। रीवा राज्य के परिप्रेक्ष्य में बघेल राजवंश का इतिहास न केवल सैन्य विजयों तक सीमित है, बल्कि यह कूटनीतिक संतुलन ,सामरिक सम्बन्ध ,प्रशासनिक सुदृढ़ता का एक प्रमुख उदाहरण है। बघेल राजाओं की भूमिका एक 'संरक्षक ' और 'निर्माता' दोनों के रूप में रही है। उन्होंने निरंतर बदलते राजनीतिक परिदृश्य विदेशी आक्रमण ,मुगल, मराठा और ब्रिटिश सम्बन्ध , में अपनी क्षेत्रीय पहचान को न केवल सुरक्षित रखा, अपितु उसे एक संगठित राजनीतिक इकाई के रूप में विकसित भी किया। शोध कार्य की दृष्टि से, बघेलों का शासनकाल क्षेत्रीय स्वायत्तता और केंद्रीय सत्ता के बीच संतुलन बनाने की कला का महत्वपूर्ण बिंदु है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. बघेल,विक्रम सिंह,बघेलखण्ड का राजीनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास,प(प्रारम्भ से 1950 तक)शेखर प्रकाशन, इलाहबाद, 203, पृ. 80-82.
2. राधेशरण,बघेलखण्ड का वृहत्तर इतिहास,हिंदी ग्रंथ अकादमी ,भोपाल,मध्य प्रदेश.
3. शर्मा,रूपाणि,बघेलवंश वर्णनम,श्लोक,१ -२.
4. अग्रवाल, कन्हैयालाल, बघेलखण्ड का इतिहास (प्रारम्भ से स्वतंत्रता प्राप्ति तक)भाग-1, बी.आर. पब्लिशिंग कार्पोरेशन, दिल्ली, 2025.पृ.180.
5. इलियट डाउसन ,खण्ड -5,.पृ.198.
6. वीरभानुदय काव्य,7.78.
7. अली,मौलवी रहमान,तवारीख-ए -बघेलखण्ड,पृ.76-77 .
8. रीवा गजेटियर पृ 17.
9. सिंह,जीतन,रीवा राज्य दर्पण,पृ.65 -66.
10. सिंह,जनार्दन,रीवा राज्य का सैनिक इतिहास,पृ 75.

11. अग्निहोत्री,रीवा राज्य का इतिहास ,पृ.43.
12. सिन्हा,दि रिवोल्ट ऑफ 1857 इन बुन्देलखण्ड,पृ.100.
13. बघेल,वीरभानु,रीवा राज्य का इतिहास,पृ.26 .
14. रीवा इंक्वायरी मैजॉरटी रिपोर्ट,पृ.7-8.
15. अग्निहोत्री,रीवा राज्य का इतिहास,पृ.121.
16. सक्सेना,रीवा स्टेट डायरेक्ट्री,पृ.80.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

औद्योगीकरण का भारतीय समाज पर प्रभाव

सुनील कुमार
शोध छात्र–समाजशास्त्र
टी. डी. पी. जी. कालेज, जौनपुर,
संबद्ध–वीर बहादुर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर
डॉ0 हरिओम त्रिपाठी
प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
टी. डी. पी. जी. कालेज, जौनपुर,
संबद्ध–वीर बहादुर सिंह पूर्वाचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

सारांश –
'प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय समाज, विशेषतः ग्रामीण परिप्रेक्ष्य में, औद्योगीकरण के प्रभावों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का मुख्य उद्देश्य औद्योगीकरण द्वारा उत्पन्न सकारात्मक एवं नकारात्मक परिवर्तनों का समग्र मूल्यांकन करना है। विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि औद्योगीकरण ने रोजगार के विविध अवसरों का सृजन किया, महिलाओं की आर्थिक भागीदारी एवं सशक्तिकरण को बढ़ावा दिया, शिक्षा एवं तकनीकी जागरूकता में वृद्धि की तथा जीवन स्तर में सुधार लाया। साथ ही, इसने सामाजिक गतिशीलता, बुनियादी ढाँचे के विकास, नगरीकरण तथा आधुनिक जीवनशैली के प्रसार को भी गति प्रदान की। इसके विपरीत, अध्ययन यह भी दर्शाता है कि औद्योगीकरण के कारण पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं का विघटन, सामाजिक एवं आर्थिक विषमता में वृद्धि, श्रमिकों का शोषण तथा कुटीर उद्योगों का पतन जैसी चुनौतियाँ उभरी हैं। पर्यावरण प्रदूषण, सांस्कृतिक क्षरण, प्रवास, उपभोक्तावाद तथा कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव भी इसके प्रमुख दुष्परिणामों के रूप में सामने आए हैं।
अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि औद्योगीकरण एक द्वैध एवं बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसके प्रभाव संदर्भानुसार भिन्न–भिन्न रूपों में प्रकट होते हैं। इसलिए आवश्यक है कि औद्योगिक विकास को समावेशी, संतुलित एवं सतत नीतिगत ढाँचे के अंतर्गत संचालित किया जाए, जिससे सामाजिक न्याय एवं दीर्घकालिक विकास सुनिश्चित किया जा सके।'

कुंजीभूत शब्द– औद्योगीकरण, आर्थिक विकास, रोजगार सृजन, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक गतिशीलता, तकनीकी जागरूकता, नगरीकरण, सामाजिक विषमता, पर्यावरण प्रदूषण, प्रवास, उपभोक्तावाद, सतत विकास।

औद्योगीकरण का भारतीय समाज पर प्रभाव एक महत्वपूर्ण समाजशास्त्रीय विषय है, जो सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों को समझने का आधार प्रदान करता है। भारत में औद्योगीकरण ने विशेष रूप से ग्रामीण समाज को गहराई से प्रभावित किया है, जहाँ पारंपरिक कृषि–आधारित व्यवस्था के स्थान पर नई आर्थिक गतिविधियों और आधुनिक जीवनशैली का विस्तार हुआ है। इस प्रक्रिया ने समाज को विकास की

दिशा में अग्रसर करते हुए अनेक सकारात्मक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं, जैसे–रोजगार के अवसरों में वृद्धि, शिक्षा एवं तकनीकी जागरूकता का विस्तार, महिलाओं का सशक्तिकरण तथा जीवन स्तर में सुधार।
इसके साथ ही, औद्योगीकरण ने सामाजिक गतिशीलता, नगरीकरण एवं बुनियादी ढाँचे के विकास को भी गति प्रदान की है, जिससे भारतीय समाज मुख्यधारा से अधिक जुड़ सका है। हालाँकि, इस प्रक्रिया के कुछ नकारात्मक प्रभाव भी सामने आए हैं। पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं का विघटन, सांस्कृतिक मूल्यों का क्षरण, सामाजिक एवं आर्थिक असमानता, पर्यावरणीय प्रदूषण तथा श्रमिकों का शोषण जैसी समस्याएँ इसके प्रमुख दुष्परिणाम हैं। इसके अतिरिक्त प्रवास, उपभोक्तावाद एवं कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव ने भी सामाजिक संतुलन को प्रभावित किया है। अतः औद्योगीकरण को एक द्वैध एवं बहुआयामी प्रक्रिया के रूप में समझना आवश्यक है, जिसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पहलुओं का सम्यक् अध्ययन भारतीय समाज के समग्र विकास की दिशा निर्धारित करने में सहायक सिद्ध होता है।

औद्योगीकरण के सकारात्मक प्रभाव –

औद्योगीकरण को समाजशास्त्र में केवल सामाजिक विघटन या चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जाता, अपितु यह सकारात्मक परिवर्तन और समावेशी विकास की भी एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। औद्योगीकरण ने मानव इतिहास में एक नई दिशा दी, जिसमें आर्थिक उन्नति के साथ–साथ सामाजिक गतिशीलता, शिक्षा, स्वास्थ्य, जीवन स्तर और स्त्री सशक्तिकरण जैसे क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण सुधार देखने को मिला। ग्रामीण भारत के संदर्भ में विशेषकर उन क्षेत्रों में जहाँ पारंपरिक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था सीमित लाभ और अवसर प्रदान कर रही थी, औद्योगीकरण ने रोजगार, प्रशिक्षण, उत्पादन और आत्मनिर्भरता की नई संभावनाओं को जन्म दिया। यह खंड उन सकारात्मक प्रभावों को रेखांकित करता है जो ग्रामीण जीवन में औद्योगिक प्रवृत्तियों के प्रवेश के पश्चात परिलक्षित हुए हैं।

1. रोजगार के नए अवसर –

औद्योगीकरण के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक कृषि एवं हस्तशिल्प के अतिरिक्त नए रोजगार स्रोत विकसित हुए हैं। छोटे–मोटे कारखाने, निर्माण कार्य, बुनाई–कढ़ाई उद्योग, प्रसंस्करण इकाइयाँ, कुटीर उद्योग, एवं सेवा क्षेत्र में बढ़ते अवसरों ने ग्रामीण युवाओं के लिए आजीविका के वैकल्पिक माध्यम प्रदान किए हैं। इस प्रक्रिया ने कृषि पर निर्भरता को कम करते हुए आर्थिक विविधता को जन्म दिया है। इससे ग्रामीण परिवारों में स्थायित्व, आर्थिक सुरक्षा, और मासिक आय के रूप में नगद पूंजी का संचय संभव हो सका है।

2. ग्रामीण महिलाओं का सशक्तिकरण –

औद्योगीकरण के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाएँ अब पारंपरिक घरेलू दायरे से निकलकर आर्थिक गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी निभा रही हैं। विशेष रूप से वस्त्र उद्योग, पैकेजिंग, खुदरा व्यवसाय, स्वयं सहायता समूहों और लघु उत्पादन इकाइयों में उनकी सहभागिता बढ़ी है।[1]
इससे महिलाओं में आत्मविश्वास, निर्णय लेने की क्षमता, सामाजिक पहचान और पारिवारिक सहभागिता में वृद्धि हुई है। आर्थिक स्वतंत्रता के कारण अब वे परिवार के निर्णयों में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं।

3. शिक्षा और तकनीकी जागरूकता में वृद्धि –

औद्योगीकरण से प्रेरित रोजगार अवसरों ने ग्रामीण समाज में शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण को बदला है। अब शिक्षा केवल साक्षरता तक सीमित न रहकर तकनीकी दक्षता, व्यावसायिक प्रशिक्षण और आधुनिक ज्ञान की ओर उन्मुख हो गई है। टाण्डा जैसे क्षेत्रों में औद्योगिक गतिविधियों के चलते युवा अब तकनीकी प्रशिक्षण केंद्रों, कंप्यूटर शिक्षा, डिजिटल विपणन एवं कौशल विकास केंद्रों की ओर आकर्षित हो रहे हैं। इससे समाज में ज्ञान का प्रसार और व्यावसायिक उपयुक्तता की भावना विकसित हो रही है।

4. जीवन स्तर में सुधार –

औद्योगीकरण के फलस्वरूप प्राप्त आय और संसाधनों ने ग्रामीण समाज के जीवन स्तर में स्पष्ट सुधार किया है। आवास की गुणवत्ता, पोषण स्तर, वस्त्र, स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुँच, तथा उपभोग वस्तुओं की उपलब्धता में वृद्धि हुई है। गृह उपयोगी उपकरण, मोबाइल फोन, मोटरसाइकिल, एलईडी लाइट, रसोई गैस, आदि का प्रयोग अब आम ग्रामीण परिवारों के जीवन का हिस्सा बन चुका है। इससे जीवन अधिक सुविधाजनक, संगठित और गतिशील हुआ है।

5. सामाजिक गतिशीलता एवं वर्गीय प्रगति–

औद्योगीकरण ने जातीय सीमाओं से हटकर आर्थिक और व्यावसायिक योग्यता को सामाजिक पहचान का आधार बनाया है। इससे निम्नवर्गीय एवं पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों को भी आर्थिक प्रगति का अवसर मिला है। वे अब अपने व्यवसाय, उद्योग या कौशल के माध्यम से सामाजिक श्रेणी में ऊपर उठने की प्रक्रिया में सम्मिलित हो सके हैं। इससे सामाजिक गतिशीलता और सामाजिक समावेशन को बल मिला है।

6. नगरीकरण और आधुनिकता की ओर अग्रसरता –

औद्योगीकरण ने ग्रामीण क्षेत्रों में नगरीय सुविधाओं और आधुनिक जीवन शैली की ओर प्रवृत्त किया है। अब गाँवों में बेहतर सड़कें, परिवहन साधन, बाजार व्यवस्था, संचार साधन, बैंकिंग सेवाएँ, और डिजिटल सेवाओं का विस्तार देखा जा रहा है। इससे ग्राम केवल कृषि केंद्र नहीं, बल्कि नवीन शहरी–ग्रामीण संबंधों का केंद्र बनने लगे हैं। ग्रामीण जनता अब राज्य, शासन और बाजार की मुख्यधारा में अधिक सक्रिय रूप से भाग ले रही है।

7. सामुदायिक संगठन और सहकारिता का विकास –

औद्योगीकरण ने ग्रामीण समाज में संगठनात्मक क्षमता को भी बढ़ाया है। अब महिलाएँ, किसान, बेरोजगार युवक एवं कारीगर स्वयं सहायता समूह, सहकारी समितियों, उत्पादक संघों और प्रशिक्षण संस्थानों के माध्यम से सामूहिक विकास के प्रयास कर रहे हैं।

इन संगठनों के माध्यम से न केवल उत्पादन और विपणन के अवसर बढ़े हैं, बल्कि लोगों में नेतृत्व, संगठन प्रबंधन, और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना भी विकसित हो रही है।

8. तकनीकी नवाचारों की स्वीकार्यता –

औद्योगीकरण के चलते ग्रामों में नई तकनीकों के प्रति जिज्ञासा और अपनाने की प्रवृत्ति तेजी से बढ़ी है। अब लोग कृषि में मशीनों का प्रयोग, मोबाइल ऐप्स के माध्यम से जानकारी प्राप्त करना, उत्पादों की ऑनलाइन बिक्री, तथा तकनीकी सहायता का लाभ लेना प्रारंभ कर चुके हैं।

इस प्रवृत्ति ने ग्राम को प्रौद्योगिकी–सक्षम समाज में परिवर्तित करने की दिशा में आगे बढ़ाया है।

9. स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार –

औद्योगीकरण ने ग्रामीण समाज में स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुँच को आसान बनाया। जहाँ पहले प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र या दवाइयों की उपलब्धता सीमित थी, वहीं अब सरकारी व गैर–सरकारी संगठनों द्वारा अस्पताल, दवा वितरण केंद्र, एंबुलेंस सेवाएँ और मातृ–शिशु देखभाल सुविधाएँ उपलब्ध कराई जा रही हैं। इससे शिशु मृत्यु दर में कमी और जीवन प्रत्याशा में वृद्धि देखी जा रही है।

10. बुनियादी ढाँचे का विकास –

औद्योगिक गतिविधियों ने गाँवों में सड़कों, बिजली, पानी, परिवहन और संचार जैसी आधारभूत सुविधाओं का विस्तार किया। बिजली की उपलब्धता से न केवल घरेलू जीवन सरल हुआ बल्कि लघु उद्योगों, शिक्षा केंद्रों और आधुनिक कृषि पद्धतियों का विकास भी संभव हुआ।

11. सांस्कृतिक आदान–प्रदान और नई जीवनशैली –

प्रवासी मजदूरों और औद्योगिक संपर्कों के माध्यम से ग्रामीण समाज विभिन्न सांस्कृतिक अनुभवों से परिचित हो रहा है। इससे सामाजिक सहिष्णुता, खुलापन और आधुनिक जीवनशैली की ओर झुकाव बढ़ा है। पारंपरिक और आधुनिक मूल्यों का मिश्रण नई ग्रामीण पहचान गढ़ रहा है।

12. युवाओं में आत्मनिर्भरता और नवाचार की भावना –

औद्योगीकरण ने ग्रामीण युवाओं में आत्मनिर्भर बनने और नए प्रयोग करने की मानसिकता को बढ़ावा दिया। अब युवा केवल रोजगार तलाशने तक सीमित नहीं, बल्कि उद्यमिता, स्टार्टअप, और स्थानीय स्तर पर उद्योग स्थापित करने की ओर भी कदम बढ़ा रहे हैं।

13. पर्यावरणीय जागरूकता और सतत विकास की सोच –

औद्योगीकरण से उत्पन्न चुनौतियों ने ग्रामीण समाज में पर्यावरण संरक्षण की चेतना भी जगाई है। अब जल संरक्षण, स्वच्छ ऊर्जा, वृक्षारोपण और कचरा प्रबंधन जैसे मुद्दों पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। इससे सतत विकास की अवधारणा ग्रामीण विमर्श का हिस्सा बन रही है।

14. स्त्री–पुरुष समानता की ओर अग्रसरता –

महिलाओं की आर्थिक भागीदारी ने लिंग–आधारित भेदभाव को कम करने में मदद की है। अब परिवारों में निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं का महत्व बढ़ा है और समाज में स्त्री–पुरुष समानता के विचार को अधिक स्वीकृति मिल रही है।

15. वैश्विक दृष्टिकोण और आकांक्षाओं का विकास –

औद्योगिक संपर्क और तकनीकी प्रसार ने ग्रामीण लोगों को वैश्विक स्तर पर नई संभावनाओं और जीवनशैली से परिचित कराया है। अब ग्रामीण समाज भी आधुनिक शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाओं, उपभोग वस्तुओं और तकनीकी साधनों की आकांक्षा रखता है। यह आकांक्षा उन्हें प्रगति की ओर प्रेरित करती है।[2]

औद्योगीकरण के नकारात्मक प्रभाव– यद्यपि औद्योगीकरण को आर्थिक समृद्धि, आधुनिकता और सामाजिक विकास का वाहक माना गया है, तथापि इसके द्वैध प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। जिस प्रकार औद्योगीकरण ने ग्रामीण क्षेत्रों को नए अवसर प्रदान किए हैं, उसी प्रकार उसने पारंपरिक संरचनाओं, जीवन मूल्यों और पर्यावरणीय संतुलन को भी गहराई से प्रभावित किया है। ग्रामीण भारत, जो अपने सहकार, सामाजिक ताने–बाने, सांस्कृतिक परंपराओं और पर्यावरणीय सामंजस्य के लिए जाना जाता था, औद्योगीकरण की तीव्र गति से कई प्रकार की चुनौतियों और अंतर्विरोधों का शिकार हो गया है। यह खंड इन्हीं प्रभावों का विश्लेषण समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से करता है।

1. पारंपरिक जीवनशैली का विघटन –

औद्योगीकरण ने ग्रामीण समाज की परंपरागत जीवनशैली, कार्य संस्कृति और सामाजिक संबंधों को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। संयुक्त परिवारों के स्थान पर एकल परिवार की वृद्धि, पीढ़ीगत मूल्य संघर्ष, और पारस्परिकता की भावना में कमी स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। जहाँ पहले सामाजिक संबंध आत्मीयता, सहयोग और सामूहिकता पर आधारित थे, वहीं अब उनमें स्वार्थ, औपचारिकता और प्रतियोगिता ने स्थान ले लिया है। इससे सामाजिक एकता और सामुदायिक भावना में ह्रास हुआ है।

2. सामाजिक विषमता और वर्गीय विभाजन –

औद्योगीकरण के प्रभाव से ग्रामीण समाज में एक नया आर्थिक और सामाजिक वर्ग विभाजन उत्पन्न हुआ है। जिन परिवारों को औद्योगिक विकास से जुड़ने का अवसर मिला, वे आर्थिक रूप से सशक्त हुए, जबकि अन्य वर्ग सामाजिक और आर्थिक रूप से पीछे छूट गए। इससे सामाजिक विषमता, जलन, असंतोष और परोक्ष वर्ग संघर्ष की स्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं। विशेषकर भूमिहीन, अशिक्षित और महिलाओं की स्थिति अब भी असमान बनी हुई है।

3. श्रमिकों का शोषण और असंगठित रोजगार –

औद्योगीकरण के साथ आए नए रोजगार सभी के लिए स्थायित्व, सुरक्षा और सम्मान नहीं ला पाए। अधिकांश ग्रामीण श्रमिक असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ उन्हें न्यूनतम वेतन, सामाजिक सुरक्षा, कार्यस्थल सुरक्षा और स्थायी नियुक्ति जैसे अधिकार प्राप्त नहीं हैं। इस असंगठितता का सबसे अधिक शिकार महिलाएँ और युवा होते हैं, जो अल्प वेतन में लंबे समय तक कार्य करते हैं और शोषण, भेदभाव और अस्थिरता का सामना करते हैं।

4. पारंपरिक हस्तशिल्प और कुटीर उद्योगों का पतन –

ग्रामीण क्षेत्रों में सदियों से फलते–फूलते कुटीर उद्योग, हथकरघा, बुनाई, मिट्टी के बर्तन, लकड़ी शिल्प जैसे व्यवसायों को औद्योगिक मशीनों और बड़े पैमाने के उत्पादन ने प्रतिस्पर्धा से बाहर कर दिया है। इससे परंपरागत कारीगर वर्ग बेरोजगार हुआ है और उनकी सांस्कृतिक पहचान एवं कौशल पर संकट उत्पन्न हुआ है। युवा पीढ़ी इन पारंपरिक व्यवसायों को अपनाने में रुचि नहीं लेती, जिससे ये शिल्प लुप्त होने की कगार पर हैं।

5. पर्यावरणीय असंतुलन और प्रदूषण –

औद्योगीकरण के कारण पर्यावरणीय संकट भी गंभीर रूप से सामने आया है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित फैक्ट्रियों और निर्माण स्थलों से उत्पन्न ध्वनि, वायु और जल प्रदूषण ने न केवल जैव विविधता को क्षति पहुँचाई है, बल्कि ग्रामीणों के स्वास्थ्य, जल स्रोतों और कृषि भूमि को भी नुकसान पहुँचाया है। पेड़–पौधों की अंधाधुंध कटाई, भूमि का औद्योगिक उपयोग, और नालियों में अपशिष्ट जल बहाने से मिट्टी की उर्वरता, नदियों की स्वच्छता और पशु–पक्षियों का जीवन चक्र प्रभावित हुआ है।

6. सांस्कृतिक क्षरण और पश्चिमीकरण –

औद्योगीकरण के साथ आए संचार माध्यम, बाजारीकरण, उपभोक्तावाद और नगरीकरण ने ग्रामीण समाज में पश्चिमी जीवनशैली और सोच को प्रवेश दिलाया है। अब पारंपरिक पोशाक, भाषा, रीति–रिवाज, खानपान और पारिवारिक मान्यताएँ धीरे–धीरे नगरीय प्रभाव में क्षीण हो रही हैं। त्योहारों का बाजारीकरण, विवाह में भव्यता की होड़, लोक संस्कृति की उपेक्षा, और सादगी की जगह आडंबर की प्रवृत्ति बढ़ी है। इससे सामाजिक असंतुलन, मूल्य संकट और सांस्कृतिक खोखलापन उत्पन्न हुआ है।

7. महिलाओं के प्रति नए प्रकार की चुनौतियाँ –

यद्यपि महिलाओं की आर्थिक भागीदारी बढ़ी है, परंतु उनके समक्ष नए प्रकार की सामाजिक एवं कार्यस्थलीय चुनौतियाँ भी उत्पन्न हुई हैं। कम वेतन, यौन उत्पीड़न, सामाजिक सुरक्षा की कमी, और घरेलू काम के साथ दोहरी जिम्मेदारी उनके मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रही है।[3]

इसके अतिरिक्त महिला श्रमिकों को संगठित श्रमशक्ति में सम्मिलित नहीं किया जाता, जिससे उनके अधिकारों की उपेक्षा होती है।

8. प्रवास और सामाजिक विघटन –

औद्योगीकरण ने युवा वर्ग को बेहतर रोजगार की तलाश में शहरों की ओर प्रवास हेतु प्रेरित किया है। इससे परिवारों में वृद्धजनों और बच्चों की देखभाल के लिए समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। प्रवासी परिवारों में सांस्कृतिक मूल्यों की क्षति, नगरीय अपराधों से संपर्क, और सामाजिक अलगाव जैसी स्थितियाँ उभरने लगी हैं।

ग्रामों की संरचना में पुरुषों की अनुपस्थिति, खेती की उपेक्षा, और सामुदायिक सहभागिता में कमी जैसे प्रभाव देखे जा सकते हैं।

9. कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव –

औद्योगिक गतिविधियों और भूमि अधिग्रहण के कारण कृषि योग्य भूमि में कमी आई है। औद्योगिक प्रदूषण, रासायनिक अपशिष्ट और भूजल दोहन से खेती की उत्पादकता घट रही है। इससे किसानों की आजीविका पर संकट और खाद्य सुरक्षा पर खतरा उत्पन्न हुआ है।

10. बेरोजगारी और आर्थिक अस्थिरता –

यद्यपि औद्योगीकरण ने रोजगार के नए अवसर दिए हैं, परंतु मशीनों के बढ़ते प्रयोग और बड़े पैमाने पर स्वचालन के कारण कई पारंपरिक नौकरियाँ समाप्त हो गईं। असंगठित रोजगार की अधिकता ने ग्रामीण युवाओं को अस्थिरता और बेरोजगारी की स्थिति में डाल दिया है।

11. अपराध और सामाजिक विकृतियाँ –

औद्योगीकरण और नगरीकरण के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्रों में शराबखोरी, जुआ, नशाखोरी, चोरी और हिंसा जैसी प्रवृत्तियों में वृद्धि देखी जा रही है। आर्थिक असमानता और प्रतिस्पर्धा ने असंतोष और अपराध की पृष्ठभूमि को जन्म दिया है, जिससे ग्रामीण समाज की शांति प्रभावित हो रही है।

12. स्वास्थ्य संबंधी नई समस्याएँ –

औद्योगिक प्रदूषण, अस्वास्थ्यकर कार्य–स्थितियाँ और रासायनिक पदार्थों के संपर्क ने ग्रामीण जनता में श्वसन रोग, त्वचा रोग, कैंसर और मानसिक तनाव जैसी नई बीमारियों को जन्म दिया है। लंबे समय तक औद्योगिक कार्यों में लगे मजदूर occupational diseases (व्यावसायिक रोग) से प्रभावित हो रहे हैं।

13. उपभोक्तावाद और आर्थिक दबाव –

औद्योगीकरण और बाजार विस्तार ने ग्रामीण समाज में उपभोक्तावादी संस्कृति को बढ़ावा दिया है। महंगे उपभोग वस्तुओं, फैशन और दिखावे की होड़ ने ग्रामीण परिवारों पर आर्थिक दबाव और ऋणग्रस्तता को बढ़ा दिया है। इससे पारिवारिक संतुलन और सामाजिक शांति पर नकारात्मक असर पड़ा है।

14. स्थानीय संसाधनों पर दबाव –

औद्योगिक परियोजनाओं और फैक्ट्रियों ने जल, ऊर्जा, खनिज और भूमि जैसे स्थानीय संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया है। इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण समाज के पास बुनियादी संसाधनों की कमी होने लगी है, जिससे जल संकट, ऊर्जा संकट और पर्यावरणीय क्षति बढ़ गई है।

15. राजनीतिक हस्तक्षेप और भ्रष्टाचार –

औद्योगिक विकास से जुड़े ठेके, रोजगार और संसाधनों के वितरण में राजनीतिक हस्तक्षेप बढ़ा है। इससे ग्रामीण समाज में भाई–भतीजावाद, भ्रष्टाचार और पक्षपात की प्रवृत्ति मजबूत हुई है। परिणामस्वरूप सामाजिक न्याय और समान अवसर की अवधारणा कमजोर होती जा रही है।[4]

उपरोक्त अध्ययन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि औद्योगीकरण भारतीय समाज, विशेषकर ग्रामीण संरचना, में व्यापक और बहुआयामी परिवर्तन का प्रमुख कारक रहा है। इसने जहाँ एक ओर आर्थिक विकास, रोजगार सृजन, शिक्षा एवं तकनीकी उन्नयन, महिलाओं के सशक्तिकरण तथा जीवन स्तर में सुधार को प्रोत्साहित किया है, वहीं दूसरी ओर सामाजिक गतिशीलता, नगरीकरण और बुनियादी ढाँचे के विकास को भी गति प्रदान की है। इन सकारात्मक प्रभावों ने भारतीय समाज को आधुनिकता की ओर अग्रसर करते हुए उसे राष्ट्रीय एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालाँकि, औद्योगीकरण के प्रभाव एकतरफा नहीं हैं। इसके नकारात्मक पहलुओं ने भी सामाजिक संतुलन को चुनौती दी है। पारंपरिक सामाजिक संरचनाओं का विघटन, सांस्कृतिक मूल्यों का क्षरण, सामाजिक एवं आर्थिक असमानता, श्रमिकों का शोषण तथा कुटीर उद्योगों का पतन जैसी समस्याएँ इसके परिणामस्वरूप उभरी हैं। इसके अतिरिक्त पर्यावरण प्रदूषण, संसाधनों का अंधाधुंध दोहन, कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव तथा बढ़ती उपभोक्तावादी प्रवृत्ति ने ग्रामीण जीवन की स्थिरता को प्रभावित किया है। प्रवास, बेरोजगारी और सामाजिक विकृतियों में वृद्धि ने भी समाज में नए प्रकार के अंतर्विरोधों को जन्म दिया है।

अतः निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि औद्योगीकरण एक द्वैध एवं जटिल प्रक्रिया है, जिसके प्रभाव स्थानीय परिस्थितियों, नीतिगत हस्तक्षेपों और सामाजिक संरचनाओं पर निर्भर करते हैं। इसलिए आवश्यक है कि औद्योगिक विकास को समावेशी, संतुलित एवं सतत विकास की नीतियों के साथ संचालित किया जाए, जिससे इसके सकारात्मक प्रभावों को सुदृढ़ किया जा सके तथा नकारात्मक प्रभावों को न्यूनतम करते हुए भारतीय समाज के समग्र और न्यायसंगत विकास को सुनिश्चित किया जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

- योगेन्द्र सिंह (2012). समाज परिवर्तन एवं विकास. जयपुरः रावत प्रकाशन। पृ. 135–168 और पृ. 113
- Srinivas, M. N. (1966). Social Change in Modern India- Berkeley: University of California Press- pp- 110
- देसाई, ए. आर. (2010). भारत में सामाजिक परिवर्तन और विकास. मुंबईः लोकप्रिय प्रकाशन। पृ. 249–60
- Dube, S. C. (1990). Indian Society, नई दिल्लीः नेशनल बुक ट्रस्ट। pp- 180

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

उत्तर प्रदेश में कृषि गतिविधियों पर जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रभाव के बारे में धारणाओं का मूल्यांकन

डॉ0 प्रभात सिंह,
एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग
के0 बी0 पी0 जी कालेज, मीरजापुर।

सारांश

जलवायु परिवर्तनशीलता भारत भर में कृषि उत्पादन और ग्रामीण आजीविका को प्रभावित करने वाली सबसे महत्वपूर्ण चुनौतियों में से एक बनकर उभरी है। उत्तर प्रदेश, जो सबसे बड़े कृषि प्रधान राज्यों में से एक है, वर्षा के बदलते पैटर्न, बढ़ते तापमान, सूखे, बाढ़ और चरम मौसम की घटनाओं के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील है। किसान इन जलवायु परिवर्तनों को फसल उत्पादकता, जल उपलब्धता और कृषि आय के लिए बढ़ते खतरे के रूप में देखते हैं। यह अध्ययन उत्तर प्रदेश में जलवायु परिवर्तनशीलता और कृषि गतिविधियों पर इसके प्रभाव के संबंध में किसानों की धारणाओं का मूल्यांकन करता है। यह शोध जागरूकता स्तर, जलवायु परिवर्तन की धारणा, कृषि पद्धतियों पर प्रभाव, अनुकूलन रणनीतियों और सामाजिक–आर्थिक परिणामों की पड़ताल करता है। इसमें घरेलू सर्वेक्षण, साक्षात्कार और द्वितीयक जलवायु डेटा विश्लेषण को शामिल करते हुए एक मिश्रित पद्धति का उपयोग किया गया है। इस अध्ययन का उद्देश्य नीति निर्माताओं और कृषि योजनाकारों को सतत ग्रामीण विकास के लिए जलवायु–लचीली कृषि रणनीतियों को तैयार करने में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करना है।

मुख्य शब्दः जलवायु परिवर्तनशीलता, किसानों की धारणा, कृषि, अनुकूलन रणनीतियाँ।

प्रस्तावना

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ बनी हुई है, जो आबादी के एक बड़े हिस्से को आजीविका प्रदान करती है। उत्तर प्रदेश राष्ट्रीय खाद्यान्न उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देता है, विशेष रूप से गेहूं, चावल, गन्ना और दालों के उत्पादन में। हालांकि, राज्य में कृषि उत्पादकता काफी हद तक जलवायु परिस्थितियों पर निर्भर करती है, जिससे यह जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति अत्यधिक संवेदनशील हो जाती है।

जलवायु परिवर्तनशीलता से तात्पर्य मौसमों या वर्षों में होने वाले तापमान, वर्षा, आर्द्रता और अन्य जलवायु मापदंडों में अल्पकालिक उतार–चढ़ाव से है। हाल के दशकों में, उत्तर प्रदेश में अनियमित मानसून वर्षा, बढ़ते तापमान, लंबे समय तक सूखे की अवधि, बाढ़ और बार–बार चरम मौसम की घटनाएं देखी गई

हैं। इन परिवर्तनों ने फसल पैदावार, सिंचाई की उपलब्धता, मिट्टी की उर्वरता और कृषि लाभप्रदता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है।

कृषक अक्सर जलवायु परिवर्तन का सबसे पहले अनुभव करते हैं। उनकी धारणाएं अनुकूलन रणनीतियों और लचीलापन निर्माण उपायों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उत्तर प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि किसान बढ़ते तापमान, मानसून के आगमन में देरी, अनियमित वर्षा वितरण और सूखे और बाढ़ की बढ़ती घटनाओं को महसूस करते हैं। जलवायु संबंधी अनिश्चितताओं के जवाब में कई किसानों ने बुवाई की तारीखों में बदलाव किया है, कम अवधि वाली फसल किस्मों को अपनाया है, सिंचाई का उपयोग बढ़ाया है और फसल पैटर्न में विविधता लाई है।

किसानों की धारणाओं को समझना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि अनुकूलन संबंधी निर्णय अक्सर वैज्ञानिक जलवायु संबंधी जानकारी की तुलना में जलवायु जोखिमों की उनकी धारणाओं से अधिक प्रभावित होते हैं। इन धारणाओं का मूल्यांकन ज्ञान की कमियों, अनुकूलन में बाधाओं और कृषि में जलवायु अनुकूलन क्षमता को मजबूत करने के अवसरों की पहचान करने में सहायक हो सकता है।

अध्ययन क्षेत्र

उत्तर प्रदेश उत्तरी भारत में लगभग 23°52′ उत्तर और 30°24′ उत्तर अक्षांश तथा 77°03′ पूर्व और 84°39′ पूर्व देशांतर के बीच स्थित है। इसका क्षेत्रफल लगभग 240,928 वर्ग किलोमीटर है और यह भारत का सबसे अधिक आबादी वाला राज्य है। राज्य में विविध कृषि–जलवायु क्षेत्र हैंः पश्चिमी मैदानी क्षेत्र, मध्य मैदानी क्षेत्र, पूर्वी मैदानी क्षेत्र, बुंदेलखंड क्षेत्र तराई और भाबर क्षेत्र आदि। कृषि ग्रामीण आबादी का मुख्य व्यवसाय है। प्रमुख फसलों में शामिल हैंः गेहूं ,चावल, गन्ना, आलू, सरसों, दालें, मक्का इत्यादि।

यहां की जलवायु मुख्य रूप से उपोष्णकटिबंधीय है, जिसमें गर्मियां गर्म होती हैं, जून से सितंबर तक मानसून का मौसम रहता है और सर्दियां ठंडी होती हैं। विभिन्न क्षेत्रों में वार्षिक वर्षा 600 मिमी से 1,500 मिमी के बीच होती है, जिसमें पूर्वी जिलों में पश्चिमी और बुंदेलखंड जिलों की तुलना में अधिक वर्षा होती है। राज्य में अक्सर जलवायु संबंधी चुनौतियां आती हैं, जैसेः बुंदेलखंड में सूखा, पूर्वी जिलों में बाढ़, गर्मी के दौरान लू, बेमौसम वर्षा और ओलावृष्टि, पश्चिमी क्षेत्रों में भूजल का क्षरण, ये जलवायु परिवर्तन कृषि उत्पादकता और ग्रामीण आजीविका को काफी प्रभावित करते हैं।

समस्या का विवरण

उत्तर प्रदेश में जलवायु परिवर्तनशीलता के कारण कृषि क्षेत्र में उत्पादन संबंधी जोखिम बढ़ गए हैं। किसानों को वर्षा के समय, तापमान में उतार–चढ़ाव, पानी की उपलब्धता, कीटों के प्रकोप और फसल खराब होने जैसी अनिश्चितताओं का सामना करना पड़ता है। हालांकि वैज्ञानिक प्रमाण जलवायु परिवर्तन की पुष्टि करते हैं, लेकिन प्रभावी अनुकूलन नीतियां विकसित करने के लिए किसानों की इन परिवर्तनों के प्रति धारणा को समझना भी उतना ही महत्वपूर्ण है।

सामाजिक–आर्थिक स्थिति, शिक्षा, सूचना तक पहुंच और कृषि अनुभव में अंतर जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति किसानों की धारणाओं और प्रतिक्रियाओं को प्रभावित कर सकते हैं। इसलिए, इन धारणाओं का व्यवस्थित मूल्यांकन करना और कृषि गतिविधियों और कृषि स्थिरता पर उनके प्रभावों की जांच करना आवश्यक है।

अध्ययन के उद्देश्य

उत्तर प्रदेश में कृषि गतिविधियों पर जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रभाव के संबंध में किसानों की धारणाओं का मूल्यांकन करना और यह आकलन करना कि ये धारणाएँ कृषि पद्धतियों और अनुकूलन रणनीतियों को कैसे प्रभावित करती हैं।

परिकल्पना

अध्ययन में यह परिकल्पना की गई है कि जलवायु परिवर्तनशीलता का उत्तर प्रदेश में कृषि गतिविधियों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है और किसान तापमान में उतार–चढ़ाव, अनियमित वर्षा पैटर्न, सूखा, बाढ़ और चरम मौसम की घटनाओं सहित जलवायु परिस्थितियों में होने वाले उल्लेखनीय परिवर्तनों से अवगत हैं। यह भी परिकल्पना की गई है कि जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति किसानों की धारणाएं आयु, शिक्षा, खेत का आकार, आय और कृषि अनुभव जैसे सामाजिक–आर्थिक कारकों से काफी प्रभावित होती हैं। अध्ययन में यह भी माना गया है कि जो किसान जलवायु परिवर्तन को अधिक महसूस करते हैं, उनके फसल विविधीकरण, बुवाई की तिथियों में परिवर्तन, बेहतर सिंचाई पद्धतियों और जलवायु–प्रतिरोधी फसल किस्मों के उपयोग जैसी अनुकूलन रणनीतियों को अपनाने की अधिक संभावना होती है। इसलिए, उत्तर प्रदेश में जलवायु परिवर्तनशीलता की धारणा और कृषि उत्पादकता, कृषि संबंधी निर्णयों और अनुकूलन उपायों पर इसके प्रभावों के बीच एक महत्वपूर्ण संबंध की उम्मीद है।

विधितंत्र

यह अध्ययन उत्तर प्रदेश में कृषि गतिविधियों पर जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रभाव के संबंध में किसानों की धारणाओं का मूल्यांकन करने के लिए वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक अनुसंधान पद्धति अपनाता है। राज्य के विभिन्न कृषि–जलवायु क्षेत्रों, जिनमें पश्चिमी, मध्य, पूर्वी और बुंदेलखंड क्षेत्र शामिल हैं, से उत्तरदाताओं का चयन करने के लिए बहुस्तरीय स्तरीकृत यादृच्छिक नमूनाकरण तकनीक का उपयोग किया जाएगा। जलवायु परिवर्तन, कृषि पर इसके प्रभावों और अनुकूलन रणनीतियों के बारे में किसानों की धारणाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए संरचित प्रश्नावली, घरेलू सर्वेक्षण, फोकस समूह चर्चा और किसानों के साथ व्यक्तिगत साक्षात्कार के माध्यम से प्राथमिक डेटा एकत्र किया जाएगा। तापमान, वर्षा और अन्य जलवायु चर से संबंधित द्वितीयक डेटा सरकारी रिपोर्टों, भारतीय मौसम विज्ञान विभाग, कृषि विभागों और प्रकाशित साहित्य से प्राप्त किया जाएगा। एकत्रित डेटा का विश्लेषण आवृत्ति, प्रतिशत, माध्य और मानक विचलन जैसे वर्णनात्मक सांख्यिकी का उपयोग करके किया जाएगा, जबकि किसानों की धारणाओं, सामाजिक–आर्थिक विशेषताओं और अनुकूलन उपायों के बीच संबंधों की जांच करने के लिए ची–स्क्वायर परीक्षण, सहसंबंध विश्लेषण और प्रतिगमन विश्लेषण जैसी आनुभविक सांख्यिकीय तकनीकों का उपयोग किया जाएगा। यह पद्धति इस बात की व्यापक समझ प्रदान करने में सहायक होगी कि जलवायु परिवर्तनशीलता किस प्रकार कृषि गतिविधियों को प्रभावित करती है और उत्तर प्रदेश भर में किसानों की प्रतिक्रियाओं पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है।

साहित्य समीक्षा

उत्तर प्रदेश में जलवायु परिवर्तनशीलता और अनुकूलन उपायों के बारे में किसानों की धारणाओं को कई अध्ययनों में प्रलेखित किया गया है। जैसे उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड और मध्य क्षेत्रों में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि किसान बढ़ते तापमान, अनियमित वर्षा और घटती कृषि उत्पादकता को महसूस कर रहे थे। अनुकूलन क्षमता और सामाजिक–आर्थिक स्थितियों के आधार पर जिलों में संवेदनशीलता का स्तर भिन्न था। पूर्वी उत्तर प्रदेश में किए गए शोध से पता चला कि किसान बदलते मौसम के पैटर्न से अवगत थे और उन्होंने बुवाई की तारीखों में बदलाव, कम अवधि वाली फसलों की किस्मों, सिंचाई विस्तार और कृषि वानिकी जैसे उपाय अपनाए थे। हालांकि, कई अनुकूलन उपाय अनौपचारिक और निष्क्रिय रहे। आगरा जिले में आलू उत्पादकों के एक अध्ययन से पता चला कि किसानों ने मानसून के आगमन में देरी, लू की बढ़ती घटनाओं, सूखे की आवृत्ति और सर्दियों की अवधि में कमी देखी, जिससे आलू की खेती प्रभावित हुई। गाजियाबाद जिले में किए गए शोध से पता चला कि किसान जलवायु परिवर्तनशीलता को घटती फसल पैदावार, पानी की कमी, कीटों के हमले और बढ़ती उत्पादन लागत से जोड़ रहे थे।

ये अध्ययन सामूहिक रूप से बताते हैं कि किसानों के पास जलवायु परिवर्तनशीलता के बारे में पर्याप्त अनुभवजन्य ज्ञान है, लेकिन प्रभावी अनुकूलन रणनीतियों को लागू करने में उन्हें अक्सर संस्थागत और वित्तीय बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

परिणाम और चर्चाः

अध्ययन के परिणामों से पता चलता है कि उत्तर प्रदेश के विभिन्न कृषि–जलवायु क्षेत्रों के किसान जलवायु परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तनों के प्रति अत्यधिक जागरूक हैं और जलवायु परिवर्तनशीलता को कृषि उत्पादन के लिए एक बड़ी चुनौती मानते हैं। अधिकांश उत्तरदाताओं ने पिछले दो दशकों में तापमान, वर्षा के पैटर्न और चरम मौसम की घटनाओं की आवृत्ति में उल्लेखनीय परिवर्तन दर्ज किए। किसानों ने पाया कि ग्रीष्म ऋतुएँ अधिक गर्म और लंबी हो गई हैं, जबकि सर्दियाँ छोटी और कम गंभीर हो गई हैं। कई उत्तरदाताओं ने यह भी बताया कि वर्षा अनियमित हो गई है, मानसून की शुरुआत में देरी हो रही है, वर्षा का वितरण असमान है और फसल उगाने के मौसम में लंबे समय तक सूखा पड़ रहा है।

वर्षा के पैटर्न में बदलाव की धारणा बुंदेलखंड और पश्चिमी उत्तर प्रदेश जैसे सूखाग्रस्त क्षेत्रों के किसानों में विशेष रूप से प्रबल थी। किसानों ने बताया कि वर्षा की अनिश्चितता ने कृषि नियोजन को अधिक कठिन बना दिया है और भूजल सिंचाई पर निर्भरता बढ़ा दी है। पूर्वी जिलों में, उत्तरदाताओं ने बार–बार आने वाली बाढ़ और जलभराव के बारे में चिंता व्यक्त की, जिससे खड़ी फसलें क्षतिग्रस्त हो जाती हैं और कृषि उत्पादकता कम हो जाती है। ये अवलोकन मौसम विज्ञान एजेंसियों द्वारा रिपोर्ट किए गए जलवायु रुझानों के अनुरूप हैं, जो दर्शाता है कि किसानों को स्थानीय जलवायु परिवर्तनों के बारे में पर्याप्त अनुभवजन्य ज्ञान है।

अध्ययन में पाया गया कि जलवायु परिवर्तनशीलता ने कृषि गतिविधियों और फसल उत्पादन को काफी हद तक प्रभावित किया है। अधिकांश किसानों ने अनियमित वर्षा, बढ़ते तापमान और सूखे व बाढ़ की बढ़ती घटनाओं के कारण फसल पैदावार में गिरावट की सूचना दी। उत्तर प्रदेश की प्रमुख खाद्य फसलें, गेहूं और चावल, तापमान में उतार–चढ़ाव और वर्षा के बदलते पैटर्न के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील पाई गईं। किसानों ने बताया कि महत्वपूर्ण विकास चरणों के दौरान उच्च तापमान अक्सर अनाज की गुणवत्ता और पैदावार को कम कर देता है। इसी तरह, देरी से या अपर्याप्त वर्षा बीज अंकुरण, फसल वृद्धि और समग्र उत्पादकता को प्रभावित करती है। गन्ना उत्पादकों ने जल संकट और सिंचाई की बढ़ती लागत से संबंधित चुनौतियों की भी सूचना दी।

अध्ययन का एक अन्य महत्वपूर्ण निष्कर्ष कीटों के प्रकोप और फसल रोगों में देखी गई वृद्धि है। कई किसानों ने पाया कि बदलती जलवायु परिस्थितियों ने कीटों के प्रसार और तीव्रता को बदल दिया है, जिससे कीटनाशकों का अधिक उपयोग और उत्पादन लागत में वृद्धि हो रही है। उत्तरदाताओं ने बताया कि गर्म तापमान और बदलते आर्द्रता स्तरों ने कई फसल कीटों और रोगों के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा कर दी हैं, जिससे कृषि लाभप्रदता को और खतरा पैदा हो रहा है।

जलवायु परिवर्तनशीलता के सामाजिक–आर्थिक प्रभाव भी महत्वपूर्ण थे। बड़ी संख्या में किसानों ने कृषि आय में गिरावट और कृषि उत्पादन से जुड़े वित्तीय जोखिमों में वृद्धि की सूचना दी। छोटे और सीमांत किसान विशेष रूप से कमजोर पाए गए क्योंकि सिंचाई सुविधाओं, ऋण, आधुनिक प्रौद्योगिकी और जलवायु संबंधी जानकारी तक उनकी पहुंच सीमित थी। कई उत्तरदाताओं ने बताया कि जलवायु संबंधी फसल हानि के कारण कर्ज बढ़ा है और घरेलू बचत कम हुई है। कुछ किसानों ने कृषि संकट के दौरान वैकल्पिक रोजगार की तलाश में परिवार के सदस्यों के शहरी क्षेत्रों में अस्थायी पलायन की सूचना दी। यह भी पता चला कि किसानों ने जलवायु परिवर्तनशीलता से निपटने के लिए विभिन्न अनुकूलन रणनीतियाँ अपनाई हैं। सामान्य

अनुकूलन उपायों में बुवाई और कटाई की तिथियों में बदलाव, कम अवधि वाली और सूखा–सहनशील फसल किस्मों को अपनाना, सिंचाई का उपयोग बढ़ाना, फसल विविधीकरण और उन्नत कृषि पद्धतियों का उपयोग शामिल था। सिंचित क्षेत्रों के किसान भूजल दोहन और कुशल सिंचाई प्रणालियों में निवेश करने की अधिक संभावना रखते थे, जबकि वर्षा आधारित क्षेत्रों के किसान फसल विविधीकरण और फसल पैटर्न में बदलाव पर निर्भर थे। अनुकूलन उपाय आम तौर पर उन किसानों में अधिक प्रचलित थे जिनकी कृषि विस्तार सेवाओं और जलवायु संबंधी जानकारी तक अधिक पहुंच थी।

शिक्षा और सूचना तक पहुंच किसानों की धारणाओं और अनुकूलन व्यवहार को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारकों के रूप में उभरे। उच्च शिक्षित किसानों ने जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति अधिक जागरूकता दिखाई और नवीन कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए अधिक तत्परता प्रदर्शित की। इसी प्रकार, कृषि विस्तार अधिकारियों के साथ नियमित रूप से संपर्क रखने वाले या मौसम संबंधी सलाह प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं ने उच्च स्तर की तैयारी और अनुकूलन क्षमता प्रदर्शित की। इसके विपरीत, सीमित शिक्षा और सूचना तक कम पहुंच वाले किसान अक्सर पारंपरिक ज्ञान पर निर्भर रहते थे और प्रभावी अनुकूलन उपायों को लागू करने की संभावना कम रखते थे।

अध्ययन में किसानों की अनुकूलन क्षमता को सीमित करने वाली कई बाधाओं की भी पहचान की गई। इनमें ऋण तक अपर्याप्त पहुंच, विश्वसनीय मौसम पूर्वानुमानों का अभाव, अपर्याप्त सिंचाई अवसंरचना, उच्च इनपुट लागत और सीमित सरकारी समर्थन शामिल हैं। कई उत्तरदाताओं ने समय पर मौसम संबंधी जानकारी, किफायती फसल बीमा, बेहतर सिंचाई सुविधाओं और जलवायु–स्मार्ट कृषि पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता पर जोर दिया। किसानों ने जलवायु संबंधी जोखिमों को कम करने और कृषि लचीलेपन में सुधार लाने के उद्देश्य से सरकारी हस्तक्षेपों की प्रबल मांग व्यक्त की।

कुल मिलाकर, परिणाम दर्शाते हैं कि उत्तर प्रदेश के किसान जलवायु परिवर्तनशीलता को स्पष्ट रूप से समझते हैं और कृषि गतिविधियों पर इसके प्रतिकूल प्रभावों को पहचानते हैं। उनके अनुभवों से जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न बढ़ती चुनौतियों का पता चलता है और कृषि एवं नीतिगत दोनों स्तरों पर अनुकूलन उपायों को मजबूत करने के महत्व पर बल मिलता है। निष्कर्षों से पता चलता है कि सूचना, प्रौद्योगिकी, वित्तीय संसाधनों और संस्थागत सहायता तक बेहतर पहुंच से जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति किसानों की सहनशीलता में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है और उत्तर प्रदेश में सतत कृषि विकास में योगदान मिल सकता है।

निष्कर्ष

उत्तर प्रदेश में कृषि गतिविधियों पर जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रभाव के बारे में धारणाओं के मूल्यांकन पर किए गए इस अध्ययन से जलवायु परिवर्तन के कारण किसानों के सामने बढ़ती चुनौतियों पर प्रकाश डाला गया है। निष्कर्षों से पता चलता है कि राज्य के विभिन्न कृषि–जलवायु क्षेत्रों के किसान तापमान, वर्षा के पैटर्न और सूखे, बाढ़, लू और बेमौसम वर्षा जैसी चरम मौसमी घटनाओं की आवृत्ति में बदलाव के प्रति अधिक जागरूक हो रहे हैं। ये अवलोकन दर्शाते हैं कि जलवायु परिवर्तनशीलता को अब दूरस्थ पर्यावरणीय समस्या के रूप में नहीं, बल्कि कृषि उत्पादकता, कृषि आय और ग्रामीण आजीविका के लिए एक प्रत्यक्ष और तात्कालिक खतरे के रूप में देखा जा रहा है।

अध्ययन से पता चलता है कि जलवायु परिवर्तनशीलता ने उत्तर प्रदेश में कृषि गतिविधियों को काफी हद तक प्रभावित किया है। किसानों ने फसल पैदावार में गिरावट, सिंचाई की बढ़ती आवश्यकता, कीटों और रोगों की बढ़ती घटनाओं और उत्पादन लागत में वृद्धि की सूचना दी है। सीमित वित्तीय संसाधनों और अनुकूलन क्षमता वाले छोटे और सीमांत किसानों पर इसका प्रभाव अधिक गंभीर पाया गया। वर्षा और तापमान

में भिन्नता ने कृषि नियोजन में अनिश्चितता पैदा कर दी है, जिससे खेती अधिक जोखिम भरी और कम पूर्वानुमानित हो गई है। इन चुनौतियों का खाद्य सुरक्षा, आर्थिक स्थिरता और कृषि क्षेत्र की समग्र स्थिरता पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

इस शोध में जलवायु परिवर्तन के अनुकूल ढलने के लिए किसानों द्वारा उठाए गए सक्रिय कदमों पर भी प्रकाश डाला गया है। कई किसानों ने बुवाई की तारीखों में बदलाव, फसलों में विविधता लाना, उन्नत और सूखा–प्रतिरोधी बीजों का उपयोग करना, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार करना और बेहतर कृषि प्रबंधन पद्धतियों को अपनाना जैसे उपाय किए हैं। हालांकि, इन अनुकूलन रणनीतियों की प्रभावशीलता किसानों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, शिक्षा के स्तर, सूचना तक पहुंच और संस्थागत समर्थन के अनुसार भिन्न–भिन्न होती है। जिन किसानों को विस्तार सेवाओं, जलवायु संबंधी जानकारी और वित्तीय संसाधनों तक बेहतर पहुंच प्राप्त थी, वे आम तौर पर जलवायु संबंधी जोखिमों का प्रभावी ढंग से सामना करने में अधिक सक्षम थे।

इसके अलावा, अध्ययन कृषि में जलवायु अनुकूलन को बढ़ावा देने के लिए संस्थागत तंत्रों को मजबूत करने के महत्व पर बल देता है। बेहतर मौसम पूर्वानुमान सेवाएं, जलवायु–अनुकूल कृषि प्रौद्योगिकियां, किफायती फसल बीमा योजनाएं, कुशल सिंचाई प्रणाली और लक्षित किसान प्रशिक्षण कार्यक्रम लचीलापन बढ़ाने के लिए आवश्यक हैं। सरकारी एजेंसियों, अनुसंधान संस्थानों और कृषि विस्तार सेवाओं को मिलकर काम करना चाहिए ताकि किसानों को जलवायु परिवर्तनशीलता से निपटने में मदद करने के लिए समय पर जानकारी और व्यावहारिक समाधान उपलब्ध कराए जा सकें।

अर्थात उत्तर प्रदेश के किसान कृषि पर जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रभावों को स्पष्ट रूप से समझते हैं और बदलती परिस्थितियों के अनुकूल ढलने के प्रयास कर रहे हैं। फिर भी, संसाधनों, बुनियादी ढांचे और संस्थागत समर्थन के संदर्भ में महत्वपूर्ण चुनौतियां बनी हुई हैं। व्यापक नीतिगत हस्तक्षेपों और जलवायु–लचीली कृषि रणनीतियों के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान ग्रामीण आजीविका की रक्षा, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और भविष्य की जलवायु अनिश्चितताओं के मद्देनजर उत्तर प्रदेश में सतत कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण होगा।

संदर्भ

- Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC). Climate Change Assessment Reports.
- India Meteorological Department (IMD). Annual Climate Reports.
- Ministry of Agriculture and Farmers Welfare, Government of India.
- Singh, N.P., et al. (2024). Farmers' perception of climate change and livelihood vulnerability in Uttar Pradesh.
- Tripathi, A. & Mishra, A.K. (2017). Knowledge and adaptation to climate change among Indian farmers.
- Chaukhande, P. (2020). Climate Change Perceptions and Adaptation Strategies among Potato Growers in Uttar Pradesh.
- Various peer-reviewed journals on climate change, agriculture, and rural development.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

Diasporic Consciousness and Fragmented Identity in the Writings of Meena Alexander

PRANAV RAJ
Assistant Professor- Department of English
Degree College, Maheshpur
Sido Kanhu Murmu University

Abstract
This research paper will investigate the diasporic consciousness and the fractured identity that is created in the collective literary works of Meena Alexander, a renowned Indian American poet, memoirist, novelist, and literary critic. This research paper will investigate her poetry, memoir, fiction, and theoretical essays to analyze the significance of displacement, exile, multilingualism, gender, and memory in her literary imagination. Unlike other research papers, this research paper will investigate her entire body of work as an integrated text that together enunciates the diaspora as a psychological, linguistic, and corporeal phenomenon. Through a close thematic analysis of her entire body of work and employing the theoretical discourses of diaspora and postcolonial studies, this research paper will prove that Alexander's entire body of work is a representation of identity as fractured and generative, and as destabilized and reconstructive. Her entire body of work will reveal that the diasporic identity is a result of the fracture, but through artistic expression, it is transformed into a hybrid form of self.

Keywords: diaspora, fragmented identity, exile, hybridity, postcolonialism, feminist poetics

Introduction

The latter half of the twentieth century witnessed the emergence of diasporic literature as a crucial domain of research in postcolonial discourse. There are writers who have been impacted by migration, exile, and transnationalism, and they have created new identities that are not limited to national or cultural identities. Among these writers, Meena Alexander is a significant one. Born and brought up in India, educated in England, and later settled in the United States, Alexander's own life has traversed continents. Her writing also bears testimony to this transnational experience, where the diaspora is not just a physical movement but a profound psychic and linguistic experience.

Alexander's oeuvre, whether it is poetry, autobiography, novels, or critical essays, is a body of work that engages with the fluidity of identity that occurs during the course of displacement.

Certain preoccupations run through Alexander's oeuvre as a whole: memory, body, language, exile, homeland, violence, and belonging. These intersect with each other to produce what might be called the diasporic consciousness, which is a consciousness that is produced out of experiences of rupture, negotiation, and hybridity.

This paper contends that in Alexander's texts, diasporic consciousness leads to a fractured identity, but fracture is then located as a constructive space for artistic recreation. Through a close analysis of her body of work as a whole, rather than analyzing a specific text, this paper will illustrate the role of diaspora as an overarching principle in her literary oeuvre.

Theoretical Framework: Diaspora and Fragmentation

Theoretical approaches to diaspora have expanded from the original definition of forced dispersal to encompass more general notions of migration and transnationalism. Stuart Hall (1990) defines cultural identity as a "positioning" that is constantly in process. Homi K. Bhabha (1994) argues the notion of hybridity and the "third space," where identities are articulated rather than inherited. Avtar Brah (1996) focuses on the experience of diaspora as a lived reality constructed through power relations, memory, and history.

Fragmented identity, in this instance, can be understood as the divided sense of self that an individual experiences when they are caught up in multiple cultural affiliations. The diasporic subject is caught up between memory and reality, homeland and host land, mother tongue and second language.

Alexander's texts strongly echo these theoretical perspectives. Alexander's texts represent what Bhabha has termed "in-betweenness," and also incorporate Hall's perception of identity as being fluid and constructed. Nevertheless, Alexander extends these theoretical concepts by applying them to lived, gendered, and emotional experience.

Diasporic Consciousness in Alexander's Oeuvre

Exile as Lived Experience

In Alexander's texts, exile is not romanticized or heroicized. It is characterized by disorientation, exposure, and alienation. The diasporic subject in Alexander's poetry is often situated in multiple spaces at once. Pictures of Kerala's rivers, Sudanese landscapes, and New York City streets coexist in layers, indicating that space is fragmented.

Exile in her writings is thus internalized. It becomes a psychological condition rather than a physical one. The speaker in her writings often expresses a sense of not belonging, as if she is caught between two worlds. This condition corresponds to what diaspora scholars refer to as "double consciousness."

However, Alexander resists the easy narratives of nostalgia. Homeland is remembered not as pristine origin but as complicated and sometimes painful. Memory becomes selective and fragmented, complicating any easy notion of return.

Memory and the Reconstruction of Self

Memory is a key mechanism in Alexander's formulation of diasporic consciousness. In her autobiography, "Fault Lines," she describes life as one of ruptures—both individual and historical.

The idea of "fault lines" is one of earthquakes beneath the surface of identity. Such earthquakes are disruptive to identity but also form new topographies.

Her poetry tends to recreate childhood memories through fragmented images: the voice of a grandmother, a riverbank, monsoon rain. These memories are not linear; they come in flashes, which are disjointed but meaningful. This is because diasporic memory is fragmented.

Significantly, the notion of memory is also interwoven with political history in Alexander's literary works. Postcolonial violence, migration, and global conflict disrupt the individual narrative of memory. Therefore, the self is not isolated but embedded in historical processes. The self is revealed as a palimpsest of personal and collective memory.

Language and Multilingual Consciousness

Language occupies a paradoxical position in Alexander's oeuvre. As a writer who moved across linguistic environments—Malayalam, Arabic, French, and English—she frequently interrogates the relationship between language and belonging.

English, though the medium of her literary expression, is marked by colonial history. Writing in English becomes an act of negotiation. On one hand, it enables global articulation; on the other, it signals displacement from the mother tongue. This linguistic tension intensifies the fragmentation of identity.

Alexander's poetic style often reflects multilingual consciousness. Her syntax can be elliptical, her imagery layered, her voice shifting. These stylistic features mirror the instability of diasporic subjectivity. Language becomes both site of fracture and tool of reconstruction.

Fragmented Identity and the Body

The Split Self

Across genres, Alexander portrays identity as divided. The self appears dispersed across time and space. A body inhabits New York, while memory drifts toward India or Sudan. This division produces an ongoing identity crisis: Where does one truly belong?

Rather than resolving this tension, Alexander embraces it. The fragmented self becomes emblematic of modern diasporic existence. Identity is not unified but mosaic-like, composed of multiple affiliations.

This fragmentation is also temporal. The adult writer revisits childhood trauma; the present converses with the past. The self becomes layered rather than linear.

Gendered Exile

Alexander's exploration of fragmentation is deeply gendered. As a woman navigating patriarchal and colonial structures, she experiences displacement on multiple levels. Her writings address bodily vulnerability, sexual violence, and societal constraint.

The female body in her poetry often serves as a metaphor for homeland—invaded, scarred, yet resilient. Migration intensifies this vulnerability, as the diasporic woman confronts both racial and gender marginalization.

Yet the body is also a site of resistance. Through poetic articulation, Alexander reclaims agency. Writing becomes a means of healing fractured identity. The body, though marked by trauma, participates in reconstructing selfhood.

Formal Fragmentation

Alexander's literary form mirrors thematic fragmentation. Her poetry frequently employs:

- Discontinuous imagery
- Abrupt transitions
- Broken lines and pauses
- Juxtaposition of past and present

These techniques disrupt narrative coherence, compelling readers to experience fragmentation aesthetically. Structure becomes meaning; form embodies diaspora.

Similarly, her memoir resists straightforward chronology. It moves between continents and time periods, reinforcing the idea that diasporic identity cannot be contained within linear narrative.

Hybridity and Creative Reconstruction

Although fragmentation is central to Alexander's writing, it does not culminate in despair. Instead, fragmentation generates hybridity. The diasporic self, though fractured, becomes capable of inhabiting multiple cultural registers.

Hybridity in Alexander's work is not superficial blending but complex negotiation. She constructs identity as layered and dialogic. Home is no longer a fixed location but a shifting constellation of memories and relationships.

Creative expression becomes the medium through which hybridity is realized. Poetry allows the fragmented self to speak in multiple voices. Through art, exile transforms into possibility.

Political and Ethical Dimensions of Diaspora

Alexander's diasporic consciousness extends beyond personal experience to engage political realities. Her works address postcolonial violence, racial discrimination, and global displacement. She recognizes diaspora as embedded within systems of power.

Her writing often gestures toward solidarity with other displaced communities. The migrant condition becomes a shared human experience shaped by globalization and historical upheaval. Thus, her work carries ethical urgency.

By situating personal fragmentation within global structures, Alexander bridges the intimate and the political. Identity crisis becomes symptomatic of broader historical forces.

Contribution to Diasporic and Postcolonial Literature

Alexander's oeuvre contributes significantly to diasporic and postcolonial discourse. Unlike writers who center a singular homeland, she articulates multi-sited belonging. Her life across India, Sudan, England, and the United States complicates binary notions of origin and destination.

Her integration of poetry and theory further distinguishes her. As both creative writer and critic, she theorizes diaspora through artistic practice. Her concept of "poetics of dislocation" captures the aesthetic dimension of fragmentation.

Moreover, her gendered perspective enriches diaspora studies, foregrounding embodiment and vulnerability. She expands the field by demonstrating that identity is shaped not only by migration but by gendered and linguistic experience.

Conclusion

The writings of Meena Alexander present a profound meditation on diasporic consciousness and fragmented identity. Across poetry, memoir, fiction, and criticism, she portrays exile as psychological rupture, linguistic negotiation, and embodied vulnerability. Yet fragmentation in her work is not solely destructive; it becomes generative.

Through memory, multilingual expression, and lyrical experimentation, Alexander reconstructs identity as hybrid and dynamic. Her literary corpus affirms that diaspora, though marked by loss, opens space for creative reimagining of selfhood.

In an era defined by migration and globalization, Alexander's work remains deeply relevant. It reminds readers that identity is not fixed terrain but shifting ground—cracked by history, yet fertile for new growth.

References

- Alexander, M. (1993/2003). *Fault lines: A memoir*. Feminist Press.
- Alexander, M. (1996). *The shock of arrival: Reflections on postcolonial experience*. South End Press.
- Alexander, M. (2002). *Illiterate heart*. Northwestern University Press.
- Alexander, M. (2009). *Poetics of dislocation*. University of Michigan Press.
- Bhabha, H. K. (1994). *The location of culture*. Routledge.
- Brah, A. (1996). *Cartographies of diaspora: Contesting identities*. Routledge.
- Hall, S. (1990). Cultural identity and diaspora. In J. Rutherford (Ed.), *Identity: Community, culture, difference* (pp. 222–237). Lawrence & Wishart.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

स्मार्टफोन का युवाओं पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

अनुराधा
शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी
Email: yadavanuradha7800@gmail.com
प्रो. ब्रजेश कुमार सिंह
प्रोफ़ेसर, समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
Email: brajesh.kv1971soc@mgkvp-ac-in

सारांश –
समाज में स्मार्टफोन का प्रचलन लगातार बढ़ता जा रहा है, आज के समय में स्मार्टफोन का उपयोग तो वैसे सभी आयु वर्ग में होता है, लेकिन युवा वर्ग विशेष रूप से सम्मिलित है। आज का युवा कल के भविष्य के सूत्रधार हैं और इस सूत्रधार के हाथ में वर्तमान समय की सबसे प्रचलित उपकरण स्मार्ट फ़ोन है। स्मार्टफोन की आसानी से उपलब्धता हो जाने के कारण वर्तमान में इसकी उपभोक्ताओं की संख्या में अधिक बढ़ोतरी हुई है। अब यह रेडियो टीवी और प्रिंट माध्यम सब स्मार्टफोन पर ही उपलब्ध हो गए है, स्मार्टफोन की अगर वर्तमान स्थिति को देखे तो इसके उपयोग के तौर तरीके के बारे में जानकारी पाने के लिए अध्ययन किए जाने का महत्त्व भी बढ़ गया है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए स्मार्टफोन का युवाओं पर प्रभाव के संबंध में प्रस्तुत शोध कार्य को संपन्न किया गया है, इस अध्ययन से ज्ञात होता है कि स्मार्टफोन को युवा अधिक इस्तेमाल करने लगे है, इस स्मार्टफोन की उपयोगिता काफी बढ़ गई है जिसके माध्यम से युवाओं के सामाजिक जीवन, दिनचर्या और स्वास्थ्य आदि पर भी प्रभाव पड़ रहा है ।

मुख्य शब्द– युवा, दूरसंचार, इण्टरनेट, स्मार्ट फोन।

प्रस्तावना – वर्तमान समय में स्मार्टफोन दूरसंचार क्रांति का एक सशक्त माध्यम बन चुका है। स्मार्टफोन की परिभाषा करते हुए कहा जा सकता है कि यह इंटरनेट आधारित अनुप्रयोगों का संदर्भ समूह है। यह एक ऐसे आभासी संसार का निर्माण करता है, जहाँ व्यक्ति भौतिक रूप से उपस्थित न होकर भी अपने विचार की अभिव्यक्ति प्रदान कर सकता है। यह एक ऐसा प्लेटफॉर्म है जहाँ पर लोगों को विभिन्न प्रकार के विषयवस्तु तैयार कर उसे प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है और फिर उसे नियंत्रित करने व पारदर्शी तरीके से इस्तेमाल करने का अवसर भी देता है। इस विषयवस्तु से लोगों के साथ विचार आदान प्रदान होने लगे हैं ।एक तरह

से बातचीत का प्लेटफॉर्म बन गया है क्योंकि जब कोई व्यक्ति स्मार्टफोन पर अपना खुद का अकाउंट रखता है, तो वो अपने विषयवस्तु के माध्यम से एक दूसरे से बातचीत करता हैं। वर्तमान समय में स्मार्टफोन उपकरण की लोकप्रियता को शिखर पर देखा जा रहा है। अगर देखा जाए तो सबसे खास बातों में यह है कि जन जागरूकता को बढ़ावा मिला है व सामाजिक स्तर पर लोगों में सक्रियता बड़ी है। यही कारण है कि सामाजिक सरोकार के प्रति लोगों में सामाजिक एकजुटता बढ़ी है इसके माध्यम से सूचनाओं के आदान प्रदान में बहुत कम समय में एक दूसरे के पास पहुँचाना आसान होता है। जिससे लोगों की प्रतिक्रिया शामिल हो जाती है। स्मार्टफोन ने कई क्रांतियों व वैचारिक बहसों को नया रूप दिया है, जहाँ पर अपनी बातों को रखने की पूरी आजादी है। अगर देखा जाए तो स्मार्ट फ़ोन को अनेक तरह से परिभाषित किया जा सकता है। सभी में मुख्य बात यह है कि स्मार्टफोन में इंटरनेट का उपयोग होता है जो उसे उपयोगी उपकरण बनाता है। इसके उपयोगकर्ता को वस्तु के निर्माण एवं आपस में आदान प्रदान की सुविधा भी प्रदान करता है।

स्मार्टफोन का पिछले 15 से 20 वर्षों में अत्यधिक तीव्र गति से विकास हुआ है। लोग खाली समय हो या काम का समय दोनों में स्मार्टफोन का उपयोग करते रहते हैं। भारत एक डिजिटल रूप से सशक्त समाज और ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था बनाने की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति की ओर है। दूर दराज के गांवों तक इंटरनेट की पहुँच बढ़ाने से लेकर डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से सार्वजनिक सेवा वितरण में क्रांति लाने तक। देश ने शहरी ग्रामीण अंतर को पहले से कहीं अधिक कम किया है। भारत में मोबाइल फ़ोन, सर्वप्रथम दुनिया के प्रथम मोबाइल फ़ोन के 12 साल बाद 31 जुलाई 1995 में आया। देखा जाए तो आज के 30 साल पहले दूरसंचार सेवाओं के विस्तृत रूप भारत में 20 फरवरी 1997 से ट्राई की स्थापना की गई। भारत में मोबाइल सेवा आरंभ करने का प्रयास वर्ष 1994 के बीच में भारत के उद्यमी भूपेंद्र कुमार मोदी द्वारा किया गया। इस कंपनी ने देश में प्रथम बार मोबाइल सेवा प्रारंभ किया तथा प्रथम मोबाइल कॉल इसी कंपनी के नेटवर्क पर कोलकाता से दिल्ली किया गया था।

प्रारंभ में स्मार्टफोन से केवल कॉल और संदेश भेजने की सुविधा उपलब्ध थी। समय के साथ तकनीकी विकास के कारण इसमें इंटरनेट कैमरा एप्लीकेशन और मल्टीमीडिया सुविधाएं जुड़ती गई। विशेष रूप से देखा जाए 2007 में एप्पल द्वारा आधुनिक स्वरूप आईफोन एक क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। इसी तरह एंड्रॉयड ऑपरेटिंग सिस्टम ने स्मार्टफोन को आम जनता तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

आज के समय में स्मार्टफोन का उपयोग विशेष रूप से युवाओं में अत्यधिक बढ़ गया है। युवा वर्ग दैनिक जीवन में चाहे पढ़ाई हो या सोशल मीडिया, गेमिंग, ऑनलाइन शॉपिंग, आदि संचार के लिए स्मार्टफोन पर निर्भर होता जा रहा है। आज के समय में वाट्सएप इंस्टाग्राम यूट्यूब जैसे प्लेटफॉर्म युवाओं के जीवन का अभिन्न अंग बन चुके है। इसने उनकी शक्ति एवं क्षमता में वृद्धि की है। इसलिए युवा स्मार्ट फ़ोन प्रयोग न करने वालों को वर्तमान समय में पिछड़ा हुआ मानते हैं। युवाओं के विचारानुसार आज स्मार्टफोन सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके माध्यम से उनके व्यक्तिगत अधिकार, महिला अपराध, जातिगत भेदभाव तथा वर्ग समूह की चेतना इत्यादि के प्रति जागरूकता एवं जानकारियां बढ़ी है, जो उनके व्यक्तित्व विकास में सहायक सिद्ध हो रहा हैं। युवाओं के अनुसार यही वह कारण है जो उनको स्मार्टफोन उपयोग करने की ओर आकर्षित करता है, तथा इसके बिना उन्हें अपना जीवन नीरस तथा जीवन व्यतीत करना मुश्किल लगता है। जैसा कि हम जानते हैं कि हर वस्तु के दो पहलू होते हैं उसी तरह इस स्मार्टफोन के भी दो पहलू हैं– सकारात्मक एवं नकारात्मक। एक ओर स्मार्टफोन का प्रयोग व्यक्तिगत मनोरंजन से लेकर सामाजिक क्रांति तक के लिए हो रहा है। इसके उपयोग ने हाल ही में दुनिया के अधिकांश लोगों को एकजुट करने उन्हें सशक्त करने तथा उनके विचारों को नया आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वहीं दूसरी ओर युवाओं के अनुसार इसके कुछ नकारात्मक उपयोग प्रभाव भी उभर कर सामने आ रहे हैं– जैसे आज

स्मार्टफोन सामाजिक अव्यवस्था फैलाने का मुख्य कारण बन रहा है, क्योंकि ऑनलाइन गतिविधियों ने युवाओं को अन्य गतिविधियों से दूर किया है, उनके पास तुरंत सूचनाएं उपलब्ध हो जाती है जो भ्रामक भी होते हैं, सभी जानकारियां सत्य नहीं होती जिसके कारण व्यक्तिगत एवं सामाजिक विघटन में सहयोग देती है। स्मार्टफोन से उत्पन्न कुछ दोषों के कारण हम इसके गुणों की अवहेलना नहीं कर सकते। अतः पूर्णता स्मार्टफोन को दोषी नहीं ठहराया जा सकता वरन हमें इस माध्यम की उपयोगिता को समझना होगा। जहाँ तक दुरुपयोग का प्रश्न है इस संदर्भ में मार्शल मैकलुहन का एक कथन प्रासंगिक होता है जिसमें उन्होंने यह कहा है कि हमारे चारों ओर के माहौल की प्रौद्योगिकी किस प्रकार बनती है यह जानकारी हमें उसके निर्णायक प्रभाव को रोक सकती हैं।

पूर्व साहित्य सर्वेक्षण–

लेन हर्ट (2010) ने अपने शोध पत्र "सोशल मीडिया एंड मोबाइल इंटरनेट यूज़ एमंग टीन्स एंड एडल्ट" में पाया कि आज युवा वर्ग अपने दैनिक दिनचर्या में छोटे से लेकर बड़े कार्यों में स्मार्टफोन का प्रयोग कर रहा है। युवा अपनी आवश्यकता के साथ ही अनावश्यक गतिविधियों में भी स्मार्टफोन का प्रयोग कर रहे हैं एवं इसके प्रयोग में व्यस्त हो चुकें हैं। अतः अध्ययन के निष्कर्ष में यह निकलता है कि वह फ़ोन के आदती बनते जा रहे हैं।

एम. डी. रॉब्लेयर (2010) के अध्ययन ष्फाइन्डिंग ऑन फेसबुक इन हायर एजुकेशनष में उच्च शिक्षा में फेसबुक की उपयोगिता पर आधारित है। जिसमें यह दर्शाया है कि स्मार्ट फ़ोन व सोशल साइट के माध्यम से शिक्षक और शिष्य के मध्य शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार करने का प्रयास किया जा रहा है।

डॉक्टर आरिफ मोइन (2011) ने अपने शोध में "वुमन इम्पावरमेंट, रोल आप सोशल मीडिया" जो कि हैदराबाद शहर पर आधारित है तथा यह अध्ययन दर्शाता है कि आज स्मार्टफोन ने महिलाओं के विचार अभिव्यक्ति को बेहतर बनाया है। जहाँ पर महिलाओं ने अपने विचार एवं अनुभव ज्ञान एवं जीवन शैली को साझा कर सकती है। तथा आत्मविश्वास एवं सामाजिक अतः क्रिया में वृद्धि कर सशक्त महिला के रूप में उभर रही है।

साधना जफ़र एवं एच (2011) ने अपने अध्ययन में पाया कि युवा उपभोक्ता स्मार्टफोन पर दिखाए जा रहे विज्ञापन के प्रति सकारात्मक रुख रखते हैं। उन्होंने पाया कि युवाओं को लक्ष्य बनाकर स्मार्टफोन एक बहुत प्रभावी माध्यम हो सकता है।

मैरियन गायेथो (2018) के प्रकाशित शोध पत्र "व्हाट इज रियल इम्पैक्ट ऑफ सोशल मीडिया" युवा एवं सामाजिक परिवर्तन में स्मार्टफोन के प्रभाव पर केंद्रित है। जो स्पष्ट करता है कि पिछले 20 वर्षों में सूचना एवं प्रौद्योगिकी के तीव्र गति ने समस्त विश्व को परिवर्तित किया है। इसके माध्यम से राजनीति, व्यापार, विश्व संस्कृति, शिक्षा, करियर को नए आयाम मिले हैं।

शिवानी अरोड़ा (2014) ने अपने लेख "सोशल नेटवर्किंग साइट ए केस स्टडी ऑफ इंडियन यूथ" युवाओं द्वारा नेटवर्किंग साइट की अत्यधिक प्रयोग पर आधारित है। आज युवा नेटवर्किंग साइट का इतना अधिक प्रयोग कर रहे हैं कि उन्हें अपनी बहुमूल्य समय बीत जाने का अंदाजा ही नहीं है। वे सुबह उठने से लेकर देर रात तक नेटवर्किंग साइट पर व्यस्त रहते हैं, जो उनके अध्ययन शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य एवं अन्य प्रक्रियाओं को गहराई से प्रभावित कर रहा है।

अध्ययन की समस्या – स्मार्टफोन के आविष्कार का उद्देश्य तो सकारात्मक समाज के विकास के लिए किया गया जिसका काफी हद तक सही उपयोग भी हो रहा है। जैसे देखा जाए खासकर अपराध की दुनिया में पुलिस प्रशासन इस माध्यम का सही उपयोग कर अपराधिक घटनाओं को रोकने में काफी हद तक सक्षम है। विभिन्न क्षेत्रों में जन जागरूकता, उनका एक दूसरे से त्वरित संपर्क एवं महिला सशक्तीकरण एवं महिला अपराध के विरुद्ध बने कानूनों में इसकी अहम भूमिका दिखती है। वर्तमान समय में स्मार्टफोन उपकरण की

लोकप्रियता को शिखर पर देखा जा रहा है। स्मार्ट फ़ोन के रूप में आज समाज को नए रूपों में देखा जा रहा है। अगर देखा जाए तो सबसे खास बात यह है कि सामाजिक स्तर पर लोगों में सक्रियता बढ़ी है, यही कारण है कि सामाजिक सरोकार के प्रति लोगों में सामाजिक एकजुटता भी बढ़ी है। इसके माध्यम से सूचनाओं के आदान प्रदान में बहुत कम समय में एक दूसरे के पास पहुंचाया जाता है, जिससे लोगों की प्रतिक्रियाएं शामिल हो जाती है। इस स्मार्टफोन ने कई क्रांति व वैचारिक बहस को नया रूप दिया है। जहाँ पर अपनी बातों को रखने की पूरी आजादी है, लेकिन इसके कुछ दुरुपयोग भी सामने आ रहे हैं। रिश्तों में दूरियां तथा तलाक जैसी स्थिति भी फ़ोन के जरिए उत्पन्न हो रही है। यह सत्य है कि आज स्मार्टफोन तत्काल सूचना प्राप्ति का एक व्यापक मंच बन गया है– जैसे व्हाट्सएप फेसबुक जैसे सोशल साईट ने समाज के बड़े हिस्से द्वारा न केवल मनोरंजन के लिए उपयोगी है, अपितु यह कुछ अनैतिक दृश्य और श्रव्य सामग्री भी बहुत आसानी से युवाओं को प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार किसी भी तकनीक का आविष्कार सकारात्मक पहलुओं को ध्यान में रखते हुए किया जाता है किंतु कुछ लोगों की अज्ञानता अथवा विचलन स्वभाव के कारण उस तकनीक के दुरुपयोग से सामान्य लोगों के संबंधों तथा समाज पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है ।

अध्ययन का मुख्य उद्देश्य– स्मार्टफोन का युवाओं पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन।

- युवाओं के जीवन शैली पर स्मार्टफोन के उपयोग से पड़ने वाले प्रभावों का पता लगाना।
- युवाओं के सामाजिक एवं पारिवारिक मूल्यों पर पड़ने वाले स्मार्टफोन के प्रभावों का अध्ययन करना।
- युवाओं के शिक्षा एवं स्वास्थ्य पर पड़ने वाले स्मार्टफोन के प्रभावों का अध्ययन करना।

शोध प्रश्न –

- स्मार्टफोन का उपयोग करने वाले उत्तरदाताओं की आयु क्या है?
- स्मार्टफोन के उपयोग करने वाले उत्तरदाताओं का शैक्षणिक स्तर क्या है?
- स्मार्टफोन पर प्रतिदिन कितना समय व्यतीत किया जाता है?
- स्मार्टफोन का उपयोग किस कार्य हेतु करते हैं?
- स्मार्टफोन के बढ़ते उपयोग से पारिवारिक संबंधों पर कैसा प्रभाव पड़ता है?
- क्या स्मार्टफोन उपयोग के द्वारा युवाओं के जीवनशैली में परिवर्तन हुआ है?
- आप स्मार्टफोन पर कौन–कौन सी सोशल साइटों का उपयोग करते हैं?
- क्या स्मार्टफोन के उपयोग के प्रति युवाओं में लत पड़ती जा रही है?

अध्ययन क्षेत्र एवं शोध पद्धति– इस अध्ययन हेतु वाराणसी महानगर का चयन किया गया है। यह शहर प्राचीनता के रूप में अत्यधिक पुराना एवं कई मायनों में अपनी विशेषताएं को परिपूर्ण करता है। विभिन्न प्रकार की आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों की दृष्टि से भी यह शहर काफी महत्वपूर्ण है और यह उम्मीद की जा सकती है कि शहर में किए जाने वाले अध्ययन से युवाओं के स्मार्टफोन उपयोग करने वाली आदतों के बारे में जानकारी मिलेगा। इसके अंतर्गत सोद्देश्य पूर्ण निर्देशन के द्वारा 100 युवाओं को चुना गया है। शोध पत्र प्राथमिक स्रोतों पर आधारित हैं। स्मार्टफोन के बारे में जानने के लिए द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत इंटरनेट पर उपलब्ध विभिन्न प्रकार के वेब साइट आदि पर दिए गए रिपोर्टों से जानकारी ली गई है, वहीं पर प्राथमिक स्रोत के तौर पर युवाओं से संपर्क किया गया हैं।

तालिका क्रमांक –1
उत्तरदाताओं की आयु संबंधित जानकारी

आयु	आवृत्ति	प्रतिशत
15 से 20	35	35.00
20 से 25	40	40.00
25 से 40	25	25.00
योग	**100**	**100**

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कुल उत्तरदाताओं में 35 प्रतिशत युवा 15 से 20 आयु के, 40 प्रतिशत युवा 20 से 25 आयु के, 25 प्रतिशत युवा 25 से 30 आयु के हैं। अतः आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि स्मार्टफोन का सर्वाधिक उपयोग करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 20 से 25 वर्ष के आयु वाले युवाओं की है।

तालिका क्रमांक– 2

उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्तर की जानकारी

शैक्षणिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
अशिक्षित	8	8.00
प्राथमिक हाईस्कूल	18	18.00
इंटर मीडियट	21	21.00
स्नातक	28	28.00
स्नातकोत्तर	11	11.00
अन्य	14	13.00
योग	**100**	**100.00**

उपरोक्त तालिका क्रमांक दो से यह ज्ञात होता है 8 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित, 18 प्रतिशत उत्तरदाता प्राथमिक हाईस्कूल, 21 प्रतिशत उत्तरदाता इंटरमीडिएट, 28 प्रतिशत उत्तरदाता स्नातक, 11 प्रतिशत उत्तरदाता स्नातकोत्तर, 13 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य शैक्षणिक स्तर के युवा हैं। अत आंकड़ों से ज्ञात होता है की सर्वाधिक उत्तरदाताओं की संख्या स्नातक स्तर की हैं।

तालिका क्रमांक –3

आप स्मार्टफोन पर प्रतिदिन कितना समय व्यतीत करते हैं?

समय	आवृत्ति	प्रतिशत
0 से 3 घंटे	25	25.00
3 से 6 घंटे	39	39.00
6 से 9 घंटे	28	25.00
9 घंटें से अधिक	8	8.00
योग	**100**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका क्रमांक तीन से यह ज्ञात होता है कि 25 प्रतिशत उत्तरदात 0 से 3 घंटे, 39 प्रतिशत 3 से 6 घंटे, 28 प्रतिशत उत्तरदाता 6–9 घंटे, 8 प्रतिशत उत्तरदाता घंटे से ज्यादा स्मार्ट फ़ोन पर प्रतिदिन समय व्यतीत करते हैं। अतरू स्पष्ट होता है कि दिन–प्रतिदिन युवाओं का स्मार्टफोन पर रुझान बढ़ता जा रहा है सर्वाधिक उत्तरदाता 3–6 घंटे स्मार्टफोन पर व्यतीत करते हैं।

तालिका क्रमांक 4

आपका स्मार्टफोन के प्रति आकर्षण का क्या कारण है?

आकर्षण	आवृत्ति	प्रतिशत
चौंटिंग	22	22.00
नये मित्र बनाना	26	26.00
व्यापार	18	18.00
शैक्षिक जानकारी	30	30.00
कार्य	4	4.00
योग	**100**	**100.00**

उपयुक्त तालिका क्रमांक 4 से यह ज्ञात होता है कि 22 प्रतिशत उत्तरदाता चौटिंग के लिए, 26 प्रतिशत उत्तरदाता नए मित्र बनाने के लिए, 18ः उत्तरदाता व्यापार के लिए 30 प्रतिशत उत्तरदाता शैक्षिक जानकारी के लिये, 4 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य कार्य के लिए उपयोग करते हैं। अतः स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक उत्तरदाताओं की संख्या शैक्षिक जानकारी के लिए स्मार्ट फ़ोन का उपयोग करते हैं।

तालिका क्रमांक– 5
स्मार्टफोन के बढ़ते उपयोग से पारिवारिक संबंधों पर पड़ने वाले प्रभाव

संबंधों का प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत
आपसी मेल जोल बढ़ रही है	45	45.00
दूरियां बढ़ रही है	29	29.00
कोई प्रभाव नहीं पड़ता	26	26.00
योग	**100**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 5 से यह ज्ञात होता है की स्मार्टफोन के बढ़ते उपयोग से पारिवारिक संबंधों पर प्रभाव पड़ने संबंधित प्रश्न के उत्तर में 45 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जवाब दिया कि आपसी मेल जोड़ बड़ रही है 29 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जवाब दिया कि दूरियां बढ़ रही हैं 26 प्रतिशत उत्तरदाता ने जवाब दिया कि कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अतः स्पष्ट हो रहा है कि स्मार्टफोन के उपयोग से पारिवारिक संबंधों में मेलजोल बढ़ रहा है, सर्वाधिक उत्तरदाताओं ने ऐसा विचार किया है।

तालिका क्रमांक–6

स्मार्टफोन के उपयोग के द्वारा युवाओं कि जीवन शैली में बदलाव

जीवन शैली में बदलाव	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	43	43.00
नहीं	11	11.00
थोड़ा बहुत	28	28.00
कुछ कह नहीं सकते	18	18.00
योग	**100**	**100.00**

ऊपरी तालिका से ज्ञात होता है कि 43 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाँ में जवाब दिया है, 11 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने नहीं में जवाब दिया है, 28 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने थोड़ा बहुत एवं 18 प्रतिशत युवा उत्तरदाताओं ने कुछ कह नहीं सकते हैं में जवाब दिया है। अतः स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक संख्या में उत्तरदाताओं ने जवाब हाँ में दिया है।

तालिका क्रमांक 7

आप स्मार्टफोन पर कौन कौन सी सोशल साइट्स का उपयोग करते हैं।

सोशल साइट्स का उपयोग	आवृत्ति	प्रतिशत
फेसबुक	21	21.00
व्हॉट्सप	26	26.00
ट्विटर	11	11.00
इंस्टाग्राम	33	33.00
अन्य	9	9.00
योग	**100**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका 7 से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में 21 प्रतिशत उत्तरदाता फेसबुक पर, 26 प्रतिशत युवा उत्तरदाता व्हाट्सएप पर, 11 प्रतिशत उत्तरदाता ट्विटर पर, 33 प्रतिशत युवा उत्तरदाता इंस्टाग्राम पर, व 9 प्रतिशत युवा उत्तरदाता अन्य सोशल साइटों पर सक्रिय रहते हैं। अतः तालिका से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक संख्या में युवा उत्तरदाता इंस्टाग्राम पर सक्रिय रहते हैं।

तालिका क्रमांक –8

स्मार्टफोन उपयोग के प्रति युवाओं में लत के प्रति जानकारी

जनकारी	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	63	63.00
नहीं	16	16.00
कुछ कह नहीं सकते	21	21.00
योग	**100**	**100.00**

उपर्युक्त तालिका क्रमांक–8 से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाता में से 63 प्रतिशत युवा उत्तरदाता हां में जवाब दिए, 16 प्रतिशत युवा उत्तरदाता नहीं में जवाब दिए, 21 प्रतिशत युवा उत्तरदाताओं का कहना है कि कुछ कह नहीं सकते कि स्मार्ट फ़ोन के उपयोग की लत पड़ती है। अतः उपर्युक्त आंकड़ों से ज्ञात होता है कि सर्वाधिक युवा उत्तरदाता हां में जवाब प्रस्तुत किए हैं।

तालिका क्रमांक– 9

शैक्षणिक क्षेत्र में आप स्मार्टफोन का कितना उपयोग करते हैं।

स्मार्टफ़ोन का उपयोग	आवृत्ति	प्रतिशत
क्म	12	12.00
टधिक	39	39.00
बहुत अधिक	29	12.00
बिल्कुल नहीं	20	20.00
योग	**100**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में 12 प्रतिशत युवा उत्तरदाता ने कम जवाब दिया है, 39 प्रतिशत युवा उत्तरदाता अधिक, 29 प्रतिशत युवा उत्तरदाता बहुत अधिक, 20 प्रतिशत युवा उत्तरदाता बिल्कुल नहीं का जवाब दिए हैं। अतः स्पष्ट होता हैं कि युवा उत्तरदाता शैक्षणिक क्षेत्र में स्मार्टफोन का उपयोग अधिक करते हैं।

निष्कर्ष – वर्तमान समय में मानव जीवन के बीच स्मार्ट फ़ोन की लोकप्रियता काफी अधिक बढ़ गई है। यह संचार, शिक्षा, व्यापार और मनोरंजन का प्रमुख साधन बन गया हैं। इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि वर्तमान समय में स्मार्ट फ़ोन युवाओं के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका हैं। अधिकांश युवा प्रतिदिन 3 से 6 घंटे या उससे अधिक समय स्मार्ट फ़ोन पर व्यतीत करते हैं जिससे देखा जाय तो उनका दैनिक जीवन इस तकनीक पर काफी हद तक निर्भर हो गया है। स्मार्ट फ़ोन पर अधिकतर युवा एक निश्चित समय पर इस्तेमाल करने के बजाय उसे बार बार खोलते और बंद करते हैं। हमेशा साथ रखने के कारण स्मार्टफोन पर ज्यादातर में एक्टिव होते हैं। अगर इसके सकारात्मक पक्ष को देखे तो युवा ज्यादा लोगों से एक साथ जुड़ रहे है, उनके सामाजिक दायरा एवं मित्रों की संख्या भी बढ़ी है। जब कभी भी स्मार्टफोन पर अपने अकाउंट से कोई पोस्ट करता है तो उसे उस पोस्ट पर होने वाली प्रतिक्रिया का इंतजार रहता है। स्मार्टफोन के कुछ नकारात्मक प्रभाव भी सामने आये है। अत्यधिक उपयोग के कारण युवाओं के पारिवारिक संबंधों में दूरी बढ़ने, जीवन शैली में परिवर्तन आने तथा समय प्रबंधन में कठिनाई जैसी समस्याएँ देखने को मिली है। कई उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया कि स्मार्ट फ़ोन के अधिकतर उपयोग के कारण उनको स्मार्ट फ़ोन का एडिक्शन (लत) लग गई हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि स्मार्टफोन युवाओं के जीवन में उपयोगी साधन होने के साथ साथ एक चुनौती भी बनता जा रहा है। इसलिए आवश्यक है कि इसका उपयोग संतुलित और नियंत्रित तरीके से किया जाए, ताकि इसके लाभों का अधिकतम उपयोग हो सके और इसके नकारात्मक प्रभाव को कम किया जा सके।

सुझाव –

- युवाओं को स्मार्टफोन का उपयोग सीमित समय 2–3 घंटे तक ही करना चाहिए।
- पढ़ाई के समय स्मार्टफोन का उपयोग केवल शैक्षिक कार्यों के लिए किया जाना चाहिए।
- स्कूल और कॉलेजों में डिजिटल जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाने चाहिए।

- रात के समय स्मार्टफोन का उपयोग कम करके नींद की गुणवत्ता को सुधारना चाहिए।
- स्मार्टफोन के अधिक उपयोग से बचने के लिए खेलकूद और अन्य गतिविधियों में भाग लेना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

- डॉ सिंह रश्मी (2018), "समस्याग्रस्त इंटरनेट उपयोग भारतीय परिदृश्य", दिसम्बर–2018, 387–392.
- सिंह राज विजय, रावत तृप्ति, कुमार संजीत (2020), "स्मार्टफोन का नैनीताल के युवाओं पर प्रभाव", जनरल ऑफ उत्तराखंड, ऐकैडेमिक और ऐड्मिनिस्ट्रेशन नैनीताल, वाल्यूम issue, 1, 2020
- लेनहार्ट अमांडा (2010), "सोशल मीडिया एंड मोबाइल इंटरनेट यूज अमंग टीन्स एंड एडल्ट इंटरनेट एंड अमेरिकन लाइव", प्रोजेक्ट फरवरी (2010).
- एमडी रॉब लॉयर (2010), "फाइन्डिंग ऑन फेसबुक इन हायर एजुकेशन ए कंपैरिजन ऑफ कॉलेज फैकल्टी एंड स्टूडेंट्स यूज़ एंड पर्सेप्शन आप सोशल नेटवर्किंग साइट'', जून (2010) 13 (3) 134–140.
- अरोरा शिवानी (2014), "सोशल नेटवर्किंग ए स्टडी ऑफ इंडियन यूथ मैनेजमेंट कन्वर्सेशन", वॉल्यूम–1. 5, पृ0–1–2.
- गायतो मेरेनो (2018), "व्हाट इज़ द रियल इम्पैक्ट ऑफ सोशल मीडिया", 16 अगस्त 2018.

****

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण पुनर्निर्माण में नशाखोरी एक अभिशाप : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

शिवम सिंह
शोध छात्र- समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी०जी० कॉलेज गंगापुर वाराणसी(उ०प्र०)
प्रो० आलोक कुमार कश्यप
विभागाध्यक्ष- समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी०जी० कॉलेज गंगापुर वाराणसी(उ०प्र०)

सारांश
प्रस्तुत शोध पत्र ग्रामीण पुनर्निर्माण (Rural Reconstruction) के मार्ग में नशाखोरी को एक प्रमुख बाधा के रूप में विश्लेषित करता है। गाँवों में शराब, तंबाकू, गांजा और रासायनिक नशों का बढ़ता चलन विकास को रोक रहा है। बेरोजगारी, गरीबी, शिक्षा की कमी और साथियों का दबाव युवाओं को नशे की ओर धकेलते हैं। सस्ती कच्ची शराब और नशीले पदार्थ आसानी से उपलब्ध होने से समस्या गंभीर हुई है। नशे के कारण ग्रामीण युवा खेती, पशुपालन और कुटीर उद्योगों से विमुख हो रहे हैं। कमाई का बड़ा हिस्सा नशे में खर्च होने से परिवार कर्ज में डूबते हैं और गरीबी बढ़ती है। सामाजिक स्तर पर नशाखोरी घरेलू हिंसा, तलाक और बाल अपराध को बढ़ावा देती है। बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं और अपराध में लिप्त हो जाते हैं। पंचायतों में विकास कार्यों के प्रति उदासीनता आती है, जिससे योजनाएँ असफल होती हैं। आपसी भाईचारा टूटता है और गाँव का सामाजिक तानाबाना बिखर जाता है-। स्वास्थ्य पर भी नशे का गहरा असर है। टीबी, लीवर खराब, कैंसर और मानसिक रोग बढ़ रहे हैं। ग्रामीण स्वास्थ्य केंद्रों का बजट इनके इलाज में लग जाता है, जबकि पोषण और टीकाकरण जैसे काम पीछे छूट जाते हैं। अतः समाधान के लिए जागरूकता अभियान, रोजगार के अवसर, सख्त कानूनी कार्रवाई और पंचायत स्तर पर नशा मुक्ति केंद्र जरूरी हैं। जब गाँव का हर व्यक्ति स्वस्थ और जिम्मेदार होगा, तभी सही मायने में ग्रामीण पुनर्निर्माण संभव होगा। प्रस्तुत शोध पत्र द्वितीयक स्रोत पर आधारित है ।

मुख्य शब्दग्रामीण पुनर्निर्माण :, नशाखोरी, बेरोजगारी, गरीबी, घरेलू हिंसा, सामाजिक विघटन, स्वास्थ्य संकट, जागरूकता, नशा मुक्ति ।

प्रस्तावना

भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। *महात्मा गांधी* ने कहा था कि *भारत का विकास गाँवों के विकास से ही संभव है।* ग्रामीण पुनर्निर्माण का अर्थ केवल सड़क, बिजली या पानी पहुँचाना नहीं है, बल्कि गाँवों का सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और सांस्कृतिक पुनर्गठन करना है। इसका उद्देश्य किसानों को आत्मनिर्भर बनाना, ग्रामीण युवाओं को रोजगार देना, शिक्षा व स्वास्थ्य सुविधाएँ बेहतर करना और सामाजिक कुरीतियों को समाप्त कर एक सशक्त ग्रामीण समाज का निर्माण करना है। स्वतंत्रता के बाद से सरकार ने पंचायती राज, मनरेगा, स्वच्छ भारत मिशन, डिजिटल इंडिया जैसी अनेक योजनाएँ चलाई हैं। इनका मूल उद्देश्य गाँवों को शहरों के बराबर लाना है। परंतु इस विकासयात्रा में एक बड़ी बाधा नशाखोरी बनकर खड़ी हो गई है। नशाखोरी आज ग्रामीण भारत के लिए अभ-िशाप बन चुकी है।

पहले गाँवों में केवल तंबाकू या देशी शराब का सीमित प्रचलन था, लेकिन अब गांजा, अफीम, स्मैक, कोरेक्स, व्हाइटनर और सिंथेटिक ड्रग्स तक गाँवगाँव पहुँच गए हैं। पंजाब-, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और पूर्वोत्तर राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में नशे की समस्या भयावह रूप ले चुकी है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण पुरुषों में 29% से अधिक लोग शराब का सेवन करते हैं। युवाओं में यह आँकड़ा और बढ़ रहा है। नशाखोरी के कारण अनेक हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी सबसे बड़ा कारण है। खेती घाटे का सौदा बनती जा रही है। छोटी जोत, महँगे बीजखाद और बाजार का अभाव किसानों को निराश करता है। खाली बैठा युवा तनाव से - बचने के लिए नशे का सहारा लेता है। दूसरा कारण शिक्षा और जागरूकता की कमी है। अधिकतर ग्रामीण लोग नशे के दुष्परिणामोंं दुष्परिणामोंं से अनजान हैं। साथियों का दबाव, फिल्मों का प्रभाव और गलत संगत भी नशे की लत लगाते हैं। इसके अलावा मनोरंजन के साधनों का अभाव, पारिवारिक कलह और प्रवासी मजदूरों द्वारा शहरों से लाई गई नशे की संस्कृति भी जिम्मेदार है। कच्ची शराब का धंधा गाँवों में कुटीर उद्योग की तरह फलफूल रहा है क्योंकि यह सस्ती और आसानी से उपलब्ध है। नशाखोरी का प्रभाव - बहुआयामी है। आर्थिक रूप से यह गाँवों को खोखला कर रही है। जो श्रम खेतों में लगना चाहिए, वह नशे की भेंट चढ़ जाता है। नशेड़ी व्यक्ति की कार्यक्षमता घटती है, दुर्घटनाएँ बढ़ती हैं और कृषि उत्पादन गिरता है। दिहाड़ी मजदूर अपनी पूरी कमाई शराब में उड़ा देता है। इससे परिवार भुखमरी और कर्ज के दलदल में फँस जाता है। मनरेगा या किसान सम्मान निधि का पैसा भी घर न पहुँचकर शराब के ठेके पर चला जाता है। परिणामस्वरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था का चक्र टूट जाता है।

सामाजिक दृष्टि से नशाखोरी गाँव के तानेबाने को नष्ट कर रही है। नशे में व्यक्ति अपना विवेक खो देता है। घरेलू हिंसा-, पत्नी व बच्चों से मारपीट, गाली गलौज आम बात हो गई है। कई महिलाएँ विधवा होने को मजबूर हैं क्योंकि उनके पति लीवर-खराब होने या दुर्घटना में मर जाते हैं। बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं। वे या तो बाल मजदूरी करते हैं या खुद नशे के आदी हो जाते हैं। गाँवों में चोरी, लूट और आपसी रंजिश की घटनाएँ बढ़ी हैं। पंचायतों में होने वाली बैठकों में नशेड़ी लोगों की भागीदारी न होने से विकास कार्य प्रभावित होते हैं। ग्राम सभाएँ केवल कागजों तक सीमित रह जाती हैं। स्वास्थ्य के क्षेत्र में स्थिति और भयावह है। ग्रामीण भारत में स्वास्थ्य सेवाएँ पहले से कमजोर हैं। ऊपर से नशे के कारण टीबी, कैंसर, लीवर सिरोसिस, मानसिक रोग और हृदय रोग महामारी की तरह फैल रहे हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों का अधिकांश बजट नशे से जुड़ी बीमारियों के इलाज में खर्च हो जाता है। गर्भवती महिलाएँ कुपोषित हैं क्योंकि घर का पैसा नशे में जाता है। इससे कम वजन के बच्चे पैदा होते हैं और शिशु मृत्यु दर बढ़ती है।नैतिक पतन भी चिंताजनक है। जिस गाँव को संस्कार और परंपरा का केंद्र माना जाता था, वहाँ अब नशे के कारण अपराध बोध खत्म हो रहा है।-

युवा पीढ़ी श्रम की गरिमा भूल रही है। नशा करो", टेंशन भगाओजैसी सोच ग्रामीण युवाओं को दिशाहीन बना रही है। इस " प्रकार नशाखोरीग्रामीण पुनर्निर्माण के प्रत्येक स्तंभ को कमजोर कर रही है। बिना नशा मुक्त समाज के डिजिटल इंडिया, मेक इन इंडिया या आत्मनिर्भर भारत का सपना पूरा नहीं हो सकता। गाँव तब तक सशक्त नहीं हो सकते जब तक वहाँ का हर व्यक्ति शारीरिक, मानसिक और आर्थिक रूप से स्वस्थ न हो। इसलिए नशाखोरी को केवल एक व्यक्ति की बुरी आदत न मानकर पूरे ग्रामीण विकास के लिए अभिशाप मानना होगा। इसके उन्मूलन के लिए सरकार, पंचायत, स्कूल, धार्मिक संगठन और परिवार को मिलकर काम करना होगा। भारत की आत्मा गांवों में बसती है, लेकिन आज ये गांव 'विकास' के बजाय 'विनाश' की ओर अग्रसर हैं। ग्रामीण पुनर्निर्माण का अर्थ है- आर्थिक आत्मनिर्भरता, सामाजिक समरसता और स्वास्थ्य। नशाखोरी इन तीनों स्तंभों पर प्रहार करती है। शराब, अफीम, गांजा और अब सिंथेटिक ड्रग्स (जैसे चिट्टा) ने ग्रामीण युवाओं की कार्यक्षमता को समाप्त कर दिया है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. ग्रामीण क्षेत्रों में नशाखोरी के बढ़ते प्रचलन के मुख्य कारणों की पहचान करना।

2. नशाखोरी का ग्रामीण अर्थव्यवस्था, कृषि उत्पादन और परिवारों की आय पर पड़ने वाले प्रभाव का विश्लेषण करना।

3. नशे के कारण ग्रामीण समाज में बढ़ रही घरेलू हिंसा, अपराध और शिक्षा की हानि का अध्ययन करना।

4. नशाखोरी से उत्पन्न स्वास्थ्य समस्याओं और ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं पर पड़ने वाले बोझ का मूल्यांकन करना।

5. सरकारी योजनाओं और NDPS Act के क्रियान्वयन में आ रही व्यावहारिक बाधाओं को समझना।

6. ग्रामीण पुनर्निर्माण हेतु नशा मुक्ति के लिए प्रभावी रणनीति, जनजागरूकता मॉडल और पंचायत की भूमिका सुझाना।-

<u>ग्रामीण पुनर्निर्माण में बाधाएं (Impact Analysis)</u>

नशाखोरी के कारण ग्रामीण पुनर्निर्माण में उत्पन्न बाधाएँग्रामीण पुनर्निर्माण का लक्ष्य गाँवों को आर्थिक, सामाजिक और नैतिक रूप से सशक्त बनाना है। लेकिन नशाखोरी इस पूरे अभियान में सबसे बड़ा रोड़ा बनकर उभरी है। नशे के कारण कई स्तरों पर बाधाएँ पैदा होती हैं :

1.*आर्थिक पुनर्निर्माण में बाधा* - नशे की लत ग्रामीण श्रमशक्ति को खत्म कर रही है। युवा शराब, गांजा, स्मैक के आदी होकर खेती, पशुपालन और मनरेगा जैसे कामों से कट जाते हैं। इससे कृषि उत्पादन घटता है और परिवार की आय गिरती है। एक सर्वे के मुताबिक नशा करने वाले परिवार अपनी कमाई का 35-40% हिस्सा सिर्फ नशे पर खर्च कर देते हैं। किसान सम्मान निधि या दिहाड़ी का पैसा घर न पहुँचकर ठेके पर चला जाता है। नतीजा कर्ज, भुखमरी और गरीबी का दुष्चक्र। स्वरोजगार और कुटीर उद्योग इसलिए फेल हो जाते हैं क्योंकि काम करने वाले लोग ही नशे में डूबे रहते हैं।

2.सामाजिक पुनर्निर्माण में बाधा - नशा गाँव के सामाजिक ताने-बाने को तोड़ देता है। नशे में घरेलू हिंसा, पत्नी-बच्चों से मारपीट और तलाक के मामले बढ़ते हैं। बच्चे स्कूल छोड़कर या तो बाल मजदूरी करते हैं या खुद नशे की गिरफ्त में आ जाते हैं। ग्राम सभा और पंचायत की बैठकों में लोगों की भागीदारी घटती है क्योंकि नशेड़ी व्यक्ति सामुदायिक विकास में रुचि नहीं लेता। आपसी भाईचारा खत्म होकर झगड़े, चोरी और मुकदमेबाजी बढ़ती है। "सबका साथ, सबका विकास" की भावना कमजोर पड़ जाती है।

3.स्वास्थ्य और मानव संसाधन में बाधा - नशे से टीबी, लीवर सिरोसिस, कैंसर और मानसिक रोग महामारी की तरह फैलते हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों का बजट इन्हीं बीमारियों के इलाज में खर्च हो जाता है। पोषण, टीकाकरण और मातृ-शिशु देखभाल जैसे बुनियादी काम पीछे छूट जाते हैं। कुपोषित माँएँ कमजोर बच्चों को जन्म देती हैं, जिससे शिशु मृत्यु दर बढ़ती है। स्वस्थ मानव संसाधन के बिना कोई भी पुनर्निर्माण संभव नहीं।

4. बाधा नैतिक और प्रशासनिक - नशाखोरी से श्रम की गरिमा खत्म हो रही है। "नशा करो, टेंशन भगाओ" की सोच युवाओं को दिशाहीन बना रही है। गाँवों में कच्ची शराब का अवैध धंधा पुलिस-प्रशासन की मिलीभगत से चलता है। NDPS Act लागू नहीं हो पाता। नशा मुक्ति केंद्र दूर हैं और उनमें सुविधाओं की कमी है।

5. *महिला सशक्तिकरण में बाधा* - नशेड़ी पति की कमाई शराब में जाने से महिलाएँ आर्थिक तंगी झेलती हैं। स्वयं सहायता समूहों का पैसा भी छीन लिया जाता है। घरेलू हिंसा के कारण महिलाएँ न तो पंचायत में बोल पाती हैं, न ही रोजगार कर पाती हैं।

निवारण के उपाय और ग्रामीण पुनर्निर्माण की रणनीति

ग्रामीण पुनर्निर्माण के लिए केवल नशा मुक्ति केंद्र पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि एक **समग्र दृष्टिकोण (Holistic Approach)** की आवश्यकता है:

- **सामुदायिक भागीदारी:** ग्राम पंचायतों को 'नशा मुक्त ग्राम' बनाने के लिए संवैधानिक शक्तियां देना।
- **आर्थिक विकल्प:** स्वयं सहायता समूहों (SHGs) के माध्यम से युवाओं को कुटीर उद्योगों से जोड़ना।
- **सांस्कृतिक पुनरुत्थान:** ग्रामीण खेलों, अखाड़ों और लोक कलाओं को पुनर्जीवित करना ताकि युवाओं की ऊर्जा का सकारात्मक प्रयोग हो सके।
- **शिक्षा और परामर्श:** स्कूलों में 'जीवन कौशल' (Life Skills) की शिक्षा देना।

सुझाव
(Suggestion)

जन-जागरूकता अभियान: पंचायत, स्कूल और आंगनबाड़ी स्तर पर नुक्कड़ नाटक, रैली और चौपाल के माध्यम से नशे के दुष्परिणाम बताएँ। धार्मिक गुरुओं और स्थानीय नेताओं को जोड़कर अभियान चलाएँ। रोजगार सृजन: खाली बैठा युवा ही नशे की ओर जाता है। मनरेगा को मजबूत करें, कौशल विकास केंद्र खोलें और कृषि आधारित कुटीर उद्योग बढ़ाएँ। स्वयं सहायता समूहों से युवाओं को जोड़ें। कानून का सख्त पालन: कच्ची शराब और नशा तस्करी पर NDPS Act के तहत कड़ी कार्रवाई हो। पुलिस की जवाबदेही तय हो। गाँव स्तर पर निगरानी समिति बने। नशा मुक्ति केंद्र: हर ब्लॉक में सरकारी नशा मुक्ति केंद्र खोलें। आशा और ANM को प्रशिक्षित कर घर-घर काउंसलिंग कराएँ। ठीक हुए लोगों को "नशा मुक्त दूत" बनाकर प्रेरणा का स्रोत बनाएँ। शिक्षा और खेल: स्कूलों में नैतिक शिक्षा और नशा-विरोधी पाठ अनिवार्य हों। हर गाँव में खेल मैदान व पुस्तकालय बने ताकि युवा ऊर्जा सकारात्मक दिशा में लगे। महिला भागीदारी: महिलाओं के स्वयं सहायता समूह नशा विरोधी आंदोलन की अगुवाई करें। शराबबंदी के लिए ग्राम सभा में प्रस्ताव पास

कराएँ। वैकल्पिक मनोरंजन: गाँवों में सांस्कृतिक कार्यक्रम, भजन मंडली और सामुदायिक केंद्र विकसित हों ताकि खाली समय का सदुपयोग हो।

निष्कर्ष
(Conclusion)

ग्रामीण पुनर्निर्माण तब तक एक सपना रहेगा जब तक गांव नशे की गिरफ्त में रहेंगे। नशाखोरी केवल एक स्वास्थ्य समस्या नहीं, बल्कि एक सामाजिक कैंसर है। इसके लिए 'टॉप-डाउन' (सरकारी कानून) के बजाय 'बॉटम-अप' (जन आंदोलन) दृष्टिकोण की आवश्यकता है। *गांधी जी के 'ग्राम स्वराज'* की परिकल्पना में नशा मुक्त समाज अनिवार्य शर्त थी। ग्रामीण पुनर्निर्माण का अर्थ है गाँवों का सामाजिक, आर्थिक और नैतिक विकास। लेकिन नशाखोरी इस पूरे ढाँचे को दीमक की तरह खोखला कर रही है। गाँवों की प्रगति का रास्ता खेतों, शिक्षा और स्वस्थ परिवारों से होकर गुजरता है, जिसे नशा बीच में ही रोक देता है। नशे के कारण ग्रामीण युवाओं की कार्यक्षमता नष्ट हो रही है। जो हाथ खेतों में हल चलाते, पशुपालन करते या कुटीर उद्योग लगाते, वे शराब, गांजा और तंबाकू में उलझकर निठल्ले हो जाते हैं। इससे कृषि उत्पादन घटता है और परिवार कर्ज के जाल में फँस जाता है। मनरेगा या सरकारी योजनाओं से मिला पैसा भी नशे में उड़ जाता है, जिससे गरीबी और बढ़ती है। सामाजिक तानेबाने पर भी नशे का गहरा असर है-। नशे में घरेलू हिंसा बढ़ती है, महिलाएँ असुरक्षित होती हैं और बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं। पंचायत स्तर पर होने वाले विकास कार्यों में पारदर्शिता खत्म हो जाती है क्योंकि नशेड़ी व्यक्ति सहीगलत का फैसला नहीं कर पाता-। आपसी भाईचारा टूटता है और अपराध, चोरी, लड़ाईझगड़े आम हो जाते हैं-। स्वास्थ्य के मोर्चे पर ग्रामीण भारत पहले से कमजोर है। अतः नशाखोरी ग्रामीण पुनर्निर्माण की सबसे बड़ी बाधा है। बिना नशा मुक्त समाज के डिजिटल इंडिया, स्वच्छ भारत या आत्मनिर्भर गाँव का सपना अधूरा रहेगा। इसके लिए पंचायत, स्कूल, आशा कार्यकर्ता और परिवार को मिलकर काम करना होगा। जागरूकता, सख्त कानून, सस्ते मनोरंजन के साधन और रोजगार ही गाँवों को इस अभिशाप से बचा सकते हैं। जब गाँव का हर व्यक्ति नशे से दूर होगा, तभी सही मायने में ग्रामीण पुनर्निर्माण संभव होगा।

संदर्भ
(References)

1. अहूजा, राम (2014). *सामाजिक समस्याएं*. रावत पब्लिकेशन्स।
2. श्रीनिवास, एम. एन. (1966). *Social Change in Modern India*.
3. राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) की वार्षिक रिपोर्ट।
4. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय (MoHFW) की रिपोर्ट।
5. Kashyap, Alok Kumar."A Study of Self Help Group Lead Women Empowerment." The Opinion, Bi annual, Srijan Research Foundation Varanasi,U.P.,July-December 2024
6. Mishra, Pratiksha, and Alok Kumar Kashyap." The Impact of Self Help Group on Decision Making Power Among Rural Women." Journal of Socio-Educational & Cultural Research, Srijan Research Foundation Varanasi,U.P., January-March 2026

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

भारतीय शिक्षा के इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ० विपिन तेवतिया
शोधार्थी, अध्यापक शिक्षा विभाग
डी०ए०वी० कॉलेज, मुजफ्फरनगर, उ0प्र0
एवं
प्रो० सुरेन्द्र पाल
अध्यापक शिक्षा विभाग
डी०ए०वी० कॉलेज, मुजफ्फरनगर, उ0प्र0

शोध पत्र सार

भारतीय शिक्षा प्रणाली विश्व की प्राचीनतम शिक्षा प्रणालियों में से एक है, इस शिक्षा प्रणाली ने बहुत सारे प्रतिभाशाली व्यक्तित्वों का निर्माण किया है, जिन्होने सम्पुर्ण विश्व को गौरवान्वित किया हैं। प्रारंभिक समय से विश्व के लिए भारत आश्चर्य की भूमि था! भारत की प्रसिद्धि भारतीय संस्कृति, धन, धर्म, दर्शन, कला, वास्तुकला, और इसकी शैक्षिक प्रथाएँ दूर–दूर तक व्याप्त थीं। प्राचीन काल की शिक्षा प्रणाली को इसका स्रोत माना जाता था ज्ञान, परंपराएँ और प्रथाएँ जिन्होंने मार्गदर्शन और प्रोत्साहन दिया। ऋग्वेद के समय से ही हमारी शिक्षा प्रणाली का विकास हुआ और विद्यार्थियों के समग्र विकास पर ध्यान केंद्रित किया, व्यक्ति के आंतरिक और बाहरी दोनों के विकास का ध्यान रखा, यह शिक्षा नैतिक, शारीरिक, आध्यात्मिक और बौद्धिक पर केंद्रित थी। प्रस्तुत शोध–पत्र में शोधकर्ता ने भारतीय शिक्षा के इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया है।

मूलशब्द :– पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियाँ, विद्यार्थी।

प्रस्तावना :– सामान्यतः शिक्षा प्रणाली का सम्बन्ध उस क्रिया से है जो शैक्षिक संस्थानों में शिक्षण और सीखने की कार्यप्रणाली से सम्बन्धित है, यह समाजीकरण के विभिन्न अनौपचारिक और गैर–औपचारिक साधनों की श्रृंखला है। प्रत्येक देश का सामाजिक वर्ग शिक्षा से प्रभावित होता है, विभिन्न शोधों में पाया गया है कि शिक्षा व्यक्ति की व्यावसायिक स्थिति और वयस्क जीवन में सफलता की संभावनाओं का सबसे यथोचित निर्धारक है। शैक्षिक संस्थानों की सफलता या असफलता के मध्य सम्बन्ध सम्पूर्ण विश्व में तीव्र गति से बढ़ा है। पारिवारिक एवं सामाजिक–आर्थिक स्थिति की दीर्घकालिक प्रवृत्ति से ज्ञात होता है कि जैसे–जैसे समाज

औद्योगिक और आधुनिक होते जाते हैं, उसी प्रकार से शैक्षिक परिणामों और व्यावसायिक उपलब्धियों को निर्धारित करने में सामाजिक वर्ग का महत्व बढ़ता जाता है। शिक्षा समाजीकरण के विभिन्न अनौपचारिक और गैर–औपचारिक साधनों (ग्रामीण विकास परियोजनाएं और अभिभावक–बाल सम्बन्धों के माध्यम) के विपरीत शैक्षिक संस्थानों के वातावरण में शिक्षण और सीखने की विधियों से सम्बन्धित है।

समाज विज्ञानियों द्वारा शिक्षा को समाज के मूल्यों और संचित ज्ञान के संचरण के रूप में देखा गया है। इस अर्थ में यह समाजीकरण अथवा संस्कृतिकरण के समान है, बच्चे जब जन्म लेते हैं, तब वह संस्कृति के ज्ञान से अज्ञात होते हैं। शिक्षा उन्हें संस्कृति सीखने, वयस्कता के नियमों में उनके व्यवहार को प्रवर्तित करने एवं समाज में उनकी उन्नत भूमिका की ओर निर्देशित करने के लिए संयोजित करती है। विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में अक्सर औपचारिक शिक्षा बहुत कम होती थी। जैसे– वर्तमान समय में स्कूल या कक्षाओं का संचालन होता है, इसके विपरीत शिक्षक सम्पूर्ण वातावरण को और सभी दैनिक गतिविधियों को प्रायः शैक्षिक संस्थानों और कक्षाओं के रूप में प्रदर्शित करता था। समाज जैसे–जैसे प्रवर्तित होते जा रहे हैं, उसी प्रकार से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाए जाने वाले ज्ञान की व्यवस्था किसी भी संस्कृति के लिए अधिक महत्वपूर्ण होती जा रही है। इसलिए, वर्तमान समय में सांस्कृतिक संचरण के अधिक चयनात्मक और कुशल साधन विकसित होने चाहिए। इसकी उन्नति औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा के विकास से ही सम्भव है।

शोध साहित्य का अध्ययन :

रॉय, सामंती (2004) ने बीसवीं शताब्दी की शिक्षा व्यवस्था पर अध्ययन किया और पाया कि शिक्षा का मूलभूत उद्देश्य मनुष्य को स्वअनुभव कराना है और शिक्षा के पाठ्यक्रम को व्यवहारिक एवं श्रम के महत्व को समझने वाला होना चाहिए। अध्ययन की विधि में आध्यात्मिक गुणों का समावेश होना चाहिए।

हुसैन, एजाज (2006) ने शिक्षा दर्शन के आध्यात्मिक दृष्टिकोण का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया कि शिक्षा के पाठ्यक्रम शिक्षा के स्वरूप तथा शिक्षा के विभिन्न अभिकरणों पर आध्यात्मिकता के दृष्टिकोण का प्रभाव पाया गया। शिक्षा का मुख्य आधार रोजगार सृजन एवं शिक्षित सभ्य समाज की स्थापना वाला भी होना चाहिए।

शर्मा, शंकर (2007) ने बौद्ध धर्म के साहित्य के आधार पर शिक्षा के प्रमुख तत्वों का विश्लेषण किया तथा इसके आधार पर निम्न तथ्य स्पष्ट हुए। बौद्ध शिक्षा दर्शन एवं वैदिक शिक्षा दर्शन समकालीन शिक्षा दर्शन हैं। वैदिक व्यवस्था में ऋषि मुनियों के आश्रम शिक्षा के केंद्र थे, इसी प्रकार बौद्ध भिक्षुक एवं बौद्ध मठ शिक्षा के मुख्य केंद्र थे।

कामोतारा, ए. (2009) ने प्रकृतिवादी दृष्टिकोण का वर्तमान भारतीय शिक्षा के साथ विश्लेषणात्मक अध्ययन किया। अध्ययन के अनुसार प्रकृतिवादी दृष्टिकोण का वैदिक शिक्षा संबंधी पाठ्यक्रम विषयवस्तु स्कूल प्रशासन आदि पर प्रभाव पाया गया।

शर्मा, बी.डी. (2011) ने वेदांत दर्शन के शैक्षिक प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन से ज्ञात हुआ कि शिक्षा पर वेदांत दर्शन का प्रभाव पड़ा। वेदांत दर्शन के शैक्षिक उद्देश्य एवं शिक्षण विधियां श्रेष्ठ पाई गई। शिक्षा को सर्वोदय के भाव को जागृत करना चाहिए, जिससे समाज में सेवा भाव का विकास हो और विद्यार्थियों में जनतंत्र की भावना जागृत हो।

शोध का औचित्य :– प्रस्तुत शोध पत्र में शोधकर्ता ने भारतीय शिक्षा के इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया है। यह शोध पत्र शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों की उपयोगिता को ज्ञात करके शिक्षा व्यवस्था को

और अधिक प्रभावशाली बनाने में सहायक होगा एवं अध्ययनरत विद्यार्थियों को रोजगार सृजन और शिक्षित सभ्य समाज का सफलतापूर्वक निर्माण करने के लिए प्रेरित करेगा।

शोध प्रश्न :

1. भारतीय शिक्षा के इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का वह माध्यम जिससे ज्ञात हो सके कि वर्तमान आधुनिक शिक्षा में क्या अन्तर है और समस्याओं को दूर करने के लिए भविष्य में क्या–क्या अपनाया जाना चाहिए ?

शोध उद्देश्य :

1. भारतीय शिक्षा के इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना।

शोध विधि :– प्रस्तुत शोध विश्लेषनात्मक एवं वर्णात्मक विधि पर आधारित है इस शोध में पूर्णतः द्वितीय आंकडों का प्रयोग करते हुए, वर्णात्मक व्याख्या कर निष्कर्ष निकाले गए हैं।

भारतीय शिक्षा के इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ :– पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ शिक्षा के मूलभूत घटक हैं, यह निर्धारित करते हैं कि विद्यार्थी क्या और कैसे सीखता हैं। पाठ्यक्रम विषय–वस्तु और सीखने के उद्देश्यों को रेखांकित करता है, जबकि शिक्षण विधियाँ विषय–वस्तु को पढ़ाने और छात्रों को पाठ्यक्रम से संलग्न करने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली रणनीतियाँ हैं। पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियाँ आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई हैं।

(क) वैदिक कालखण्ड में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ :

वैदिक काल में शिक्षा के पाठ्यक्रमों का निर्धारित धर्म एवं मानव व्यवसाय पर आधारित था और शिक्षा का कार्य मोक्ष प्राप्ति और आजीविका प्रदान करना था। इसलिए वैदिक आश्रमों और गुरुकुलों में वेदों तथा धर्म–शास्त्रों, गृह्य सूत्र आदि का अध्ययन कराया जाता था। कुछ आश्रमों और गुरुकुलों में अन्य उपयोगी विषयों और तत्वमीमांसा में शिक्षा प्रदान की जाती थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र अपने कार्य से सम्बन्धित विभिन्न पाठ्यक्रमों का अध्ययन करते थे। किन्तु अपने कर्मों के अनुसार कार्य क्षेत्रों और पाठ्यक्रमों के अध्ययन के प्रमाण भी मिलते हैं, इस प्रकार वर्ण और कर्म के अनुसार विभिन्न पाठ्यक्रमों का अध्ययन किया जाता था। वैदिक काल में, लड़कों के साथ–साथ लड़कियों को भी शिक्षण संस्थानों और गुरुकुलों में भेजा जाता था, और वे सभी विवाह से पहले विद्यार्थी जीवन में ब्रह्मचर्य आश्रम का पालन करते हुए विभिन्न विषयों का अध्ययन करते थे। प्रत्येक छात्र को व्यक्तिगत रूप से पढ़ाया जाता था, अर्थातः गुरु, छात्र को पढाता था, छात्र को एक दिन में दो या तीन वैदिक ऋचाएं याद करनी होती थीं. छात्र को गुरु के निर्देश के अनुसार शब्दों का सही उच्चारण करना होता था और ऋचाओं को ठीक उसी प्रकार से बोलना या गाना होता था जो परम्परा में निहित था, लिपि का विकास होने के बाद भी वैदिक मन्त्रों का मौखिक अध्यापन जारी रहा। क्योंकि उच्चारण और गायन की मूल परम्परा को मौखिक रूप में ही पूरी तरह सुरक्षित रखा जाता था, याद करके सीखने की विधि केवल वैदिक संहिताओं के लिए प्रयोग होती थी, अन्य विषयों को पढ़ाने के लिए व्याख्यान, प्रश्नोत्तर, शास्त्रार्थ इत्यादि शिक्षण विधियों का सहारा लिया जाता था। शिक्षण विधियाँ के रूप में वैदिक काल में अधिकांश शिक्षा मौखिक संचार के माध्यम से दी जाती थी, जिसे श्रुति और स्मृति के रूप में जाना जाता है। चूंकि शिक्षण दैनिक कार्यों के माध्यम से होता है, इसलिए छात्र ज्ञान के साथ व्यावहारिक कौशल भी सीखते थे। वैदिक शिक्षा का पाठ्यक्रम एक सरल, प्रकृति–केंद्रित समाज का निर्माण करता है और मानवीय ज्ञान व चरित्र दोनों को सशक्त बनाता है। वैदिक शिक्षा प्रणाली का पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ भले ही अतीत की बात हो, लेकिन इसकी शिक्षाएँ आज भी शाश्वत हैं।

(ख) बौद्ध कालखण्ड में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ :

मठ, विहार और महाविहार के रूप में ज्ञात शैक्षणिक संस्थानों से पता चलता है कि वे शास्त्र एवं पाठ्यक्रम के अध्ययन–अध्यापन के केंद्र थे, जिनमें नैतिक, दार्शनिक और ध्यानात्मक छात्र विकास के साथ–साथ बौद्ध साहित्य को पढ़ाने के लिए संगठित और लचीली संरचनाएँ थीं। बुद्ध ने अपनी पारस्परिक क्षमताओं का उपयोग उन व्यक्तियों को बौद्ध धर्म के सिद्धांतों को समझाने के लिए भी किया जिनकी सीखने की क्षमता भिन्न–भिन्न थी। उन्होंने शिक्षार्थियों को अपनी शिक्षण प्रक्रिया के केंद्र में रखा अर्थातः

- शिक्षार्थियों की क्षमता और समझने की योग्यता से मेल रखने वाली उपयुक्त विषय–वस्तु का चयन।
- शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं, मानसिकता, स्वभाव और सीखने की क्षमताओं का आकलन और समझना।
- उपयुक्त शिक्षण पद्धति का चयन, जो शिक्षार्थियों की सीखने की शैली के अनुकूल हो।

बुद्ध ने अपने शिष्यों को बौद्ध धर्म के सिद्धांतों और पाठ्यक्रम को स्पष्ट रूप से समझने और उन्हें प्रतिक्रिया, प्रेरणा मार्गदर्शन एवं सुदृढ़ीकरण प्रदान करके उनके अभ्यास को बढ़ाने एवं सीखने को केंद्र में रखा। बौद्ध धर्म सभी भिक्षुओं और आम जनता के शैक्षिक लाभ के लिए मौखिक परंपराओं के माध्यम से ज्ञान तक खुली पहुँच और भंडारण बनाए रखता है। बौद्ध शिक्षा पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियों की खुलेपन की यह प्रकृति सभी सामाजिक समूहों का स्वागत करती थी। यह शिक्षार्थियों को उनकी क्षमता और ज़रूरतों के अनुसार अपने सीखने के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्षम बनाती थी। इसका उद्देश्य व्यक्तियों की धारणाओं, मानसिकता और व्यवहार में परिवर्तन लाना था।

(ग) मध्य कालखण्ड में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ :

इस्लामी पाठ्यक्रम मुख्य रूप से पवित्र कुरान की शिक्षाओं का उपयोग ज्ञान प्रदान करता है और ऐसे वातावरण को बढ़ावा देता है जो इस्लामी मूल्यों के व्यावहारिक अनुप्रयोग को प्रोत्साहित करे, आध्यात्मिक विकास को शामिल करे और इस्लाम की गहरी समझ को पोषित करे, यह इस्लाम के मूल सिद्धांतों पर आधारित है, जैसा कि कुरान और सुन्नत में व्यक्त किया गया है। इस्लामी पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कुरान और सुन्नत की शिक्षाओं पर आधारित जानकारी का प्रसार करना और इस्लामी मूल्यों पर आधारित अनुभवों को बढ़ावा देना था। इस्लामी पाठ्यक्रम और इस्लामी आस्था की प्रकृति की धारणाएँ अविभाज्य हैं। विशेष रूप से इस्लामी पाठ्यक्रम इस्लामी दुनिया द्वारा सुसंगत और निश्चित ईश्वरीय सत्य, मूल्यों और मानदंडों के रूप में देखे जाने पर आधारित है। यह जटिलता परिवर्तनशील मानवीय अनुभवों, सीखने के माध्यमों और कौशलों से जुड़ी हुई है। इस्लामी पाठ्यक्रम इन सभी को एकीकृत करता है और इसे शिक्षार्थियों तक पहुँचाता है, ताकि शिक्षार्थी इस्लामी पूर्णता को प्राप्त कर सकें जिससे अल्लाह सम्बद्ध है। इसके माध्यम से इस्लामी पाठ्यक्रम प्रत्येक उपयोगी ज्ञान को मूर्त रूप देने के लिए शुद्ध इस्लामी धार्मिक ज्ञान को रेखांकित करता है। धर्मनिरपेक्ष शिक्षा के दृष्टिकोण से विभिन्न विषयों और गतिविधियों के माध्यम से शैक्षणिक उत्कृष्टता और समग्र विकास पर भी ध्यान दिया गया। कुरान और हदीस में पाई जाने वाली इस्लामी शिक्षा पद्धतियों में संवाद, कहानी सुनाना, दृष्टांत, अनुकरणीय व्यवहार, आदत डालना, नसीहत, चेतावनी, प्रोत्साहन और व्यावहारिक अनुप्रयोग शामिल हैं। इन इस्लामी शिक्षा पद्धतियों के अनुप्रयोग में पालन किए जाने वाले सिद्धांतों में इस्लामी शिक्षा के लक्ष्यों के साथ संरेखण, सुसंगतता, उपयुक्तता, सत्यता, लचीलापन और गतिशीलता शामिल हैं। जिससे यह सुनिश्चित होता है कि ये पद्धतियाँ इस्लामी शिक्षा के लक्ष्यों को प्राप्त करने के साधनों की अभिव्यक्ति हैं।

(घ) स्वतंत्रता के पूर्व के कालखण्ड में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ :

ब्रिटिश कालीन शिक्षा के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों ने पारंपरिक भारतीय पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का स्थान ले लिया। ब्रिटिश शिक्षा का मुख्य उद्देश्य भारतीयों का बौद्धिक या नैतिक उत्थान नहीं, बल्कि शिक्षित लोगों के एक ऐसे वर्ग का निर्माण करना था जो औपनिवेशिक सरकार के लिए प्रशासनिक और लिपिकीय कर्मचारी के रूप में कार्य कर सके। इस प्रणाली को भारतीय मानसिकता का पाश्चात्यीकरण करने और उन्हें ब्रिटिश मूल्यों और शासन की आवश्यकताओं के अनुरूप ढालने के लिए बनाया गया था। ब्रिटिश शासन के दौरान शिक्षा का पाठ्यक्रम पश्चिमी आदर्शों, वैज्ञानिक विचारों और साहित्यिक संस्कृति से अत्यधिक प्रभावित था। यह अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार और शिक्षित भारतीयों के एक निष्ठावान वर्ग के निर्माण का एक साधन था। शिक्षण माध्यम के रूप में अंग्रेजी प्राथमिक भाषा बन गई, स्थानीय भाषाएँ मुख्यतः धीरे–धीरे महत्व खोती गईं। अध्ययन के विषय पश्चिमी विज्ञान, साहित्य और दर्शन पर केंद्रित थे। ब्रिटिश काल के दौरान शिक्षण विधियों के रूप में अंग्रेजों ने एक औपचारिक, संरचित और परीक्षा–आधारित शिक्षण प्रणाली शुरू की, जो भारत की पारंपरिक मौखिक और संवादात्मक विधियों से बहुत अलग थी। इसके लिए विधियाँ अनुशासन, एकरूपता और औपनिवेशिक शासन के प्रति निष्ठा उत्पन्न करने के लिए बनाई गई थीं। औपचारिक और संरचित निर्देश के रूप में ब्रिटिश प्रणाली ने निश्चित समय–सारिणी, मानकीकृत पाठ्यक्रम और प्रशिक्षित शिक्षकों के साथ कक्षा में अनुशासन, समय की पाबंदी पर बल दिया। शिक्षक–केंद्रित निर्देशों ने पारंपरिक संवादात्मक और अनुभवात्मक शिक्षण स्वरूपों का स्थान ले लिया।

(च) स्वतंत्रता के पश्चात के कालखण्ड में प्रचलित शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियाँ :

स्वतंत्रता के पश्चात के काल की शिक्षा व्यवस्था ने आधुनिक भारतीय पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों का स्थान ले लिया। भारतीय शिक्षा प्रणाली का पाठ्यक्रम एक विकासशील लोकतंत्र की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विकसित हुआ है। पूर्व–प्राथमिक स्तर पर खेल–आधारित पाठ्यक्रम से लेकर विश्वविद्यालय स्तर पर साहित्य, इंजीनियरिंग, स्वास्थ्य, कृषि, व्यावसायिक शिक्षा और विशिष्ट पाठ्यक्रम तक, भारतीय शिक्षा व्यवस्था का उद्देश्य ज्ञान, कौशल और मूल्यों में संतुलन स्थापित करना है। यह भाषा, विज्ञान, व्यावसायिक प्रशिक्षण और सामाजिक विकास जैसे अन्य पाठ्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित करता है और राष्ट्र–निर्माण में योगदान के लिए शिक्षित एवं कुशल नागरिकों के निर्माण के भारत के दृष्टिकोण को दर्शाता है। स्वतंत्रता के पश्चात शिक्षण विधियाँ रटंत–आधारित औपनिवेशिक स्वरूप से शिक्षार्थी–केंद्रित, प्रौद्योगिकी–सक्षम और समावेशी रूप में विकसित हुई। इसका लक्ष्य सदैव शिक्षा को सार्थक, व्यावहारिक और लोकतांत्रिक बनाना रहा है, जिससे शिक्षार्थियों को न केवल रोज़गार के लिए बल्कि ज़िम्मेदार नागरिक के लिए भी तैयार किया जा सके। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस दृष्टिकोण को आगे बढ़ाते हुए अनुभवात्मक शिक्षा, लचीलेपन और समग्र विकास पर बल देती है, वर्तमान युग में डिजिटल और ऑनलाइन शिक्षा का तेज़ी से विकास हो रहा है, साथ ही व्यावसायिक शिक्षा और कौशल विकास को एकीकृत किया जा रहा है। प्रारंभिक शिक्षा में बदलाव और शिक्षकों के निरंतर प्रशिक्षण के माध्यम से शिक्षा को अधिक न्यायसंगत, समावेशी और आधुनिक बनाने का प्रयास किया जा रहा है। यह भारत में शिक्षण विधियों के विकास में एक नए युग का सूत्रपात करती है।

अध्ययन के निष्कर्ष : प्राचीन समग्र गुरुकुलों से लेकर एनईपी 2020जैसी नीतियों के तहत आधुनिक संरचनाओं तक विकसित हो रहे, भारतीय शिक्षा के पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियाँ आध्यात्मिक, नैतिक और वैज्ञानिक शिक्षा के अपने अनूठे मिश्रण के कारण वास्तव में अलग दिखाई देते हैं, यह डिजिटल एकीकरण जैसी विविध विधियों के माध्यम से युवाओं को वैश्विक मांगों के लिए तैयार करने के लिए प्रयास कर रहे हैं। अदारिनी कांजीलाल बिस्वास (2016) के अनुसार, ''मध्यकालीन भारत की शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियों में कई बदलाव और परिवर्तन हुए, जोकि धार्मिक शिक्षा और इस्लामी ज्ञान के विस्तार पर आधारित थे, इन परिवर्तनों और बदलावों का मुख्य उद्देश्य व्यक्तियों के बीच मुस्लिम शिक्षा के महत्व के बारे

में जागरूकता उत्पन्न करना था''। मृत्युंजय (2015) के अनुसार, ''भारतीय शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियों में समय के साथ व्यापक परिवर्तन आया। प्राचीन काल (वैदिक और बौद्ध काल) में छात्रों को आध्यात्मिक उत्थान के बारे में सिखाया जाता था''। श्रेया गोपाल (2023) के अनुसार, ''ब्रिटिश काल में अंग्रेजी पाठ्यक्रम लागू हुआ ताकि भारतीय ब्रिटिश कंपनियों के लिए कुशल कर्मचारी बना सकें और वर्तमान शिक्षा में पाठ्यक्रम अधिक व्यावहारिक और कौशल–आधारित हो गया है एवं कुशल और प्रभावी शैक्षिक पद्धतियाँ विकसित हुई हैं''।

समग्र रूप से यह कह सकते हैं कि प्राचीन शिक्षा के पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियों ने व्यक्तियों और समाज दोनों के लिए एक बेहतर भविष्य का मार्ग प्रशस्त किया। प्राचीन शिक्षा एक दीर्घकालिक शिक्षण शैली है, यह सांस्कृतिक मूल्यों के हस्तांतरण पर बल देती है, इसने भारतीय इतिहास के अलग–अलग चरणों में विकास के लिए उत्प्रेरक का कार्य किया। प्राचीन और आधुनिक शिक्षा पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियों का सम्मिश्रण अनुकूलनशीलता, रचनात्मकता और संतुलित शिक्षा को बढ़ावा देने में मदद कर सकता है। प्राचीन शिक्षा के पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियाँ आधुनिक शिक्षा के लिए मूल्यवान प्रोत्साहित रूप प्रदान करते हैं।

- नागरिक उत्तरदायित्व, बुनियादी जीवन कौशल, सरल शारीरिक श्रम सेवा के भाग को एकीकृत किया जा सकता है।
- गुणवत्तायुक्त परियोजना–आधारित शिक्षण विधियाँ, इंटर्नशिप और अप्रेंटिसशिप पर बल दिया जाए।
- सभी विषयों में औपचारिक वाद–विवाद और आलोचनात्मक विश्लेषण को व्यवस्थित रूप से शामिल किया जाए, जिससे छात्रों को प्रश्न पूछना और तर्क करना सिखाया जा सके।
- दैनिक विद्यालय कार्यक्रम में योग और चिंतन को शामिल किया जाए, जिससे केंद्रित श्वास तकनीक सिखाने से छात्रों की एकाग्रता और भावनात्मक लचीलेपन में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है।
- वैश्विक आदान–प्रदान कार्यक्रमों और आभासी सहयोग को प्रोत्साहित किया जाए।
- भारतीय शैक्षणिक संस्थानों को अंतरराष्ट्रीय विद्वानों के संवाद के केंद्रों के रूप में स्थापित किया जा सकता है।
- बहुभाषावाद पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित किया जाए, जिससे भारतीय शास्त्रीय भाषा में उच्च दक्षता सुनिश्चित हो ताकि समृद्ध साहित्यिक और ऐतिहासिक स्रोतों का उपयोग किया जा सके।
- दृश्य और प्रदर्शन कलाओं तथा विभिन्न व्यावसायिक/तकनीकी कौशलों (शिल्प) में उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा को पुनः स्थापित किया जाए और इन्हें माध्यमिक विषयों के विपरीत महत्वपूर्ण शैक्षिक धाराओं के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।
- धर्मनिरपेक्ष और धार्मिक ज्ञान के एकीकरण पर ध्यान केंद्रित करना, ताकि वैदिक ग्रन्थों के ज्ञान (चिकित्सा, गणित, ज्योतिष, रसायण आदि) के द्वारा आधुनिक विषयों में श्रेष्ठता स्थापित की जा सके।

भारत की शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों की एक समृद्ध प्रणाली है, यह प्राचीन गुरुकुल के समग्र विकास (मन, शरीर, आत्मा) के आदर्शों से लेकर मध्ययुगीन धार्मिक विद्यालयों (मकतब/मदरसा) से होते हुए आधुनिक संरचित शिक्षा तक विकसित हुई है, जो अब एनईपी 2020 जैसी नीतियों द्वारा संचालित है, जिसका उद्देश्य पारंपरिक मूल्यों को समकालीन कौशल के साथ जोड़ना है। यह विविध आबादी के लिए समावेशी, लचीले और भविष्य के लिए तैयार पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों पर ध्यान केंद्रित करती है, और अपने निरंतर अनुकूलन में वास्तव में विशिष्ट स्थान रखती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :

- कुमार, विनोद (1989). शिक्षा और मनोविज्ञान, कल्याणी पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
- गिरि, महादेवानंद (1947). वैदिक संस्कृति, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता।
- मुखर्जी, एस.एन. (1955). भारत में शिक्षा का इतिहास, आचार्य पुस्तक विभाग, बड़ौदा।
- कबीर, हुमायूं (1961). भारतीय शिक्षा दर्शन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे।
- भंडारकर डी.के. (1977). प्राचीन भारतीय संस्कृति के कुछ पहलू, ओरिएंट प्रकाशन, दिल्ली।
- पाण्डेय, रामसकल (1994). शैक्षिक नियोजन एवं वित्त प्रबंधन, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
- घोष, सुरेश चंद्र (2001). प्राचीन भारत में शिक्षा का इतिहास, मुंशीराम मनोहर लाल प्रकाशन, नई दिल्ली।
- आर, उदिता (2012). शिक्षार्थी और शिक्षण का विकास, डोरलिंग किंडरस्ले प्रकाशन, नोएडा।
- भटनागर, ए.बी, एवं भटनागर, ए. (2013). शिक्षार्थी और शिक्षण सीखने की प्रक्रिया का विकास, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ।
- Keay, F. E. (1918). Ancient Indian Education: An Inquiry into Its Origin, Development, and Ideals, Oxford University Press.
- Mayhew, Arthur. (1920). The Education of India, Faber and Gwyer, London: Book Lover Publication House.
- Hartog, Philip. (1939). Some aspects of Indian education past and present an old scholarly history.
- Zaman, Muhammad Qasim. (1999). "Religious Education and the Rhetoric of Reform: The Madrasa in British India.
- Prabhu, Joseph. (2006), "Educational Institutions and Philosophies, Traditional and Modern", Encyclopedia of India (vol. 2) edited by Stanley Wolpert, Thomson Gale.
- Ellis, Catriona. (2009). "Education for All: Reassessing the Historiography of Education in Colonial India". History Compass.
- Bagchi, Barnita. (2014). "Connected and entangled histories: writing histories of education in the Indian context". Paedagogica Historica.
- Kokić, I. B. and Kokić, T. (2024). Education in Ancient India as a Possible Inspiration for the Future.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन (जनपद जौनपुर के बदलापुर विकासखंड के विशेष संदर्भ में)

डॉ. अखिलेश कुमार सरोज
असि. प्रो.– समाजशास्त्र,
डॉ. राजेश्वर सेवाश्रम महाविद्यालय, ढिढुई प्रतापगढ़ (उ. प्र.)
संबद्ध – प्रो. राजेंद्र सिंह(रज्जू भय्या) विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सरांश– *"प्रस्तुत शोधपत्र में जनपद जौनपुर के बदलापुर विकासखंड की पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है। भारतीय समाज में जातिगत असमानता, सामाजिक भेदभाव एवं अस्पृश्यता जैसी समस्याएँ आज भी विभिन्न रूपों में विद्यमान हैं। संविधान द्वारा समानता एवं सामाजिक न्याय की व्यवस्था किए जाने के बावजूद अनुसूचित जातियों, विशेष रूप से महिलाओं, को अनेक सामाजिक एवं आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। आधुनिक शिक्षा, संचार माध्यमों एवं सरकारी योजनाओं के प्रभाव से सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया अवश्य तेज हुई है, किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में परंपरागत मान्यताएँ, अंधविश्वास, रूढ़िवादिता तथा सामाजिक पिछड़ापन अभी भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। पासी जाति की महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति एवं सामाजिक सहभागिता में कुछ सुधार अवश्य हुआ है, फिर भी उनकी स्थिति अपेक्षित स्तर तक सुदृढ़ नहीं हो सकी है। प्रस्तुत अध्ययन इन्हीं सामाजिक यथार्थों का विश्लेषणात्मक एवं समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से परीक्षण करता है।"*

कुंजीभूत शब्द– अस्पृश्यता, सामाजिक समानता, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक परिवर्तन, रूढ़िवादिता, सामाजिक पिछड़ापन, शिक्षा, परंपरागत मान्यताएँ।

भारतीय समाज विश्व के सबसे प्राचीन एवं विविधतापूर्ण समाजों में से एक माना जाता है। यहाँ व्यक्ति की पहचान प्रायः जाति, परिवार, परंपरा तथा सामाजिक समूहों के आधार पर निर्धारित की जाती रही है। भारतीय सामाजिक संरचना में जाति व्यवस्था का प्रभाव लंबे समय से विद्यमान है, जिसने समाज को विभिन्न वर्गों एवं श्रेणियों में विभाजित किया। यद्यपि आधुनिक भारत में लोकतंत्र, शिक्षा, औद्योगीकरण तथा संवैधानिक अधिकारों के कारण सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया तेज हुई है, फिर भी अनेक समुदाय आज भी सामाजिक असमानता एवं पिछड़ेपन का सामना कर रहे हैं।

महिलाओं की स्थिति भारतीय समाज में सदैव महत्वपूर्ण रही है, किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से उन्हें समान अधिकार एवं अवसर प्राप्त नहीं हो सके। पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था के कारण महिलाओं को लंबे समय तक घरेलू सीमाओं में बाँधकर रखा गया। शिक्षा, संपत्ति, रोजगार तथा निर्णय लेने के अधिकारों में भी महिलाओं की स्थिति कमजोर रही। सामाजिक कुरीतियाँ, अंधविश्वास, दहेज प्रथा, लैंगिक भेदभाव एवं

जातिगत असमानता ने महिलाओं की स्थिति को और अधिक जटिल बना दिया। अनुसूचित जाति की महिलाएँ इन समस्याओं से दोहरे स्तर पर प्रभावित होती हैं, क्योंकि उन्हें जातिगत एवं लैंगिक दोनों प्रकार के भेदभाव का सामना करना पड़ता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति की महिलाओं की स्थिति विशेष रूप से चिंताजनक दिखाई देती है। वे प्रायः अशिक्षा, निर्धनता, बेरोजगारी तथा स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से ग्रस्त रहती हैं। अनेक महिलाएँ असंगठित क्षेत्र में कार्य करती हैं, जहाँ उन्हें उचित मजदूरी एवं सामाजिक सुरक्षा प्राप्त नहीं होती। शिक्षा एवं जागरूकता के अभाव में वे सरकारी योजनाओं का पूरा लाभ भी नहीं उठा पातीं। सामाजिक परंपराएँ एवं रूढ़िवादी मान्यताएँ उन्हें आत्मनिर्भर बनने से रोकती हैं।

उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों में पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि आधुनिकता एवं सरकारी प्रयासों के बावजूद उनकी स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं हो पाया है। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार तथा राजनीतिक सहभागिता के क्षेत्र में अभी भी अनेक चुनौतियाँ विद्यमान हैं। हालांकि पंचायत राज व्यवस्था, महिला आरक्षण, स्वयं सहायता समूहों एवं सरकारी कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से महिलाओं में जागरूकता एवं सहभागिता बढ़ी है, फिर भी सामाजिक समानता का लक्ष्य पूरी तरह प्राप्त नहीं हो सका है।

वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण, सामाजिक न्याय एवं समान अवसरों की अवधारणा को विशेष महत्व दिया जा रहा है। सरकार एवं गैर–सरकारी संस्थाओं द्वारा महिलाओं के उत्थान हेतु अनेक कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। इसके बावजूद अनुसूचित जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति अभी भी कमजोर एवं चिंताजनक बनी हुई है। प्रस्तुत अध्ययन इन्हीं सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करता है तथा यह समझने का प्रयास करता है कि बदलते सामाजिक परिवेश में पासी जाति की महिलाओं की स्थिति किस प्रकार परिवर्तित हो रही है।

अध्ययन विषय का समाजशास्त्रीय महत्व–

पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति को समझने के लिए उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन आवश्यक है। समाजशास्त्र समाज में विद्यमान संबंधों, मान्यताओं, व्यवहारों एवं सामाजिक प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। इसी कारण पासी महिलाओं की स्थिति का अध्ययन समाजशास्त्रीय दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है।

सामाजिक संरचनाएँ एवं सांस्कृतिक मूल्य पुरुषों और महिलाओं की भूमिकाओं को प्रभावित करते हैं। ग्रामीण समाज में आज भी जाति व्यवस्था, सामाजिक असमानता एवं रूढ़िवादी विचारधाराओं का प्रभाव देखा जाता है। आधुनिक शिक्षा एवं सामाजिक परिवर्तन के बावजूद अनुसूचित जाति की महिलाएँ सामाजिक उपेक्षा, आर्थिक पिछड़ेपन तथा अशिक्षा जैसी समस्याओं का सामना कर रही हैं।

समाजशास्त्रीय अध्ययन में व्यक्तियों के विचार, विश्वास एवं दृष्टिकोण को विशेष महत्व दिया जाता है। पासी जाति की महिलाएँ लंबे समय से सामाजिक एवं आर्थिक रूप से वंचित रही हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार एवं सामाजिक अवसरों की कमी के कारण वे मुख्यधारा से पीछे रह गई हैं। भारतीय समाज के समग्र विकास के लिए महिलाओं की समान सहभागिता आवश्यक है। महिला सशक्तिकरण केवल महिलाओं के विकास तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक एवं आर्थिक प्रगति से भी जुड़ा हुआ है। अतः पासी जाति की महिलाओं की स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक न्याय को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

उद्देश्य –

1. पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।

2. महिलाओं की सामाजिक सहभागिता एवं पारंपरिक मान्यताओं का विश्लेषण करना।
3. शिक्षा, विवाह एवं सामाजिक सम्मान के प्रति महिलाओं के दृष्टिकोण को समझना।
4. महिलाओं के जीवन में सफलता प्राप्ति के प्रमुख कारकों का अध्ययन करना।
5. पुरुषों के समान महिलाओं को प्राप्त सामाजिक मान–सम्मान की स्थिति का परीक्षण करना।

परिकल्पनाएँ –

1. पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति पर पारंपरिक रीति–रिवाजों एवं रूढ़िवादी विचारधाराओं का प्रभाव पड़ता है।
2. शिक्षित एवं जागरूक महिलाओं की सामाजिक सहभागिता अपेक्षाकृत अधिक होती है।
3. ग्रामीण समाज में महिलाओं को पुरुषों के समान सामाजिक सम्मान एवं अवसर पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हैं।

प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण, सारणीयन एवं विश्लेषण–

शोध कार्य में संकलित तथ्यों को वैज्ञानिक ढंग से व्यवस्थित करने के लिए उनका वर्गीकरण एवं सारणीयन किया गया है। वर्गीकरण के माध्यम से समान प्रकृति के तथ्यों को एक समूह में रखा गया, जबकि सारणीयन द्वारा तथ्यों को तालिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इससे प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण सरल एवं स्पष्ट हो जाता है। निम्न तालिकाओं में उत्तरदात्रियों से प्राप्त तथ्यों का प्रतिशत एवं संख्यात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में कुल 150 उत्तरदात्रियों को सम्मिलित किया गया। अध्ययन हेतु उत्तरदात्रियों का चयन जनपद जौनपुर के बदलापुर विकासखंड के तीन चयनित गाँवोंकृसिंहावल, तुरकौली एवं सरोखरपुरकृसे किया गया। प्रत्येक गाँव से समान रूप से 50–50 उत्तरदात्रियों का चयन कर अध्ययन को संतुलित एवं व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया गया। इस प्रकार तीनों गाँवों से कुल 150 उत्तरदात्रियों को अध्ययन में शामिल किया गया।

प्राचीन रीति–रिवाज एवं परंपराओं का पालन–

ग्रामीण जीवन में पारंपरिक रीति–रिवाज एवं सामाजिक परंपराएँ महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उत्तरदात्रियों के जीवन में इन परंपराओं का प्रभाव उनके व्यवहार, पारिवारिक दायित्वों एवं सामाजिक संबंधों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। परंपराओं का पालन सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक समन्वय तथा पारिवारिक मूल्यों को बनाए रखने में सहायक माना जाता है।

तालिका संख्या - 1

प्राचीन रीति–रिवाज एवं परंपराओं के पालन संबंधी विवरण–

पालन की स्थिति	उत्तरदात्रीयां	
	आवृत्ति	प्रतिशत
पूर्ण पालन करती हैं	72	48.00
आंशिक पालन करती ह	51	34.00
पालन नहीं करती हैं	27	18.00
योग	150	100.00

उपरोक्त तालिका संख्या –1 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 48 प्रतिशत महिलाएँ आज भी पारंपरिक रीति–रिवाजों का पूर्ण रूप से पालन करती हैं। 34 प्रतिशत महिलाएँ आंशिक रूप से इन परंपराओं का पालन करती हैं, जबकि 18 प्रतिशत महिलाएँ आधुनिक विचारधारा के प्रभाव से इन परंपराओं

का पालन नहीं करतीं। इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण समाज में परंपरागत सोच का प्रभाव अभी भी विद्यमान है।

सामाजिक आयोजनों में महिलाओं की सहभागिता–

सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों में महिलाओं की भागीदारी उनके सामाजिक जीवन में सक्रिय योगदान को दर्शाती है। विभिन्न आयोजनों में उपस्थिति के माध्यम से महिलाएँ सामाजिक संबंधों को सुदृढ़ करती हैं तथा सामुदायिक गतिविधियों में अपनी भूमिका निभाती हैं। यह सहभागिता सामाजिक जागरूकता, सहयोग की भावना एवं सामूहिक उत्तरदायित्व को बढ़ावा देने में सहायक होती है।

तालिका संख्या - 2

सामाजिक आयोजनों में महिलाओं की सहभागिता संबंधी विवरण–

सहभागिता स्तर	उत्तरदात्रीयां	
	आवृत्ति	प्रतिशत
नियमित सहभागिता	64	42.67
कभी–कभी सहभागिता	58	38.67
सहभागिता नहीं करती	28	18.66
योग	150	100.00

उपरोक्त तालिकीय संख्या 2 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 42.67 प्रतिशत महिलाएँ सामाजिक आयोजनों में नियमित रूप से भाग लेती हैं। 38.67 प्रतिशत महिलाएँ कभी–कभी भागीदारी करती हैं। वहीं 18.66 प्रतिशत महिलाएँ सामाजिक आयोजनों से दूर रहती हैं। इससे महिलाओं में बढ़ती सामाजिक जागरूकता का संकेत मिलता है।

लड़कियों के विवाह की उचित आयु के संबंध में विचार–

लड़कियों के विवाह की उचित आयु के विषय में उत्तरदात्रियों के विचार उनके सामाजिक अनुभव, शिक्षा एवं पारिवारिक मान्यताओं को दर्शाते हैं। विवाह की सही आयु को लेकर जागरूकता का संबंध शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक विकास से जुड़ा होता है। इस विषय पर व्यक्त मत समाज में बढ़ती जागरूकता एवं बदलते सामाजिक दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं।

तालिका संख्या - 3

उत्तरदात्रियों के विचारानुसार लड़कियों के विवाह की उचित आयु संबंधी विवरण–

विवाह की आयु	उत्तरदात्रीयां	
	आवृत्ति	प्रतिशत
18 वर्ष से कम	22	14.67
18–21 वर्ष	83	55.33
21 वर्ष से अधिक	45	30.00
योग	150	100.00

उपरोक्त तालिका संख्या 3 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अधिकांश महिलाएँ (55.33 प्रतिशत) लड़कियों के विवाह हेतु 18–21 वर्ष की आयु को उचित मानती हैं। 30.00 प्रतिशत महिलाएँ 21 वर्ष से अधिक आयु को उचित मानती हैं। इससे शिक्षा एवं जागरूकता के प्रभाव का पता चलता है।

जीवन में सफलता प्राप्ति हेतु महत्वपूर्ण कारक–

उत्तरदात्रियों के दृष्टिकोण के अनुसार जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए अनेक तत्व महत्वपूर्ण माने जाते हैं। शिक्षा, मेहनत, लगन, आत्मविश्वास एवं सही मार्गदर्शन को सफलता के प्रमुख आधार के रूप में देखा जाता है। इन कारकों के प्रति व्यक्त विचार व्यक्तियों की सोच, अनुभव तथा सामाजिक परिस्थितियों को स्पष्ट करते हैं।

तालिका संख्या - 4

उत्तरदात्रियों के अनुसार जीवन में सफलता प्राप्ति हेतु महत्वपूर्ण कारक–

महत्वपूर्ण कारक	उत्तरदात्रीयां	
	संख्या	प्रतिशत
शिक्षा	68	45.33
आर्थिक आत्मनिर्भरता	42	28.00
परिवार का सहयोग	25	16.67
सामाजिक सम्मान	15	10.00
योग	150	100.00

उपरोक्त तालिका संख्या– 4 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 45.33 प्रतिशत महिलाएँ शिक्षा को सफलता का सबसे महत्वपूर्ण साधन मानती हैं। 28 प्रतिशत महिलाएँ आर्थिक आत्मनिर्भरता को आवश्यक मानती हैं। इससे महिलाओं में शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता के प्रति बढ़ती जागरूकता का पता चलता है।

समाज में पुरुषों के समान मान–सम्मान की स्थिति–

इस विवरण में महिलाओं को समाज में प्राप्त सम्मान एवं समानता के संबंध में उत्तरदात्रियों के विचारों को प्रस्तुत किया गया है। सामाजिक जीवन में महिलाओं की भूमिका, उनके अधिकार तथा व्यवहार के प्रति लोगों की सोच उनकी सामाजिक स्थिति को प्रभावित करती है। यह स्थिति समाज में समानता, जागरूकता एवं सामाजिक परिवर्तन की दिशा को भी स्पष्ट करती है।

तालिका संख्या - 5

उत्तरदात्रियों के अनुसार समाज में पुरुषों के समान मान–सम्मान की स्थिति–

मान–सम्मान की स्थिति	उत्तरदात्रीयां	
	संख्या	प्रतिशत
समान सम्मान प्राप्त है	39	36.00
आंशिक सम्मान प्राप्त है	74	49.33
समान सम्मान प्राप्त नहीं है	37	24.67
योग	150	100.00

उपरोक्त तालिका संख्या– 5 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि केवल 36 प्रतिशत महिलाएँ मानती हैं कि उन्हें पुरुषों के समान सम्मान प्राप्त है। 49.33 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार उन्हें आंशिक सम्मान प्राप्त है, जबकि 24.67 प्रतिशत महिलाओं का मानना है कि समाज में अभी भी महिलाओं को समान सम्मान नहीं मिलता। इससे लैंगिक असमानता की स्थिति स्पष्ट होती है।

निष्कर्ष–

प्रस्तुत अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि पासी जाति की महिलाओं की सामाजिक स्थिति में धीरे–धीरे सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिल रहा है। शिक्षा, सामाजिक जागरूकता एवं बदलते सामाजिक परिवेश के प्रभाव से महिलाओं की सामाजिक सहभागिता में वृद्धि हुई है, किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में पारंपरिक मान्यताओं एवं रूढ़िवादी सोच का प्रभाव अभी भी विद्यमान है। महिलाओं के जीवन में शिक्षा, आत्मनिर्भरता तथा आर्थिक सशक्तिकरण को महत्वपूर्ण माना जाने लगा है।

अध्ययन यह भी दर्शाता है कि महिलाओं को पुरुषों के समान सामाजिक सम्मान एवं अवसर अभी पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हो सके हैं। सामाजिक असमानता, अशिक्षा, आर्थिक निर्भरता तथा सीमित निर्णय क्षमता जैसी समस्याएँ आज भी महिलाओं के समग्र विकास में बाधा उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त पारिवारिक एवं सामाजिक दबाव भी महिलाओं की स्वतंत्रता एवं प्रगति को प्रभावित करते हैं। समाज में समानता एवं सशक्तिकरण की दिशा में निरंतर जागरूकता, शिक्षा का विस्तार तथा सामाजिक सहयोग आवश्यक है, जिससे महिलाओं की स्थिति में और अधिक सुधार संभव हो सके। साथ ही, सरकारी योजनाओं, महिला शिक्षा कार्यक्रमों एवं सामाजिक संगठनों की सक्रिय भूमिका महिलाओं के जीवन स्तर को बेहतर बनाने में सहायक सिद्ध हो सकती है। महिलाओं को निर्णय लेने के अधिकार, रोजगार के अवसर एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान किए जाने से उनके आत्मविश्वास तथा सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि संभव है।

सुझाव –

1. ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं एवं बालिकाओं की शिक्षा को विशेष महत्व दिया जाना चाहिए, जिससे उनमें जागरूकता, आत्मविश्वास एवं सामाजिक समझ का विकास हो सके। इसके लिए विद्यालयों में आवश्यक सुविधाओं एवं प्रोत्साहन योजनाओं का विस्तार किया जाना आवश्यक है।
2. महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने के उद्देश्य से स्वरोजगार, लघु उद्योग तथा कौशल विकास संबंधी प्रशिक्षण कार्यक्रम नियमित रूप से संचालित किए जाने चाहिए, ताकि वे आत्मनिर्भर बन सकें और परिवार की आर्थिक स्थिति को मजबूत कर सकें।
3. समाज में व्याप्त लैंगिक भेदभाव, अशिक्षा, दहेज प्रथा एवं अन्य सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध व्यापक स्तर पर जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए, जिससे महिलाओं के प्रति सकारात्मक सामाजिक – दृष्टिकोण विकसित हो सके।
4. महिलाओं की पंचायत, स्वयं सहायता समूहों एवं अन्य सामाजिक संस्थाओं में सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए, ताकि वे सामाजिक निर्णयों एवं विकास कार्यों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें।
5. अनुसूचित जाति की महिलाओं के कल्याण हेतु संचालित सरकारी योजनाओं का प्रभावी एवं पारदर्शी क्रियान्वयन किया जाना चाहिए, जिससे योजनाओं का वास्तविक लाभ जरूरतमंद महिलाओं तक पहुँच सके तथा उनके सामाजिक एवं आर्थिक विकास को गति मिल सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- भारत सरकार (1974) समानता की ओर, भारत में गहिलाओं की स्थिति पर समिति की रिर्पोट, समाज कल्याण विभाग, शिक्षा व समाज कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली।
- इंडिया, (1997) नेशनल कमीशन फॉर शिड्यूल्ड कास्ट एंड शिडगूल्ड ट्राइन्स, न्यु दिल्ली, ऐ हेन्ड बुक्त नई दिल्ली।
- आहुजा, राम (1999) भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत प्रकाशन जयपुर, नई दिल्ली।
- अनिरूद्ध प्रसाद, सामाजिक न्याय एवं राजनीतिकसन्तुलन, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, नई दिल्ली, पृ०47–48
- अम्बेडकर डॉ. भीमरावः "अस्पृश्य कौन और क्यो" हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार की समस्या का समाजशास्त्रीय अध्ययन

आलोक कुमार
असि. प्रोफेसर समाजशास्त्र
गनपत सहाय पी .जी. कॉलेज, सुल्तानपुर ।
संबद्ध–डॉ. राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद।

सारांश–

भारत के समग्र विकास में ग्रामीण विकास योजनाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण जनसंख्या के जीवन स्तर में सुधार लाना, निर्धनता को कम करना, रोजगार के अवसरों का विस्तार करना तथा आधारभूत सुविधाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना है। ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास हेतु सरकार द्वारा मनरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना, स्वच्छ भारत मिशन, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन तथा कृषि एवं सिंचाई से संबंधित अनेक कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। इन योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण समाज को आर्थिक एवं सामाजिक रूप से सशक्त बनाने का प्रयास किया जा रहा है। तथापि योजनाओं के क्रियान्वयन में व्याप्त भ्रष्टाचार एक प्रमुख चुनौती के रूप में सामने आया है। भ्रष्टाचार के कारण सरकारी संसाधनों का उचित उपयोग नहीं हो पाता और अनेक पात्र व्यक्ति योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं। परिणामस्वरूप विकास की गति प्रभावित होती है तथा योजनाओं के अपेक्षित लक्ष्य पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हो पाते। प्रस्तुत अध्ययन में ग्रामीण विकास योजनाओं में विद्यमान भ्रष्टाचार की समस्या का समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण किया गया है, जिसमें इसके विभिन्न स्वरूपों, कारणों, सामाजिक प्रभावों तथा नियंत्रण के संभावित उपायों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

कुंजीभूत शब्द: ग्रामीण विकास, भ्रष्टाचार, समाजशास्त्र, मनरेगा, सामाजिक न्याय, प्रशासन, पंचायत राज।

भारत की पहचान मुख्यतः एक ग्रामीण राष्ट्र के रूप में की जाती है, जहाँ आज भी जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा गाँवों में निवास करता है। स्वतंत्रता के बाद से ही ग्रामीण विकास को राष्ट्र निर्माण और समग्र प्रगति का महत्वपूर्ण आधार माना गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त गरीबी, बेरोजगारी, निरक्षरता, स्वास्थ्य सेवाओं की अपर्याप्तता तथा सामाजिक विषमताओं को कम करने के उद्देश्य से समय–समय पर अनेक विकास कार्यक्रम एवं कल्याणकारी योजनाएँ लागू की गई हैं।

किन्तु इन योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के मार्ग में भ्रष्टाचार एक गंभीर चुनौती के रूप में उभरा है। योजनागत धन का अनुचित उपयोग, अपात्र व्यक्तियों को लाभ पहुँचाना, बिचौलियों की भूमिका, रिश्वत एवं

कमीशन की प्रवृत्ति तथा राजनीतिक प्रभाव जैसी समस्याएँ विकास कार्यक्रमों की सफलता को प्रभावित करती हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से भ्रष्टाचार को केवल प्रशासनिक अक्षमता या अनियमितता के रूप में नहीं देखा जा सकता, बल्कि यह सामाजिक संरचना, सत्ता के वितरण, पारस्परिक संबंधों तथा समाज में प्रचलित मान्यताओं और मूल्यों से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

अध्ययन की आवश्यकता–

ग्रामीण विकास योजनाओं पर सरकार प्रतिवर्ष भारी मात्रा में धन खर्च करती है। यदि इन योजनाओं में भ्रष्टाचार व्याप्त हो तो विकास के लक्ष्य अधूरे रह जाते हैं। इसलिए भ्रष्टाचार के सामाजिक कारणों और उसके प्रभावों का अध्ययन आवश्यक है। यह अध्ययन नीति–निर्माताओं, प्रशासनिक अधिकारियों तथा समाज वैज्ञानिकों को समस्या की गहराई समझने में सहायता प्रदान करेगा।

अध्ययन के उद्देश्य–

1. ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार के स्वरूप का अध्ययन करना।
2. भ्रष्टाचार के सामाजिक एवं प्रशासनिक कारणों का विश्लेषण करना।
3. भ्रष्टाचार के ग्रामीण समाज पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करना।
4. भ्रष्टाचार नियंत्रण के उपायों का सुझाव देना।

अध्ययन पद्धति–

प्रस्तुत अध्ययन मुख्य रूप से द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त जानकारी पर आधारित है। अध्ययन के लिए विभिन्न संदर्भ ग्रंथों, शोध आलेखों, सरकारी प्रकाशनों, समाचार–पत्रों तथा ग्रामीण विकास से संबंधित उपलब्ध अभिलेखों एवं दस्तावेजों का उपयोग किया गया है। विषय के व्यापक एवं गहन विश्लेषण हेतु वर्णनात्मक तथा विश्लेषणात्मक अध्ययन पद्धतियों को आधार बनाया गया है, जिससे समस्या के विभिन्न आयामों को समझने और उनकी व्याख्या करने का प्रयास किया गया है।

ग्रामीण विकास की अवधारणा–

ग्रामीण विकास एक व्यापक एवं बहुआयामी अवधारणा है, जो केवल आर्थिक प्रगति तक सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा राजनीतिक सशक्तिकरण को भी समाहित करती है। इसका प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण समुदाय के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना, रोजगार के अवसरों का विस्तार करना, शिक्षा एवं स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करना तथा सामाजिक न्याय और समानता को बढ़ावा देना है। ग्रामीण विकास के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में आत्मनिर्भरता, जनकल्याण और सतत विकास की भावना को सुदृढ़ किया जाता है।

यह एक समग्र विकास प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत कृषि एवं संबद्ध गतिविधियों का विकास, ग्रामीण उद्योगों का संवर्धन, सड़क, विद्युत, पेयजल, सिंचाई, संचार, शिक्षा तथा स्वास्थ्य जैसी आधारभूत सुविधाओं का विस्तार किया जाता है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास का लक्ष्य सामाजिक जागरूकता, महिला सशक्तिकरण, पर्यावरण संरक्षण, सामुदायिक सहभागिता तथा स्थानीय स्वशासन को मजबूत बनाना भी है। ग्रामीण विकास ग्रामीण समुदाय को आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के साथ–साथ सामाजिक रूप से संगठित और जागरूक बनाने की दिशा में भी कार्य करता है। यह ग्रामीण जनसंख्या को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने, संसाधनों तक उनकी पहुँच बढ़ाने तथा जीवन की विभिन्न चुनौतियों का सामना करने की क्षमता विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। साथ ही, यह ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक समरसता, लोकतांत्रिक भागीदारी तथा मानव संसाधन विकास को प्रोत्साहित करके दीर्घकालिक और समावेशी विकास का आधार तैयार करता है। इस प्रकार ग्रामीण विकास केवल भौतिक संसाधनों के विस्तार तक सीमित न होकर ग्रामीण समाज के सर्वांगीण एवं संतुलित विकास की प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करता है।

भ्रष्टाचार की अवधारणा–

भ्रष्टाचार ऐसी प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसमें कोई व्यक्ति, संस्था अथवा सार्वजनिक पद पर आसीन अधिकारी अपने अधिकारों और दायित्वों का उपयोग जनहित के बजाय व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के लिए करता है। जब पद, शक्ति अथवा संसाधनों का प्रयोग अनुचित आर्थिक लाभ, विशेष सुविधा, व्यक्तिगत स्वार्थ या किसी विशेष समूह को लाभ पहुँचाने के उद्देश्य से किया जाता है, तब वह भ्रष्टाचार की श्रेणी में आता है। यह न केवल प्रशासनिक व्यवस्था की निष्पक्षता को प्रभावित करता है, बल्कि सार्वजनिक विश्वास को भी कमजोर करता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से भ्रष्टाचार सामाजिक मानदंडों, नैतिक मूल्यों तथा स्वीकृत आचरण नियमों के उल्लंघन का परिणाम माना जाता है। यह केवल व्यक्तिगत स्तर की समस्या नहीं है, बल्कि सामाजिक संरचना, शक्ति संबंधों, आर्थिक हितों तथा संस्थागत प्रक्रियाओं से भी गहराई से जुड़ा होता है। भ्रष्टाचार सामाजिक असमानताओं को बढ़ाने, संसाधनों के असमान वितरण को प्रोत्साहित करने तथा समाज में अवसरों की समानता को बाधित करने का कार्य करता है। इसके अतिरिक्त यह सामाजिक न्याय, पारदर्शिता और उत्तरदायित्व जैसे लोकतांत्रिक मूल्यों को कमजोर करता है तथा शासन और नागरिकों के बीच विश्वास के संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इस प्रकार भ्रष्टाचार एक ऐसी बहुआयामी सामाजिक समस्या है, जो समाज के विकास, स्थिरता और नैतिक आधार को प्रभावित करती है।

ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार के प्रमुख स्वरूप–

ग्रामीण विकास योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन में भ्रष्टाचार एक प्रमुख बाधा है। यह योजनाओं की पारदर्शिता, निष्पक्षता तथा लाभार्थियों तक पहुँच को प्रभावित करता है।

1. अपात्र व्यक्तियों को लाभार्थी बनाना– ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार का एक प्रमुख स्वरूप लाभार्थियों के चयन में अनियमितता है। अनेक मामलों में वास्तविक जरूरतमंद एवं पात्र व्यक्तियों को योजना के लाभ से वंचित कर दिया जाता है, जबकि प्रभावशाली, आर्थिक रूप से संपन्न अथवा स्थानीय स्तर पर प्रभाव रखने वाले व्यक्तियों के नाम लाभार्थी सूची में शामिल कर लिए जाते हैं। कई बार रिश्तेदारी, व्यक्तिगत संपर्क अथवा राजनीतिक प्रभाव के आधार पर भी चयन किया जाता है। इससे योजनाओं का मूल उद्देश्य प्रभावित होता है और सामाजिक न्याय की भावना कमजोर पड़ती है।

2. रिश्वत एवं अवैध धन की मांग – कई ग्रामीण विकास योजनाओं में लाभ प्राप्त करने के लिए लाभार्थियों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धन की मांग की जाती है। आवेदन की स्वीकृति, दस्तावेजों के सत्यापन, प्रमाण–पत्र जारी करने अथवा भुगतान प्राप्त करने जैसी प्रक्रियाओं में अतिरिक्त धन देने का दबाव बनाया जाता है। इस प्रकार की प्रवृत्ति गरीब एवं कमजोर वर्गों के लिए विशेष रूप से हानिकारक सिद्ध होती है, क्योंकि उन्हें अपने अधिकार प्राप्त करने के लिए भी आर्थिक बोझ उठाना पड़ता है।

3. योजनागत धन का दुरुपयोग – भ्रष्टाचार का एक अन्य महत्वपूर्ण रूप योजनाओं के लिए स्वीकृत वित्तीय संसाधनों का अनुचित उपयोग है। कई बार विकास कार्यों के लिए आवंटित राशि का एक हिस्सा संबंधित अधिकारियों, कर्मचारियों अथवा अन्य प्रभावशाली व्यक्तियों द्वारा व्यक्तिगत लाभ के लिए उपयोग कर लिया जाता है। परिणामस्वरूप योजनाओं के लिए उपलब्ध संसाधन कम हो जाते हैं और विकास कार्य अपेक्षित गुणवत्ता एवं स्तर पर पूर्ण नहीं हो पाते।

4. फर्जी अभिलेख एवं मस्टर रोल तैयार करना – मनरेगा जैसी श्रम आधारित योजनाओं में कभी–कभी ऐसे व्यक्तियों के नाम उपस्थिति रजिस्टर अथवा मस्टर रोल में दर्ज कर दिए जाते हैं जिन्होंने वास्तविक रूप से कोई कार्य नहीं किया होता। कुछ मामलों में काल्पनिक श्रमिकों के नाम भी दर्ज कर भुगतान निकाल लिया

जाता है। इस प्रकार की अनियमितताओं से सरकारी धन का नुकसान होता है तथा वास्तविक श्रमिकों के अधिकार प्रभावित होते हैं।

5. निम्न गुणवत्ता वाले निर्माण कार्य – ग्रामीण क्षेत्रों में सड़क, भवन, शौचालय, नाली, पेयजल व्यवस्था तथा अन्य आधारभूत संरचनाओं के निर्माण में कई बार मानकों की अनदेखी की जाती है। लागत बचाने अथवा अवैध लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से निम्न स्तर की सामग्री का उपयोग किया जाता है। परिणामस्वरूप निर्माण कार्य अल्प समय में क्षतिग्रस्त हो जाते हैं और जनता को अपेक्षित सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो पातीं। इससे सार्वजनिक संसाधनों की भी हानि होती है।

6. राजनीतिक प्रभाव एवं पक्षपातपूर्ण हस्तक्षेप – ग्रामीण विकास योजनाओं के संचालन में राजनीतिक हस्तक्षेप भी भ्रष्टाचार का एक महत्वपूर्ण स्वरूप है। कई बार योजनाओं का चयन, लाभार्थियों की सूची तैयार करना अथवा विकास कार्यों की प्राथमिकता निर्धारित करना राजनीतिक हितों से प्रभावित होता है। इसके कारण संसाधनों का वितरण निष्पक्ष रूप से नहीं हो पाता तथा योजनाओं का लाभ सभी वर्गों तक समान रूप से नहीं पहुँचता।

7. बिचौलियों की भूमिका और सूचना का अभाव– ग्रामीण क्षेत्रों में जागरूकता की कमी के कारण कई लाभार्थी योजनाओं की प्रक्रियाओं को पूरी तरह नहीं समझ पाते। इसका लाभ उठाकर कुछ बिचौलिए लोगों से धन लेकर उनके कार्य कराने का दावा करते हैं। इससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है तथा योजना की पारदर्शिता प्रभावित होती है।

8. अभिलेखों में हेरफेर एवं गलत रिपोर्टिंग – कुछ मामलों में विकास कार्यों की प्रगति, लागत तथा लाभार्थियों की संख्या से संबंधित अभिलेखों में गलत जानकारी दर्ज कर दी जाती है। कागजों पर कार्य पूर्ण दिखा दिया जाता है, जबकि वास्तविक स्थिति भिन्न होती है। ऐसी प्रवृत्तियाँ योजनाओं की निगरानी एवं मूल्यांकन प्रक्रिया को कमजोर बनाती हैं।

भ्रष्टाचार के समाजशास्त्रीयकरण कारण–

ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार अनेक सामाजिक एवं संरचनात्मक कारणों से उत्पन्न होता है। इसके पीछे प्रमुख समाजशास्त्रीय कारण निम्नलिखित हैं।

1.सत्ता एवं प्रभुत्व की संरचना – ग्रामीण समाज में कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों एवं समूहों का सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक नियंत्रण होता है। ये लोग कई बार विकास योजनाओं के लाभों को अपने प्रभाव क्षेत्र में बनाए रखने का प्रयास करते हैं, जिससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है।

2. अशिक्षा एवं जागरूकता का अभाव – ग्रामीण जनता को योजनाओं और अपने अधिकारों की पर्याप्त जानकारी नहीं होती। जागरूकता की कमी के कारण लोग अनियमितताओं का विरोध नहीं कर पाते और भ्रष्टाचार को रोकने में असमर्थ रहते हैं।

3. गरीबी एवं आर्थिक निर्भरता – आर्थिक रूप से कमजोर लोग अपने कार्यों को पूरा कराने के लिए अवैध भुगतान करने को विवश हो सकते हैं। गरीबी भ्रष्टाचार को बढ़ाने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है।

4. सामाजिक असमानता – जाति, वर्ग एवं लिंग आधारित विषमताओं के कारण कमजोर वर्गों को योजनाओं का लाभ प्राप्त करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, जिससे असमानता और बढ़ती है।

5. नैतिक मूल्यों का ह्रास – व्यक्तिगत लाभ और धन अर्जित करने की बढ़ती प्रवृत्ति ईमानदारी एवं उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों को कमजोर करती है, जिससे भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन मिलता है।

6. प्रशासनिक जटिलता – योजनाओं की जटिल प्रक्रियाओं के कारण लोग बिचौलियों पर निर्भर हो जाते हैं, जिससे रिश्वतखोरी और अन्य भ्रष्ट गतिविधियों की संभावना बढ़ जाती है।

इस प्रकार भ्रष्टाचार के पीछे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा प्रशासनिक कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है

ग्रामीण समाज पर भ्रष्टाचार के प्रभाव –

1. गरीबी की निरंतरता – जब विकास योजनाओं का लाभ वास्तविक जरूरतमंद लोगों तक नहीं पहुँच पाता, तब उनकी आर्थिक स्थिति में अपेक्षित सुधार नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप निर्धनता लंबे समय तक बनी रहती है। इससे गरीब परिवार शिक्षा, स्वास्थ्य तथा अन्य मूलभूत सुविधाओं से भी वंचित रह जाते हैं, जिससे उनके जीवन स्तर में सुधार की संभावनाएँ सीमित हो जाती हैं।

2. विकास कार्यों में बाधा – योजनाओं के लिए उपलब्ध संसाधनों का दुरुपयोग होने से अनेक विकास कार्य अधूरे रह जाते हैं या उनकी गुणवत्ता प्रभावित होती है। इससे ग्रामीण विकास की प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है। सड़क, पेयजल, आवास तथा अन्य आधारभूत सुविधाओं के विकास पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

3. सामाजिक विषमता में वृद्धि – भ्रष्टाचार का लाभ प्रायः प्रभावशाली एवं संसाधन–संपन्न वर्गों को अधिक मिलता है, जबकि कमजोर एवं वंचित वर्ग पीछे रह जाते हैं। इससे सामाजिक असमानताएँ और गहरी हो जाती हैं। समाज में अवसरों की समानता प्रभावित होती है तथा सामाजिक न्याय का उद्देश्य कमजोर पड़ जाता है।

4. प्रशासनिक व्यवस्था पर अविश्वास – जब लोगों को योजनाओं में अनियमितताओं और भ्रष्ट आचरण का अनुभव होता है, तब उनका सरकारी संस्थाओं तथा प्रशासनिक तंत्र पर विश्वास कम होने लगता है। इससे शासन और नागरिकों के बीच दूरी बढ़ती है तथा जनसहयोग में कमी आती है।

5. सामाजिक असंतोष और तनाव – संसाधनों एवं अवसरों के असमान वितरण से विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच असंतोष, विवाद तथा तनाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। कई बार यह स्थिति सामाजिक संघर्ष एवं सामुदायिक विघटन का कारण भी बन जाती है।

6. लोकतांत्रिक मूल्यों का कमजोर होना – भ्रष्टाचार पारदर्शिता, जवाबदेही तथा निष्पक्षता जैसे लोकतांत्रिक सिद्धांतों को प्रभावित करता है। इससे शासन व्यवस्था की विश्वसनीयता और जनसहभागिता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। लोग लोकतांत्रिक संस्थाओं की कार्यप्रणाली पर प्रश्नचिह्न लगाने लगते हैं।

7. नैतिक मूल्यों का ह्रास – जब भ्रष्टाचार समाज में सामान्य व्यवहार के रूप में स्वीकार किया जाने लगता है, तब ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा और उत्तरदायित्व जैसे नैतिक मूल्य कमजोर पड़ने लगते हैं। इसका प्रभाव आने वाली पीढ़ियों की सामाजिक सोच और व्यवहार पर भी पड़ता है।

इस प्रकार भ्रष्टाचार का प्रभाव केवल आर्थिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह ग्रामीण समाज की सामाजिक संरचना, प्रशासनिक व्यवस्था, नैतिक मूल्यों तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं को भी व्यापक रूप से प्रभावित करता है।

प्रमुख ग्रामीण विकास योजनाओं में भ्रष्टाचार की समस्या –

1. **मनरेगा** – मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम) ग्रामीण गरीबों को रोजगार प्रदान करने की महत्वपूर्ण योजना है, किंतु कई क्षेत्रों में फर्जी जॉब कार्ड बनाना, मस्टर रोल में काल्पनिक श्रमिकों के नाम दर्ज करना तथा मजदूरी भुगतान में अनियमितताएँ देखने को मिलती हैं। कुछ मामलों में कार्य किए बिना ही भुगतान दिखा दिया जाता है, जिससे सरकारी धन का दुरुपयोग होता है और वास्तविक लाभार्थी वंचित रह जाते हैं।
2. **प्रधानमंत्री आवास योजना** – इस योजना का उद्देश्य गरीब परिवारों को पक्का आवास उपलब्ध कराना है। परंतु कई स्थानों पर लाभार्थी चयन प्रक्रिया में पारदर्शिता का अभाव पाया जाता है। अपात्र व्यक्तियों को

लाभ दिलाने, पात्र लोगों के नाम सूची से हटाने तथा रिश्वत लेकर सूची तैयार करने जैसी शिकायतें सामने आती हैं। इससे योजना के वास्तविक उद्देश्य को नुकसान पहुँचता है।

3. स्वच्छ भारत मिशन – स्वच्छ भारत मिशन के अंतर्गत शौचालय निर्माण और स्वच्छता को बढ़ावा दिया जाता है। किंतु कुछ क्षेत्रों में शौचालय निर्माण में निम्न गुणवत्ता की सामग्री का उपयोग, अधूरे निर्माण कार्य, फर्जी रिपोर्टिंग तथा बिना निर्माण के भुगतान जैसी अनियमितताएँ पाई गई हैं। इससे योजना की प्रभावशीलता कम हो जाती है और स्वच्छता के लक्ष्य प्रभावित होते हैं।

4. सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) – सार्वजनिक वितरण प्रणाली गरीब एवं जरूरतमंद लोगों को सस्ती दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराने के लिए संचालित की जाती है। लेकिन राशन की कालाबाजारी, घटतौली, फर्जी लाभार्थियों के नाम जोड़ना तथा पात्र परिवारों को राशन से वंचित करना जैसी समस्याएँ अक्सर देखने को मिलती हैं। इससे खाद्य सुरक्षा के उद्देश्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा गरीब वर्ग को नुकसान उठाना पड़ता है।

इन योजनाओं में भ्रष्टाचार के कारण सरकारी संसाधनों का दुरुपयोग होता है, विकास की गति धीमी पड़ती है तथा जनता का प्रशासन पर विश्वास कमजोर होता है। इसलिए प्रभावी निगरानी, सामाजिक अंकेक्षण, डिजिटल भुगतान व्यवस्था तथा पारदर्शी प्रशासन की आवश्यकता है।

भ्रष्टाचार नियंत्रण के उपाय –

1. ग्रामीण विकास योजनाओं से संबंधित सभी सूचनाओं को सार्वजनिक किया जाना चाहिए ताकि कार्यों में पारदर्शिता बनी रहे और जनता निगरानी कर सके।
2. ऑनलाइन भुगतान, आधार आधारित सत्यापन तथा डिजिटल अभिलेखों के उपयोग से भ्रष्टाचार की संभावनाओं को कम किया जा सकता है।
3. ग्रामीण नागरिकों को उनके अधिकारों, सरकारी योजनाओं तथा शिकायत दर्ज कराने की प्रक्रिया की जानकारी दी जानी चाहिए।
4. विकास कार्यों की नियमित सामाजिक समीक्षा की जानी चाहिए, जिससे अनियमितताओं की पहचान और रोकथाम संभव हो सके।
5. भ्रष्टाचार के मामलों में दोषी पाए जाने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध सख्त एवं त्वरित कार्रवाई की जानी चाहिए।
6. पंचायतों और स्थानीय निकायों को अधिक उत्तरदायी एवं पारदर्शी बनाकर विकास कार्यों की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।
7. समाज में ईमानदारी, नैतिकता, कर्तव्यनिष्ठा तथा सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

निष्कर्ष – ग्रामीण विकास योजनाएँ ग्रामीण समाज के आर्थिक, सामाजिक तथा आधारभूत विकास का महत्वपूर्ण माध्यम हैं। इन योजनाओं का उद्देश्य गरीबी उन्मूलन, रोजगार सृजन, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सामाजिक सुरक्षा जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। किन्तु भ्रष्टाचार इन योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन में एक प्रमुख बाधा के रूप में सामने आता है। इसके कारण सरकारी संसाधनों का दुरुपयोग होता है तथा योजनाओं का अपेक्षित लाभ वास्तविक पात्र व्यक्तियों तक पूर्ण रूप से नहीं पहुँच पाता।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से भ्रष्टाचार केवल प्रशासनिक या कानूनी समस्या नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचना, शक्ति संबंधों, आर्थिक असमानताओं तथा सामाजिक मूल्यों से भी जुड़ा हुआ विषय है। जब विकास योजनाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही का अभाव होता है, तब सामाजिक न्याय, समान अवसर

तथा समावेशी विकास के लक्ष्य प्रभावित होते हैं। इसका नकारात्मक प्रभाव ग्रामीण समाज के कमजोर एवं वंचित वर्गों पर सबसे अधिक पड़ता है।

अतः भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए पारदर्शी प्रशासन, जनभागीदारी, सामाजिक अंकेक्षण, डिजिटल तकनीकों का उपयोग तथा प्रभावी निगरानी व्यवस्था को सुदृढ़ करना आवश्यक है। साथ ही नैतिक मूल्यों, ईमानदारी तथा उत्तरदायित्व की भावना को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ग्रामीण विकास की वास्तविक सफलता तभी सुनिश्चित होगी जब योजनाओं का लाभ बिना किसी भेदभाव और अनियमितता के समाज के प्रत्येक पात्र व्यक्ति तक पहुँचे तथा विकास प्रक्रिया में जनता की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- ए. आर. देसाई (2018). ग्रामीण समाजशास्त्र. नई दिल्ली: रावत पब्लिकेशन्स।
- एस. सी. दुबे (2014). भारतीय ग्राम. नई दिल्लीरू राष्ट्रीय पुस्तक न्यास (NBT)।
- योगेन्द्र सिंह (2019). भारतीय समाजशास्त्ररू परंपरा, परिवर्तन एवं विकास. नई दिल्लीरू रावत पब्लिकेशन्स।
- ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार. वार्षिक प्रतिवेदन (Annual Report), 2023-24. नई दिल्ली: भारत सरकार।
- महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (MGNREG ।). ऑपरेशनल गाइडलाइंस एवं वार्षिक रिपोर्ट. नई दिल्ली: ग्रामीण विकास मंत्रालय।
- भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG). ग्रामीण विकास योजनाओं के क्रियान्वयन एवं लेखा परीक्षण संबंधी प्रतिवेदन. नई दिल्ली: CAGA
- नीति आयोग (2023). भारत में ग्रामीण विकास एवं सतत विकास से संबंधित रिपोर्ट. नई दिल्ली: भारत सरकार।

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

From Protest to Power: The Aam Aadmi Party's Transformation of India's Anti-Corruption Movement

Dr. Brijendra Singh[1]
Principal and Professor, MGPG
College, Fatehpur[1]
Sagar Yadav[2]
Research Scholar, Department of Political Science
Professor Rajendra Singh (Rajju Bhaiya) University, Prayagraj[2]

Abstract
The transformation of India's anti-corruption social movement (2011-2012) into the Aam Aadmi Party (AAP) represents a critical case study in movement institutionalization within developing democracies. Drawing on process-tracing methodology and analysis of primary party documents, election data (2013-2024), and scholarly literature, this paper examines three interconnected dimensions:
(1) causal mechanisms driving the movement-to-party transition, (2) organizational innovations in participatory democracy and financial transparency;
(3) performative construction of political identity and electoral-governance outcomes. Empirical evidence demonstrates that AAP achieved unprecedented electoral dominance in Delhi (67/70 seats in 2015; 62/70 in 2020) through innovative organisational mechanisms and constructed a "de-elitisation" identity, while simultaneously experiencing persistent geographic limitations (negligible national presence despite local dominance) and systematic drift from participatory mechanisms toward hierarchical institutionalization. Anti-corruption governance metrics (81% decline in complaints; asset growth reduction) indicate measurable institutional performance, yet ideological ambiguities and structural contradictions between movement heritage and party requirements persist unresolved. The AAP case contributes to social movement theory by illuminating mechanisms of selective institutional transformation, and to democratic theory by demonstrating both possibilities and limitations of movement-based political innovation in developing democracies.

Keywords: social movements, party institutionalisation, anti-corruption, India, democratic innovation, electoral politics.

1. Introduction

The India Against Corruption (IAC) movement of 2011-2012 mobilised hundreds of thousands through Gandhian nonviolent protest, demanding legislative reform regarding anti-corruption institutions. When parliamentary procedures constrained movement leverage and extra-institutional pressure proved insufficient to guarantee favourable legislative outcomes, the movement confronted a strategic impasse: maintain movement independence or enter electoral politics. In November 2012, AAP was formally registered as a political party. This transformation raised fundamental questions: Under what conditions do movements institutionalize into electoral organizations? What mechanisms enable newly-formed parties to rapidly institutionalize? How are political identities constructed to enable broad electoral appeal? Does electoral participation compromise movement authenticity? This paper employs mixed-method qualitative analysis combining process-tracing of the 2011-2012 decision-making period, documentary analysis of party constitutions and governance mechanisms, electoral analysis (2013-2024), and engagement with social movement and party institutionalization theory.

2. Political Context: Grievances and Opportunity Structures

2.1 Corruption as Institutional Failure

By 2010, Indian governance institutions faced systemic corruption. The 2G spectrum scandal involved spectrum allocation worth Rs 1.76 trillion with accusations of systematic misappropriation.[1] The Central Bureau of Investigation, Central Vigilance Commission, and Lokayukta offices—existing anti-corruption mechanisms—operated under executive control and faced political pressure compromising effectiveness.

In October 2010, the leaked government Lokpal Bill draft exposed elite-mass conflict regarding institutional reform. While the government's draft granted the executive-appointed president authority to select the anti-corruption ombudsman, civil society demanded independent selection mechanisms, creating substantive policy dispute enabling mobilisation.

2.2 Movement Mobilization and August 2011 Peak

Anna Hazare's hunger strike beginning April 5, 2011 catalyzed unprecedented mobilization. An estimated 100,000+ participated in August 2011 rallies at Delhi's Ram Lila Grounds. Media coverage achieved saturation levels; public opinion polls indicated 75-80% support for movement demands. However, the movement had started developing structural limitations. Parliament's August 2011 passage of modified Lokpal legislation—while providing minor concessions—implemented governmental strategy of "cooptation through reform." Media attention subsequently declined, movement momentum waned, and volunteer street mobilization proved unsustainable.

2.3 Strategic Reassessment and Movement Schism

These limitations precipitated internal conflict. Anna Hazare advocated continued movement independence consistent with Gandhian principles. Arvind Kejriwal, former Indian Revenue Service officer and Magsaysay Award recipient, concluded that extra-parliamentary pressure possessed inherent limitations. If systematic corruption reduction required institutional change,

political power acquisition was necessary. By October 2011, these differences became irreconcilable. Kejriwal conducted informal surveys indicating 76% movement supporter approval for electoral participation. This strategic reassessment generated organizational fission: Hazare maintained movement independence; Kejriwal pursued party formation.

3. Party Formation and Organisational Innovation (2012-2013)

3.1 Rapid Institutionalization

AAP received official registration November 26, 2012. Within eleven months, the party developed identifiable organizational structures, procedures, and competitive electoral capacity—achieving institutionalization substantially faster than typical parties. Three mechanisms enabled rapid institutionalization: (1) superior cadre quality from movement participation; (2) external competitive incentives from approaching elections; (3) shared anti-corruption ideological commitment enabling coordination.

3.2 Democratic Mechanisms

AAP's 2012 Constitution established unprecedented Indian political mechanisms:

Internal Governance: An 18-member Executive Body elected through membership balloting, with three-year terms and two-term maximum limits. Family member simultaneous service prohibited. Organizational decisions occurred through public General Body meetings with member voting.

Candidate Selection: For 33 of 70 Delhi 2013 constituencies, AAP implemented participatory selection: candidates submitted applications with 100+ voter endorsements; screening committees conducted interviews; public meetings enabled constituent feedback; secret ballot preferential voting ranked candidates; Political Affairs Committee made final decisions informed by ballots. This process involved 3,000+ constituency meetings and 50,000+ participants—unprecedented in Indian electoral practice.

Financial Transparency: AAP published all donations above Rs 20,000 online in real-time, disaggregated by date, donor, amount, and location. The 2013 campaign raised Rs 50+ lakhs (approximately USD 600,000) through crowdfunding, averaging Rs 500-5,000 per donor.[4] By comparison, Congress and BJP annual incomes (2007-2011) were USD 250 million and USD 130 million respectively, funded primarily through corporate donations.

Internal Anti-Corruption: An independent Lokpal (ombudsman) investigated allegations against party members. Early cases saw several members expelled for financial misconduct.

3.3 Theoretical Assessment

Panebianco's institutionalization theory predicts that organizations require leadership concentration and reduced membership participation to enable efficient decision-making.[6] AAP partially institutionalized while maintaining more participatory structures than established Indian parties, though democratic mechanisms showed systematic decline in subsequent elections as electoral pressures increased.

4. Performative Politics and Identity Construction

4.1 Symbolic System

AAP's political identity emerged through performed symbols rather than essential characteristics:

The Broom: The party's election symbol represented dignity of labor and "sweeping clean" of corruption. The broom's polysemy enabled appeal across constituencies: working-class associations and caste-reclamation resonances.

The Muffler: Kejriwal's trademark woolen muffler (worn around shoulders) functioned as "prosthetic ordinariness"—external object producing rather than reflecting commonness. Present in virtually every public appearance, the muffler became synonymous with Kejriwal's political identity.

The Wagon R: Unlike luxury vehicles driven by Congress and BJP leaders, Kejriwal's modest Maruti Wagon R (Rs 7 lakhs/USD 9,000) performed economic ordinariness accessible to aspiring middle-class citizens.

4.2 Rhetorical Performance

Kejriwal's public persona performed ordinariness through bodily practices: simple shirt and trouser dress; informal Hindi/Hinglish rhetorical style; frequent ground-level visibility; emotional expressiveness contrasting with formal establishment politician affective control.The core mantra—"We are the people, and people are the government" (hum hi hain log, log hi hain sarkaar)—performed identification transcending elite-mass boundaries.

4.3 Political Efficacy

Despite theoretical critiques regarding post-political consensus obscuring structural antagonisms,empirical evidence demonstrated substantial political efficacy:

- Exit polls from 2013 elections cited "change from established politics" and "clean image" as primary voting motivation
- Support expanded from highly-educated urban professionals (movement base) to broader constituencies including traders, small business owners, and working-class segments
- Sustained electoral support in 2015 (67/70 seats) and 2020 (62/70 seats) indicated performative identity sustained political loyalty

5. Electoral Performance and Outcomes (2013-2024)

5.1 Delhi Dominance

2013 Elections:AAP won 28 of 70 seats (30% vote share), emerging as second-largest party ahead of Congress (8 seats, 25%) in three-way contest. Kejriwal personally defeated 15-year incumbent Chief Minister.

2015 Landslide:AAP achieved 67/70 seats with 67% vote share, one of India's most dominant single-party victories. Kejriwal won his constituency with expanded majority.

2020 Elections:AAP maintained dominance with 62/70 seats (53.6% vote share), indicating sustained though diminished support.

5.2 National Limitations

2014 Lok Sabha Elections:Contesting 432 of 543 seats, AAP won only 4 seats (3 in Punjab, 1 in Delhi) with 3.9% national vote share. Geographic organization remained concentrated in Delhi-Punjab base; Kejriwal's leadership authority did not translate nationally.

2024 General Elections:AAP increased Punjab vote share to 26.02% from 7.38% (2019), winning 3 seats, but in Delhi increased vote share to 24.14% from 18.2% without winning seats due to 2024 electoral dynamics.National vote share remained negligible.

5.3 Governance Anti-Corruption Outcomes

Institutional Corruption Metrics:Central Vigilance Commission data shows dramatic complaint decline during AAP's 2015-2024 governance

2014-2015: 31 complaints

2015-2016: 9 complaints (81% decline)

- 2019-2020: 7 complaints

Asset growth analysis of Delhi officials indicates decline from Rs 8.47 crores (2014) to Rs 6.86 crores (2019), suggesting reduced wealth accumulation through public office.

Service Delivery:AAP government initiated electricity subsidies, water quality monitoring, education investment, and public transportation expansion. However, governance required institutional cooperation with existing IAS/IPS bureaucracies that movement previously critiqued as corrupt.

6. Critical Analysis: Tensions and Limitations

6.1 Participatory Democracy Paradox

Democratic candidate selection involving 50,000+ members (2013) declined substantially in 2015 and subsequent elections due to time pressures and resource constraints. Leadership concentration increased despite constitutional term limits. Major strategic decisions occurred through top-down decision-making with limited member consultation.Panebianco's theory prediction validated: electoral institutionalization systematically generates pressures toward hierarchy and leadership concentration contradicting participatory aspirations.

6.2 Ideological Ambiguity

AAP's post-political positioning claiming to transcend left-right ideology while achieving "good governance" obscured structural antagonisms (class, caste, region) constitutive of Indian politics.[8] Once in government, governance decisions required explicit ideological commitments that the "no ideology" stance complicated.

6.3 Internal Contradictions

Despite participatory governance claims, AAP expelled founding members:

- Yogendra Yadav (2015): expelled for ideological deviation and factionalism
- Prashant Bhushan (2021): expelled following disagreement regarding party strategy

These expulsions revealed that internal dissent faced hierarchical suppression rather than democratic resolution, contradicting organizational claims.

6.4 Class Basis and Middle-Class Orientation

Electoral analysis indicates AAP's strongest support among educated, urban, middle-class constituencies.[5] Exit polls show minimal support among lower-caste, rural, or economically marginal populations. While "common man" rhetoric implied universal appeal, actual mobilization reflected particular class position.

7. Theoretical Contributions

7.1 Movement Institutionalization Mechanisms

AAP illustrates selective movement institutionalization through rational strategic choice rather than ideological commitment or external pressure. Identifiable causal mechanisms include: strategic limitation recognition regarding extra-parliamentary leverage; opportunity structure shifts; and membership preference divergence.The case challenges assumptions that movement-to-party transformation inevitably occurs through cooptation or ideological conversion, demonstrating instead calculated institutional choice by organizational leadership.

7.2 Rapid Party Institutionalization

AAP's achievement of organizational institutionalization within months rather than years occurs through: superior cadre quality from movement backgrounds; external competitive electoral incentives; and ideological clarity regarding anti-corruption. This finding challenges temporal assumptions regarding institutionalization pace.

7.3 Democratic Innovation in Electoral Contexts

Participatory mechanisms and financial transparency innovations demonstrate that newly-formed electoral parties can institutionalize democratic mechanisms exceeding established party practices. However, empirical evidence reveals systematic institutional drift toward hierarchy as electoral competition intensifies, validating theoretical predictions regarding tensions between participatory aspiration and electoral efficiency.[6]

7.4 Post-Political Critique

AAP's performative "de-elitisation" and post-political rhetoric claiming to transcend partisan antagonism exemplifies what Mouffe identifies as post-political consensus claiming.[8] This rhetorical strategy proves electorally effective while obscuring structural antagonisms, potentially substituting symbolic inclusion for material transformation.

8. Conclusion

The Aam Aadmi Party represents a significant experiment in movement institutionalization into electoral politics, achieving unprecedented democratic innovations in internal governance, financial transparency, and participatory mechanisms while simultaneously experiencing systematic institutional drift toward hierarchy and leadership concentration. Empirically, AAP demonstrates that movement-based parties can achieve dominant electoral positions at subnational level (Delhi's 67/70 seats in 2015 represents one of India's most dominant victories) while implementing measurable anti-corruption governance improvements (81% corruption complaint decline). The party's performative construction of "de-elitisation" identity proved electorally effective, enabling coalition-building across constituencies despite elite social origins of core leadership.

However, unresolved tensions persist: between movement heritage and party requirements; between participatory aspiration and representative necessity; between post-political rhetoric and ideological demands; and between constructed political identity and structural class position. Geographic limitations remain pronounced: despite Delhi dominance, AAP's national presence remains negligible (approximately 2-3% vote share in 2024 general elections).The AAP case contributes to social movement theory by illuminating selective movement institutionalization

mechanisms. It demonstrates to party institutionalization theory that rapid institutionalization is possible under conditions of superior cadre quality, competitive incentives, and ideological clarity. For democratic theory, it reveals both possibilities for democratic innovation through movement-based political mobilization and persistent limitations inherent to electoral institutionalization within representative systems.

Future research should investigate whether geographic expansion, sustained democratic mechanisms, or fundamental organizational transformation occurs as AAP's trajectory evolves through 2025-2030. Comparative analysis with Podemos (Spain), Five Star Movement (Italy), and other movement-based parties would enable testing of theoretical propositions regarding movement institutionalization patterns globally.

References

1. Transparency International. (2010).Corruption Perception Index 2010. Retrieved from https://www.transparency.org/en/cpi/2024
2. Ashutosh & Prasad, V. (2015). From Hazare to Kejriwal: Continuity and change in the India against corruption movement. Contemporary South Asia, 23(2), 123-145.
3. Sharma, P. (2013). From India against corruption to the Aam Aadmi Party: Anatomy of a social movement. Economic and Political Weekly, 48(10), 35-41.
4. Aam Aadmi Party. (2013). AAP Constitution and Governance Framework. New Delhi: Aam Aadmi Party National Office.
5. Election Commission of India. (2015). Statistical Report on General Elections to Delhi Assembly, 2015. Ministry of Law and Justice.
6. Panebianco, A. (1988). Political Parties: Organization and Power. Cambridge University Press.
7. Tripathy, J. (2015). The broom, the muffler and the wagon R: Aam Aadmi Party and the politics of de-elitisation. International Quarterly for Asian Studies, 46(2), 189-214.
8. Mouffe, C. (2005). On the Political. Routledge.
9. Economic Times. (2024). Lok Sabha elections 2024: A wake-up call for Aam Aadmi Party. Retrieved from https://economictimes.com/news/elections/lok-sabha/india/
10. Central Vigilance Commission. (2019). Annual Report 2018-2019. Government of India.
11. Frontline Magazine. (2021). The Prashant Bhushan controversy: Dissent and party discipline in AAP. Frontline, 38(18), 12-18.
12. McAdam, D., Tarrow, S., & Tilly, C. (2001). Dynamics of Contention. Cambridge University Press.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

भू–आर्थिक विखंडन (Geo-Economic Fragmentation) और भारत की आपूर्ति श्रृंखला रणनीति : बहुउद्देशीय विश्व में रणनीतिक स्वायत्तता का आर्थिक ढांचा

डॉ0 आशा कुमारी
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र
महाराज बलवंत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय
गंगापुर, वाराणसी

सारंश :

वैश्विक अर्थव्यवस्था समकालीन दौर में संरचनात्मक प्रतिमान विस्थापन (Paradigm Shift) से गुजर रही है, जहां द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद स्थापित 'हाइपर–ग्लोबलाइजेशन' (अति–वैश्वीकरण) का स्थान 'भू–आर्थिक विखंडन' (Geo-Economic Fragmentation) ले रहा है। अमेरिका–चीन के बीच बढ़ते तकनीकी–आर्थिक शीत युद्ध, यूरेशियाई महाद्वीप पर जारी भू–राजनीतिक संघर्षों और पश्चिम एशिया के समुद्री व्यापारिक मार्गों (जैसे लाल सागर संकट) की अस्थिरता ने बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली की अंतर्निहित कमजोरियों को उजागर कर दिया है। वर्तमान में वैश्विक मूल्य श्रृंखलाएं (GVCs) 'न्यूनतम लागत और अधिकतम दक्षता' (Just-in-Time) के पारंपरिक सिद्धांतों को छोड़कर 'मित्र–तटवर्ती' (Friend-Shoring), 'नियर–शोरिंग' (Near-Shoring) और 'लचीलेपन व विश्वसनीयता' (Just-in-Case) के नए भू–आर्थिक प्रतिमान की ओर बढ़ रही हैं।

प्रस्तुत शोध–पत्र इस विखंडित वैश्विक परिदृश्य में भारत की 'आपूर्ति श्रृंखला कूटनीति' (Supply Chain Diplomacy) का एक व्यापक और आलोचनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन विशेष रूप से यह विश्लेषित करता है कि कैसे भारत अपनी घरेलू नीतिगत पहलों–जैसे उत्पादन संबद्ध प्रोत्साहन (PLI) योजना, राष्ट्रीय लॉजिस्टिक्स नीति (NLP) और पीएम गतिशक्तिकृका उपयोग करके वैश्विक विनिर्माण का एक वैकल्पिक केंद्र बन रहा है। अंततः, यह पत्र यह प्रतिपादित करता है कि भारत किस प्रकार पश्चिम की 'डी–रिस्किंग' (De-risking) रणनीतियों और ग्लोबल साउथ की संप्रभु आकांक्षाओं के बीच एक अनिवार्य और अपरिहार्य 'आर्थिक सेतु' के रूप में अपनी रणनीतिक स्वायत्तता को संस्थागत रूप दे रहा है।

सांकेतिक शब्द : भू–आर्थिक विखंडन, आपूर्ति श्रृंखला लचीलापन, मित्र–तटवर्ती (Friend & Shoring), उत्पादन संबद्ध प्रोत्साहन (PLI), रणनीतिक स्वायत्तता, वैश्विक मूल्य श्रृंखला (GVC)।

प्रस्तावना : वैश्वीकरण का विखंडन और नव–भू–अर्थशास्त्र का उदय

बीसवीं सदी के अंतिम दशकों और इक्कीसवीं सदी के शुरुआती पंद्रह वर्षों में वैश्विक आर्थिक विकास का मूल दर्शन नव–उदारवादी वैश्वीकरण (Neo-liberal Globalization) था। एडम स्मिथ के 'श्रम

विभाजन' और डेविड रिकार्डो के 'तुलनात्मक लाभ के सिद्धांत' (Theory of Comparative Advantage) को चरम सीमा तक ले जाते हुए बहुराष्ट्रीय कंपनियों (MNCs) ने एक ऐसे वैश्विक कारखाने का निर्माण किया, जिसमें उत्पादन की लागत को न्यूनतम रखने के लिए भौगोलिक सीमाओं को लगभग अप्रासंगिक मान लिया गया था। इस व्यवस्था का मुख्य केंद्र चीन बना, जो श्विश्व का कारखानाश (Workshop of the World) बनकर उभरा।

परंतु, इस लागत–अनुकूलित (Cost-optimized) वैश्विक व्यवस्था में एक गंभीर अंतर्निहित संप्रभु जोखिम था : इसने राष्ट्रीय सुरक्षा और रणनीतिक निर्भरता को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया था। पिछले कुछ वर्षों की घटनाओं – विशेष रूप से सेमीकंडक्टर संकट, महत्वपूर्ण औषधीय घटकों (APIs) की आपूर्ति में रुकावट और यूक्रेन संघर्ष के बाद ऊर्जा नेटवर्क का राजनीतिकरण – ने यह सिद्ध कर दिया कि आर्थिक निर्भरता को अंतरराष्ट्रीय राजनीति में एक हथियार (Weaponized Interdependence) की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) और विश्व व्यापार संगठन (WTO) के हालिया नीतिगत दस्तावेज संकेत देते हैं कि वैश्विक अर्थव्यवस्था अब वैचारिक और रणनीतिक गुटों में विभाजित हो रही है। इस संक्रमण काल में, भारत की स्थिति अत्यंत अनूठी और जटिल है। भारत न तो पश्चिमी गुट का पूर्ण सुरक्षा सहयोगी है और न ही वह चीन–रूस के ध्रुव का अंध–अनुगामी है। यह अनूठा स्थान भारत को इस भू–आर्थिक विखंडन के बीच अपने घरेलू विनिर्माण को पुनर्जीवित करने और खुद को 'चीन+1' रणनीति के सबसे भरोसेमंद विकल्प के रूप में स्थापित करने का एक ऐतिहासिक अवसर प्रदान करता है।

सैद्धांतिक ढांचा : 'दक्षता' बनाम 'सुरक्षा' का द्वंद्व

पारंपरिक व्यापार सिद्धांत यह मानते थे कि आर्थिक एकीकरण (Economic Integration) देशों के बीच युद्ध की संभावना को कम करता है क्योंकि युद्ध दोनों पक्षों के लिए आर्थिक रूप से विनाशकारी होता है। इसे 'गोल्डन आर्चेस थ्योरी' या आर्थिक अंतर्निभरता का शांति सिद्धांत कहा जाता था। लेकिन समकालीन भू–अर्थशास्त्र (Geo-economics) इस सिद्धांत को खारिज करता है। हेनरी फारेल और अब्राहम न्यूमैन के 'वेपनाइज्ड इंटरडिपेंडेंस' (Weaponized Interdependence) के सिद्धांत के अनुसार, जो देश वैश्विक नेटवर्क के केंद्रीय नोड्स (जैसे वित्तीय समाशोधन प्रणाली या विशिष्ट विनिर्माण हब) को नियंत्रित करते हैं, वे अन्य देशों पर संप्रभु दबाव बनाने के लिए उन नेटवर्क तक पहुंच को बाधित कर सकते हैं।

यही कारण है कि वैश्विक स्तर पर अब दो महत्वपूर्ण प्रवृत्तियां दिखाई दे रही हैं :

{पारंपरिक प्रतिमान : अति–वैश्वीकरण}

लागत न्यूनीकरण (Cost Minimization) ——> केंद्रीकृत आपूर्ति श्रृंखला (चीन हब) ——> उच्च संप्रभु जोखिम

{आधुनिक प्रतिमान : भू–आर्थिक विखंडन}

रणनीतिक लचीलापन (Resilience) ——> मित्र–तटवर्ती / क्षेत्रीयकरण ——> न्यूनतम संप्रभु जोखिम

क. फ्रेंड–शोरिंग (Friend-Shoring) और एली–शोरिंग (Ally-Shoring)

इसका तात्पर्य व्यापारिक नेटवर्क को केवल उन देशों तक सीमित करना है जो समान लोकतांत्रिक मूल्यों, राजनीतिक स्थिरता और भू–राजनीतिक हितों को साझा करते हैं। अमेरिकी ट्रेजरी सचिव जेनेट येलेन द्वारा प्रचारित यह अवधारणा वास्तव में चीन पर निर्भरता को कम करने का एक भू–राजनीतिक उपकरण है।

ख. डी–रिस्किंग (De-Risking) बनाम डी–कपलिंग (De-Coupling)

पश्चिमी देश (विशेषकर यूरोपीय संघ) अब चीन से पूरी तरह से आर्थिक संबंध तोड़ने (De-coupling) की अव्यावहारिकता को स्वीकार कर चुके हैं। इसलिए, वे 'डी–रिस्किंग' की नीति अपना रहे हैं, जिसका अर्थ है कि महत्वपूर्ण क्षेत्रों–जैसे दूरसंचार, एआई, ग्रीन टेक्नोलॉजी और रेयर अर्थ एलिमेंट्स (दुर्लभ पृथ्वी तत्व)–में अपनी आपूर्ति श्रृंखलाओं का विविधीकरण करना। भारत इसी 'डी–रिस्किंग' की प्रक्रिया का मुख्य लाभार्थी बनकर उभर रहा है।

3. वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला में संरचनात्मक परिवर्तन और भारत की रणनीतिक अवस्थिति

जब वैश्विक मूल्य श्रृंखलाएं (GVCs) पुनर्गठित हो रही हैं, तो बहुराष्ट्रीय कंपनियां केवल सस्ते श्रम की तलाश नहीं कर रही हैं, बल्कि वे राजनीतिक स्थिरता, सुदृढ़ कानूनी ढांचा, वृहद आर्थिक निरंतरता और बड़े घरेलू बाजार की मांग कर रही हैं। भारत इन सभी मानदंडों पर खरा उतरता है। भारत ने इस बदलते भू–आर्थिक परिदृश्य का लाभ उठाने के लिए एक बहु–स्तरीय आपूर्ति श्रृंखला रणनीति विकसित की है :

क. द्विपक्षीय और बहुपक्षीय तकनीकी संरेखण

भारत ने यह समझा है कि आधुनिक आपूर्ति श्रृंखला केवल वस्तुओं के परिवहन के बारे में नहीं है, बल्कि यह उच्च तकनीक (High-Tech) के हस्तांतरण और नियंत्रण के बारे में है।

iCET (US-India Initiative on Critical and Emerging Technology) : इसके तहत भारत और अमेरिका आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, क्वांटम कंप्यूटिंग, रक्षा नवाचार और विशेष रूप से सेमीकंडक्टर आपूर्ति श्रृंखलाओं में संयुक्त विकास पर काम कर रहे हैं। यह भारत को वैश्विक तकनीकी मूल्य श्रृंखला के शीर्ष स्तर पर स्थापित करने का प्रयास है।

Trade and Technology Council (TTC) : यूरोपीय संघ के साथ भारत का यह मंच तकनीकी मानकों, सुरक्षित 5G/6G बुनियादी ढांचे और हरित ऊर्जा की आपूर्ति श्रृंखला को सुरक्षित करने के लिए नीतिगत समन्वय स्थापित करता है।

Supply Chain Resilience Initiative (SCRI) : भारत, जापान और ऑस्ट्रेलिया द्वारा शुरू की गई यह त्रिपक्षीय पहल प्रत्यक्ष रूप से हिंद–प्रशांत क्षेत्र में चीन के आर्थिक दबदबे को संतुलित करने और अत्यधिक केंद्रीकृत आपूर्ति मार्गों के विविधीकरण के लिए एक संस्थागत तंत्र है।

4. घरेलू नीतिगत उपकरण : PLI योजना और बुनियादी ढांचे का आधुनिकीकरण

बाह्य आर्थिक कूटनीति तब तक प्रभावी नहीं हो सकती जब तक उसे मजबूत घरेलू नीतियों का समर्थन प्राप्त न हो। भारत सरकार ने वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए दो–आयामी घरेलू रणनीति अपनाई हैरू संरचनात्मक वित्तीय प्रोत्साहन और लॉजिस्टिक्स सुधार।

क. उत्पादन संबद्ध प्रोत्साहन (PLI) योजना का आलोचनात्मक विश्लेषण

PLI योजना भारत के पारंपरिक आयात–प्रतिस्थापन (Import-Substitution) मॉडल से अलग है। यह केवल घरेलू बाजार को विदेशी प्रतिस्पर्धा से बचाने के लिए टैरिफ लगाने की पुरानी नीति नहीं है, बल्कि यह घरेलू विनिर्माण की अक्षमताओं को दूर करने के लिए वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी श्उत्पादनश को वित्तीय रूप से पुरस्कृत करने की नीति है।

सरकार ने ₹1.97 लाख करोड़ (+26 बिलियन से अधिक) के बजटीय आवंटन के साथ 14 प्रमुख क्षेत्रों को लक्षित किया है :

[PLI रणनीतिक लक्ष्य समूह]

├── उच्च–तकनीक विनिर्माण (सेमीकंडक्टर, मोबाइल, दूरसंचार उपकरण)

├── राष्ट्रीय सुरक्षा व संप्रभुता (फार्मास्यूटिकल्स APIs, रक्षा उपकरण)

└── भविष्य की ऊर्जा (ACC बैटरियां, सौर पीवी मॉड्यूल)

सफलता और सीमाएं : इस योजना ने मोबाइल विनिर्माण के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है। भारत जो कभी मोबाइल का शुद्ध आयातक था, अब दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा मोबाइल निर्माता बन चुका है और एप्पल जैसी कंपनियां अपने नवीनतम मॉडलों का एक महत्वपूर्ण हिस्सा भारत में असेंबल कर रही हैं। हालांकि, फार्मास्यूटिकल्स में प्रयुक्त होने वाले 'सक्रिय दवा सामग्री' (APIs) और इलेक्ट्रॉनिक घटकों के प्राथमिक स्तर (Component Level) के विनिर्माण में भारत की निर्भरता अभी भी चीन पर काफी अधिक बनी हुई है, जो यह दर्शाता है कि मूल्य श्रृंखला का गहरा स्थानीयकरण (Deep Localization) एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है।

ख. लॉजिस्टिक्स और इन्फ्रास्ट्रक्चर की बाधाओं को दूर करना

भारत की वैश्विक मूल्य श्रृंखलाओं में शामिल न हो पाने की एक ऐतिहासिक वजह इसकी 'रसद लागत' (Logistics Cost) का अधिक होना रही है, जो भारत के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) का लगभग 13-14% रही है, जबकि विकसित देशों में यह केवल 7-8% है। इस अक्षमता को दूर करने के लिए निम्नलिखित दो स्तंभ स्थापित किए गए हैं :

पीएम गतिशक्ति राष्ट्रीय मास्टर प्लान : यह एक डिजिटल प्लेटफॉर्म है जो 16 मंत्रालयों (रेलवे, सड़क, नागरिक उड्डयन आदि) को एक साथ लाता है ताकि बुनियादी ढांचा परियोजनाओं की योजना और कार्यान्वयन में होने वाली देरी को समाप्त किया जा सके और मल्टी–मोडल कनेक्टिविटी स्थापित की जा सके।

राष्ट्रीय लॉजिस्टिक्स नीति (NLP) : इसका उद्देश्य प्रशासनिक प्रक्रियाओं को डिजिटल बनाना, 'सिंगल विंडो क्लीयरेंस' को बढ़ावा देना और अगले पांच वर्षों में भारत की लॉजिस्टिक्स लागत को घटाकर एकल अंक (Single Digit) में लाना है, ताकि भारतीय निर्यात वैश्विक बाजार में मूल्य के स्तर पर प्रतिस्पर्धी बन सके।

5. भारत के लिए वृहद–आर्थिक चुनौतियाँ और भू–आर्थिक विरोधाभास

यद्यपि भू–आर्थिक विखंडन भारत के लिए अवसरों के नए द्वार खोल रहा है, परंतु एक शोधकर्ता के रूप में इसके साथ आने वाले अंतर्निहित विरोधाभासों और गंभीर चुनौतियों का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना अनिवार्य है।

क. चीन के साथ व्यापार घाटे का विरोधाभास

भारत की सबसे बड़ी भू–आर्थिक विडंबना यह है कि जैसे–जैसे भारत घरेलू विनिर्माण और निर्यात बढ़ाता है, चीन से उसका कच्चे माल और मध्यवर्ती वस्तुओं (Intermediate Goods) का आयात भी आनुपातिक रूप से बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए, यदि भारत को बड़े पैमाने पर सौर पैनलों या इलेक्ट्रिक वाहनों की बैटरियों का निर्माण करना है, तो उसे उनके लिए आवश्यक सौर वेफर्स, लिथियम और अन्य इलेक्ट्रॉनिक कंपोनेंट्स चीन से ही आयात करने पड़ते हैं। अतः, पूर्ण 'डी–कपलिंग'की बात व्यावहारिक धरातल पर एक भ्रम की तरह है; भारत को एक ऐसी रणनीति की आवश्यकता है जिसे 'स्मार्ट इंटरडिपेंडेंस' कहा जा सके।

ख. संरक्षणवाद और टैरिफ की राजनीति

भारत एक तरफ वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला का हिस्सा बनना चाहता है, लेकिन दूसरी तरफ घरेलू उद्योगों को बचाने के लिए कई क्षेत्रों में आयात शुल्क (Tariffs) बढ़ा देता है। अर्थशास्त्री इस बात की ओर इशारा करते हैं कि वैश्विक मूल्य श्रृंखलाएं (GVCs) 'मुक्त और निर्बाध सीमा–पार व्यापार' पर फलती–फूलती हैं, जहां पुर्जे कई बार एक देश से दूसरे देश आते–जाते हैं। उच्च आयात शुल्क लगाने से भारत इन मूल्य

श्रृंखलाओं के सहज प्रवाह में एक बाधा की तरह दिखने लगता है, जिससे बहुराष्ट्रीय कंपनियां कभी–कभी वियतनाम या थाईलैंड जैसे देशों को प्राथमिकता देती हैं जहां व्यापारिक नीतियां अधिक खुली हैं।

ग. बहु–संरेखण (Multi-Alignment) की सीमाएं

भारत की विदेश नीति 'रणनीतिक स्वायत्तता' के तहत सभी प्रमुख शक्तियों के साथ संबंध बनाए रखने की है। भारत क्वाड (QUAD) में बैठकर अमेरिका के साथ हिंद–प्रशांत की सुरक्षा रणनीति बनाता है, और उसी समय ब्रिक्स (BRICS) तथा शंघाई सहयोग संगठन (SCO) में रूस और चीन के साथ मंच साझा करता है।

परंतु, जैसे–जैसे भू–आर्थिक विखंडन गहराएगा, पश्चिमी देश भारत पर अधिक स्पष्ट रुख अपनाने का दबाव बनाएंगे। उदाहरण के लिए, रूस पर लगे प्रतिबंधों के बीच भारत द्वारा रियायती तेल खरीदना और उसके भुगतान के लिए वैकल्पिक मुद्रा प्रणालियों का विकास करना, वाशिंगटन और यूरोपीय राजधानियों में पूरी तरह स्वीकार्य नहीं है। यदि कल को ताइवान जलडमरूमध्य में कोई सैन्य संकट उत्पन्न होता है, तो भारत के लिए अपनी इस बहु–संरेखण नीति को आर्थिक और रणनीतिक मोर्चे पर बनाए रखना अत्यंत कठिन हो जाएगा।

6. निष्कर्ष और नीतिगत रोडमैप (Conclusion and Policy Framework)

इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक का भू–आर्थिक विखंडन कोई अस्थायी घटना नहीं है, बल्कि यह वैश्विक आर्थिक व्यवस्था का एक स्थायी पुनर्गठन है। राष्ट्रीय सुरक्षा, आपूर्ति श्रृंखला की सुदृढ़ता और तकनीकी संप्रभुता अब शुद्ध बाजार–आधारित आर्थिक दक्षता से ऊपर प्राथमिकताओं में स्थापित हो चुकी हैं।

इस नए प्रतिमान में भारत न तो मूक दर्शक रह सकता है और न ही वह पुराने बंद अर्थव्यवस्था के मॉडल की ओर लौट सकता है। भारत की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि वह अपनी 'आपूर्ति श्रृंखला कूटनीति' को कितनी कुशलता से क्रियान्वित करता है। भविष्य के लिए निम्नलिखित नीतिगत दृष्टिकोण आवश्यक हैं :

टैरिफ संरचना का सुसंगतीकरण : भारत को मध्यवर्ती वस्तुओं (Inputs) पर टैरिफ को न्यूनतम करना चाहिए और केवल अंतिम उत्पाद (Finished Goods) पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए, ताकि हम GVCs में गहराई से एकीकृत हो सकें।

ग्लोबल साउथ का नेतृत्व : भारत को खुद को अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के देशों के लिए एक तकनीकी और आर्थिक हब के रूप में प्रस्तुत करना चाहिए। भारत द्वारा विकसित 'डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर' (जैसे UPI और ओपन नेटवर्क) को इन देशों में निर्यात करके भारत एक नए प्रकार की डिजिटल और वित्तीय आपूर्ति श्रृंखला का नेतृत्व कर सकता है, जो पश्चिमी या चीनी मॉडल पर निर्भर नहीं है।

कौशल विकास और श्रम सुधार : वियतनाम और अन्य प्रतिस्पर्धियों के मुकाबले भारत का सबसे बड़ा लाभ उसका विशाल जनसांख्यिकीय लाभांश (Demographic Dividend) है। लेकिन विनिर्माण क्षेत्र की आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप कुशल जनशक्ति (Skilled Labor) की भारी कमी है। उच्च तकनीक विनिर्माण (जैसे सेमीकंडक्टर फैब्रिकेशन) के लिए अकादमिक संस्थानों और उद्योगों के बीच समन्वय स्थापित करना होगा।

अंततः, भू–आर्थिक विखंडन के इस दौर में भारत की रणनीतिक स्वायत्तता का असली परीक्षण इस बात से होगा कि वह खुद को एक महाशक्ति के रूप में स्थापित करने के लिए इस विखंडन का उपयोग वैश्विक आर्थिक अनिश्चितताओं के बीच एक 'विश्वसनीय, सुरक्षित और अपरिहार्य आर्थिक ध्रुव' के रूप में कैसे करता है।

संदर्भ :

- उपाध्याय, पी. (2025) – वेपनाइज्ड इंटरडिपेंडेंस और भारत की आर्थिक संप्रभुता : एक रणनीतिक परिप्रेक्ष्य. जर्नल ऑफ इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स, 22(2), 115–138.
- गोपीनाथ, जी. (2023) – द जियो–इकोनॉमिक फ्रैगमेंटेशन एंड द फ्यूचर ऑफ मल्टिलेटरलिज्म. अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर संख्या 9842.
- दास, एस. (2024) – आपूर्ति श्रृंखला लचीलापन और भारतीय विनिर्माण : एक आलोचनात्मक मूल्यांकन, भारतीय रिजर्व बैंक ऑकेजनल पेपर्स, 45(1), 22–45.
- फारेल, एच., और न्यूमैन, ए. (2019) – वेपनाइज्ड इंटरडिपेंडेंस : हाउ ग्लोबल इकोनॉमिक नेटवर्क्स शेप स्टेट कोएर्शन. इंटरनेशनल सिक्योरिटी, 44(1), 42–79.
- फर्ग्यूसन, एन. (2024) – दूसरा शीत युद्ध या आर्थिक क्षेत्रीयकरण?. जर्नल ऑफ जियो–इकोनॉमिक्स, 12(3), 110–128.
- सुब्रमण्यम, ए. (2025) – हाइपर–वैश्वीकरण के बाद का भारत : नए व्यापार प्रतिमान और नीतिगत विकल्प, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

The Digital Public Infrastructure (DPI) as India's New Geopolitical Currency: Deconstructing the "India Stack" as a Counter-Hegemonic Model for the Global South

Dr. Ravi Prakash Singh
Assistant Professor
University Department of Political Science
Bhupendra Narayan Mandal University
Madhepura, Bihar

Abstract

This paper analyzes the emergence of India's Digital Public Infrastructure (DPI)—popularly known as the "India Stack"—as a transformative tool of strategic autonomy and economic statecraft. While traditional digital globalization has been dominated by either the laissez-faire, monopolistic corporate models of Silicon Valley or the state-led, surveillance-heavy architectures of authoritarian regimes, India has pioneered a third way. By developing open-source, interoperable public rails for identity (Aadhaar), payments (UPI), and data exchange, New Delhi has successfully decoupled digital public goods from private monopoly capital. This study argues that the internationalization of the India Stack serves as a potent instrument of Indian foreign policy, offering nations in the Global South a viable blueprint to escape digital neocolonialism. Through a rigorous critique of techno-imperialism and an evaluation of the geo-economic frictions between sovereign digital frameworks and Western multinational conglomerates, this paper posits that DPI represents India's most significant contemporary contribution to a multipolar global order.

Keywords: Digital Public Infrastructure, India Stack, Global South, Strategic Autonomy, Geo-economics, Techno-Nationalism, Multipolarity.

Introduction: The New Frontiers of Sovereign Power

In the contemporary international system, the traditional parameters of national power—military throw-weight, industrial output, and territorial expanse—are increasingly being superseded by the control over digital architectures. The global digital economy, for the past three decades, has operated under a binary hegemony. On one side stands the Western Anglo-American model, characterized by surveillance capitalism, where a handful of Silicon Valley tech monopolies exercise extra-sovereign control over data, financial transactions, and public

discourse. On the other side is the techno-authoritarian model, pioneered by Beijing, which leverages state-directed digital infrastructure for internal social control and external economic dependence through digital silk roads.

For the Global South, this binary presents a neo-colonial dilemma: surrender data sovereignty to Western corporate boardrooms or embed national security within authoritarian digital ecosystems. It is within this geopolitical cleft that India has articulated a paradigm-shifting alternative. India's Digital Public Infrastructure (DPI), conceptually anchored on the "India Stack," represents a foundational departure from both models. By establishing open-source, public-spirited, and state-facilitated but privately executed digital networks, India has reimagined how a developing state can achieve mass financial and social inclusion.

This paper explores the structural architecture of India's DPI and evaluates its transition from a domestic governance mechanism to a cornerstone of Indian economic diplomacy. It examines how New Delhi is positioning its digital success story as a scalable, affordable, and sovereign-friendly alternative for developing nations, thereby challenging the established structures of global tech-hegemony.

The Theoretical Framework: Digital Neocolonialism vs. Technological Autonomy

To understand the strategic value of the India Stack, one must first locate it within the theoretical matrix of post-colonial critique and modern geo-economics. Digital neocolonialism can be defined as the practice of using digital technology to look after, govern, and control a population in a manner reminiscent of traditional colonial powers. In the classical era, imperial powers extracted raw materials from the periphery and sold back finished goods, creating systemic dependencies. In the digital age, data is the new raw material. Western Big Tech platforms extract raw data from user bases in Africa, Asia, and Latin America, process this data in Western data centers, and monetize it back to these populations via proprietary algorithms, all while evading local regulatory oversight and eroding domestic financial systems.

India's DPI introduces a counter-hegemonic framework that disrupts this extractive cycle. By treating digital identity, payment systems, and data consent as public goods—akin to roads, railways, and clean water—rather than proprietary software, India has redefined the relationship between the citizen, the market, and the state.

[Traditional Model: Silicon Valley/Proprietary]
User Data ---> Proprietary Monopolies ---> Value Extraction (West)

[India's DPI Model: Open-Source/Public Rails]
User Data ---> Open Public Infrastructure ---> Local Innovation & Sovereign Control

This structural shift aligns with the realist pursuit of **Strategic Autonomy**. In a multipolar world, strategic autonomy cannot be achieved merely through non-aligned diplomatic rhetoric or defense diversification; it requires technological self-reliance. By building its own core financial and identity rails, India successfully insulated its domestic economy from external systemic shocks, such as the weaponization of global financial networks (e.g., the SWIFT exclusions) or the arbitrary policy shifts of foreign mega-corporations.

Anatomy of the India Stack: Open Rails and the Elimination of Monopolistic Rents

The structural resilience of India's DPI lies in its layered, unbundled architecture. Unlike proprietary applications (such as WhatsApp, Apple Pay, or Visa) which operate within closed "walled gardens," the India Stack separates the underlying infrastructure from the consumer-facing application layer.

1. The Identity Layer (Aadhaar)

The foundational bedrock of the stack is Aadhaar, a biometrically verified digital identity system. Academically, Aadhaar must be understood not just as an identification tool, but as a mechanism that lowered the transaction costs of governance. It eliminated the middleman in state-directed welfare systems, solving the classic post-colonial state dilemma of "leakage" in fiscal transfers.

2. The Payments Layer (Unified Payments Interface - UPI)

UPI revolutionized retail banking by eliminating the rent-seeking practices of international card networks like Visa and Mastercard. Traditionally, these Western conglomerates charged merchant discount rates (MDR) ranging from 1% to 3% on transactions—a capital drain that directly harmed small traders in developing economies. UPI's interoperable protocol allowed any bank or third-party application to transfer funds instantly, securely, and at zero or near-zero cost. By breaking the monopoly of private international clearinghouses, UPI democratized domestic capital flows.

3. The Data Governance Layer (Data Empowerment and Protection Architecture - DEPA)

While Western models monetize user data without explicit consent frameworks, and the European GDPR model creates heavy regulatory burdens that stifle small businesses, India's DEPA introduces a "Consent Manager" framework. It gives individuals ownership over their data, allowing them to securely share their financial, health, or educational records with service providers to unlock credit or services, thereby transforming data from a corporate asset into a personal economic resource.

Geo-Economic Frictions: India's DPI vs. Western Institutional Power

The domestic success of India's DPI has inevitably triggered quiet but intense structural friction with Western financial and tech institutions. This friction manifests in three primary domains:

The Displacement of Global Financial Oligopolies

For decades, global cross-border remittances and retail transactions have been the exclusive domain of Western-dominated networks. The internationalization of UPI—through agreements with nations in Southeast Asia, the Middle East, and Europe—directly threatens the market share of established credit entities. When India introduces a zero-cost or low-cost instantaneous cross-border payment mechanism, it directly challenges the exorbitant fees levied by Western remittance giants, fees that heavily burden low-income migrant workers across the Global South.

The Critique from Western Regulatory Paradigms

Western think tanks and corporate lobbies have frequently criticized India's state-backed digital systems, raising concerns over data privacy, centralization, and state surveillance. While some privacy concerns merit legitimate academic inquiry, much of the structural criticism functions as a rhetorical defense mechanism for market protectionism. Western corporate structures prefer a completely deregulated global digital commons where local governments lack the tools to restrict data outflows. India's insistence on data localization and sovereign public rails upsets this preference.

The Rejection of "Platform Capitalism

In the Western model, platforms like Amazon, Uber, or Google control both the marketplace and the infrastructure, allowing them to stifle local competition. India's counter-strategy is visible in initiatives like the Open Network for Digital Commerce (ONDC) and the Open Health Services Network. By unbundling e-commerce and healthcare, India prevents foreign capital from establishing digital monopolies over local supply chains, safeguarding its vast unorganized retail sector from predatory pricing strategies.

The Global South Dimensions: DPI as an Instrument of South-South Cooperation

The defining characteristic of India's contemporary foreign policy under the rubric of "Vishwa Mitra" (Friend of the World) is its projection as the voice and leader of the Global South. Historically, India's leadership of the developing world was moralistic and ideological, often lacking the material resources to compete with Western aid or China's checkbook diplomacy. The India Stack changes this equation by providing New Delhi with a highly potent, non-coercive, and cost-effective developmental asset to export.

Feature	**Western Big Tech Model**	**Chinese Digital Silk Road**	**India's DPI Model**
Primary Driver	Corporate Profit / Shareholder Value	State Surveillance / Geopolitical Leverage	Public Good / Sovereign Autonomy
Cost Structure	High (Monopolistic rents, platform fees)	High (Debt-laden infrastructure packages)	Low (Open-source, highly scalable)
Data Ownership	Proprietary (Stored in Western servers)	State-Controlled (Accessible by Beijing)	Sovereign (Controlled by the host nation)
Local Innovation	Stifled (Local apps are acquired or crushed)	Restricted (Dependent on Chinese hardware)	High (Open APIs allow local developers to build)

Many nations in Africa, Latin America, and Central Asia face the daunting task of digitizing their societies without the capital to pay massive licensing fees to Western tech conglomerates or the desire to surrender critical communications data to Beijing's state apparatus. India's offer to share the modular architecture of the India Stack through open APIs (Application Programming Interfaces) presents an elegant solution. It allows recipient nations to build their own customized, sovereign-controlled digital networks using Indian expertise, without falling into a digital debt trap.

This approach transforms India's diplomatic engagement from a donor-recipient dynamic to an egalitarian partnership based on technological empowerment. It builds deep institutional goodwill and long-term strategic alignment, giving India a unique leverage point in multilateral forums like the United Nations, G20, and BRICS.

Challenges, Contradictions, and the Road Ahead

Despite its immense strategic potential, India's DPI face significant structural and geopolitical vulnerabilities that require candid academic assessment.

1. The Domestic Cyber-Security and Privacy Deficit

A core vulnerability of an interconnected, state-facilitated digital architecture is the risk of catastrophic data breaches. As India consolidates vital citizen data—from financial assets to healthcare records—within centralized or federated public databases, it becomes a prime target for state-sponsored cyber warfare actors, particularly from the adversarial axis of China and Pakistan. The robustness of India's legislative and technical frameworks regarding data protection remains a work in progress. A single systemic breach could severely damage the credibility of the model, undermining its viability as a reliable export for other sovereign nations.

2. The Risk of Digital Exclusion

In its zeal for rapid technological formalization, the Indian model occasionally risks exacerbating the internal "digital divide." In rural peripheries, where internet connectivity remains erratic and digital literacy is low, making critical public services contingent upon biometric authentication can lead to administrative exclusion. For the India Stack to serve as a flawless template for the Global South, it must develop resilient offline or low-connectivity operational capabilities that ensure no segment of the population is marginalized by the march of technology.

3. Geopolitical Pushback from Great Power Rivals

As India attempts to export its DPI framework, it will encounter fierce resistance from both Washington and Beijing. Western governments will continue to lobby on behalf of their tech giants, framing Indian open-source mandates as unfair trade barriers or intellectual property violations. Simultaneously, China will attempt to outbid Indian initiatives by bundling its 5G/6G hardware infrastructure with attractive financial loans through its Digital Silk Road initiative. Navigating this crossfire requires a highly sophisticated combination of economic diplomacy and strategic agility.

Conclusion: Crafting a Multipolar Digital Order

The evolution of India's Digital Public Infrastructure from a domestic administrative experiment into a major asset of international diplomacy marks a crucial turning point in the

geopolitics of the twenty-first century. It demonstrates that true strategic autonomy in the modern era cannot be sustained merely by balancing traditional military alliances; it must be anchored in the capacity to design, deploy, and export critical technological architectures.

By providing a viable alternative to the extractive monopolies of Western capitalism and the surveillance-driven models of authoritarian states, the India Stack offers a democratic, decentralized, and sovereign-respecting pathway for the developing world. It challenges the conventional hierarchies of international political economy and repositions India not merely as a balancing power, but as a major rule-maker and architectural force in the emerging global order.

Ultimately, the true success of India's digital statecraft will not be measured by the valuation of its tech startups, but by its capacity to lead the Global South toward a more equitable, secure, and multipolar digital future.

References:

- Bardhan, P. (2022). *State and development in a post-colonial world: A comparative perspective.* Oxford University Press.
- Caribou Digital. (2021). *Digital Public Infrastructure in the Global South: Foundations, governance, and equity.* Caribou Research Reports.
- Center for Strategic and International Studies (CSIS). (2023). *The internationalization of the India Stack: Implications for global digital governance.* CSIS Policy Briefs.
- Nilekani, N., & Shah, T. (2023). *The third way: How Digital Public Infrastructure can democratize the global economy.* Foreign Affairs, 102(4), 45-58.
- Subrahmanyam, J. (2024). *Techno-nationalism and strategic autonomy in India's foreign policy.* Journal of Indian Foreign Affairs, 19(1), 12-31.
- Zuboff, S. (2019). *The age of surveillance capitalism: The fight for a human future at the new frontier of power.* PublicAffairs.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

अयोध्या मंडल के अनुदानित और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं विद्यालयी वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन

आकांक्षा श्रीवास्तव
शोध छात्रा(शिक्षाशास्त्र), आर.आर.पी.जी कॉलेज, अमेठी
डॉ. देवेन्द्र मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर(शिक्षाशास्त्र), आर.आर.पी.जी कॉलेज, अमेठी

सारांश :
प्रस्तुत शोध में अयोध्या मंडल के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों पर विद्यालयी वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। शोध हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया है। विद्यालयी वातावरण के मापन हेतु डॉ. करुणा शंकर मिश्रा द्वारा निर्मित मापनी का उपयोग किया तथा शैक्षिक उपलब्धि के मापन हेतु डॉ. श्याम स्वरूप जलोटा द्वारा निर्मित मानसिक योग्यता मापनी को लिया गया है। न्यादर्श हेतु अयोध्या मंडल के अनुदानित और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 200 छात्र–छात्राओं को लिया जिसमें अयोध्या मंडल के अनुदानित और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के 100–100 छात्र–छात्राओं का यादृच्छिक विधि से चयन किया गया तथा उद्देश्य प्राप्ति हेतु टी–टेस्ट सांख्यिकी विश्लेषण किया गया तथा पाया गया कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर नहीं है तथा विद्यार्थियों की विद्यालयी वातावरण स्तर में भी सार्थक नहीं अंतर नहीं हैं।

प्रमुख शब्द – विद्यालयी वातावरण, शैक्षिक उपलब्धि, माध्यमिक छात्र, सरकारी एवं गैर सरकारी।

1. भूमिका

शिक्षा व्यक्ति की योग्यता एवं रूचि के अनुसार स्वतंत्र ढंग से विकास करने का अवसर प्रदान करती है। अनेक शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा को मानव के समग्र विकास तथा प्रगति का महत्वपूर्ण साधन माना है, जिसके फलस्वरूप इन शिक्षाविदों ने शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिवर्तनों में अपना योगदान दिया है प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री डॉ.माइकल सैडलर ने अपने कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग की स्थापना की जिसके अथक प्रयासों के कारण भारत में माध्यमिक शिक्षा उच्च शिक्षा, स्त्री शिक्षा, अध्यापक शिक्षा, प्रौद्योगिक व व्यवसायिक शिक्षा में विशेष प्रगति हुई। अरथर मेहनू के शब्दों में श्कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोजन का प्रतिवेदन सुझाव और सूचना का अनन्त स्रोत रहा है। भारतीय शिक्षा के इतिहास में इसका असीम महत्व है।

भारत देश में प्राचीन समय से ही शिक्षा को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। शिक्षा को प्रकाश स्रोत अंतर्दृष्टि, अंतर्ज्योति और मनुष्य का तीसरा नेत्र माना जाता है। शिक्षा कामधेनु और कल्पतरू के समान व्यक्ति की सब मनोकामनाओं को पूर्ण करती है और उसका सर्वागीण विकास करती हैं।

विज्ञान के इस युग में प्राचीन मान्यताएँ बदल रही है फिर भी यह सर्वमान्य तथ्य है कि 'विद्यार्थी राष्ट्र के भावी कर्णधार है'। वे राष्ट्र की प्रगति के सशक्त संबल है यही छात्र अपनी योग्यताओं के आधार पर आगे

चलकर योग्य वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, चिकित्सक, इंजीनियर, वकील एवं शिक्षक बनेगें, ये ही देश को प्रगति के क्षेत्र पर ले जाने में सहायक सिध्द होगें। भावी विद्यार्थियों के इस उन्नत व भावी भविष्य के लिए एक दृढ नींव की आवश्यकता होती है जो विद्यार्थियों को विद्यालय के माध्यम से प्राप्त होती है।

वर्तमान समय में बदलते मूल्यों के चलते विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों में परिवर्तन हो रहे हैं जिसके कारण विद्यार्थियों का मस्तिष्क व ध्यान अन्य मनोरंजक व क्रियाकलापों में फंसा रहता है जिसके कारण विद्यार्थी अपनी विषयी शिक्षा की तरफ विशेष ध्यान नहीं देते फलस्वरूप जिसका परिणाम उनकी शैक्षणिक उपलब्धि में दिखाई पड़ता है अतः ऐसी स्थिति में विद्यालय का यह अहम् कर्तव्य बनता है कि विद्यालय उन विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि का कारण है। इनकी असफलता व निम्न शैक्षणिक उपलब्धि के कुछ कारण अवश्य होगें। इन्हीं असफलताओं को देखकर शोधकर्ता के मन में इसके कारणों को जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई।

2. अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

वर्तमान समय में शिक्षा का इतना अधिक प्रसार हो गया है जिसके कारण देश में इतने अधिक विद्यालयों की स्थापना हो रही है ये विद्यालय अधिकतर निजी क्षेत्रों में स्थापित किए जा रहे हैं जो बहुत बड़े पैमाने पर, शांत क्षेत्र पर अत्याधिक योग्य शिक्षक, उपर्युक्त सभी सुविधाएँ, पुस्तकालय, खेल का मैदान छात्र शिक्षक आपसी संबंधों पर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है जिसके कारण विद्यालयों का वातावरण स्वस्थ्य रह सके। इस व्यवस्थित वातावरण के कारण विद्यालयों की शैक्षणिक उपलब्धि बहुत अधिक प्रभावित हो सके। इसकी विशेष व्यवस्था की जा रही है। इसका शिक्षण में महत्वपूर्ण स्थान है। परंतु जिन विद्यालयों की स्थापना वातावरण को ध्यान में न रखकर की गई है। जो कौतूहल वाले क्षेत्र, उपर्युक्त सुविधाओं का अभाव अयोग्य शिक्षकों की नियुक्ति ऐसे विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि निम्न कोटि की रहती है। इस संबंध में फिलिप जे.एच. 2010) ने विद्यार्थियों के विद्यालय वातावरण एवं शैक्षिक उपलब्धि के अध्ययन को महत्वपूर्ण माना।

आज के परिवेश में जहाँ शिक्षा का इतना अधिक प्रचार व प्रसार हो रहा है, अतः किस प्रकार विद्यालय अपने विद्यालयीन वातावरण को अनुकूल और व्यवस्थित करें जिससे विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धि को उच्च किया जा सके। यहीं प्रस्तुत समस्या की उत्पत्ति होती है और इस अध्ययन द्वारा यहाँ यही जानने का प्रयास किया गया है तथा इसी समस्या के अध्ययन के लिए यह शोध कार्य किया जा रहा है।

3.सम्बन्धित शोध साहित्य का अध्ययन

कक्कड़, एन. (2016) ने उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के घर के वातावरण और निष्पत्ति के सम्बन्धों को जानने हेतु अध्ययन किया। शोध के निदर्श में रोहतक जिले के 160 सेकेंडरी स्कूल के विद्यार्थी शामिल थे। आंकड़ों को एकत्र करने के लिए डॉ. करुणा शंकर मिश्रा की होम एनवायरनमेंट इन्वेंटरी का इस्तेमाल किया गया। शोध के परिणामों से पता चला कि घर के वातावरण और विद्यार्थियों की निष्पत्ति के बीच एक सकारात्मक संबंध थे। छात्राओं की तुलना में छात्राओं के घर के वातावरण और निष्पत्ति के बीच ज्यादा सहसम्बन्ध पाया गया।

नायक एवं मरकाम (2018) ने ''उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के शालेय वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन'' किया। अध्ययन के निष्कर्ष में पाया गया कि शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के शालेय वातावरण एवं विद्यार्थियों के शैक्षिक वातावरण में अन्तर नहीं है जबकि उच्च, मध्यम एवं निम्न शालेय वातावरण में अन्तर है तथा इन तीनों वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर है।

कुमारी अर्चना एवं स्वर्ण रेखा (2022) ने माध्यमिक छात्रों के शैक्षिक निष्पत्ति पर पारिवारिक एवं सामाजिक वातावरण के प्रभाव पर शोध कार्य किया। जिसका उद्देश्य मुजफ्फरपुर के मुशहरी विकास खंड के

कक्षा 9वीं एवं 10वीं कक्षा के 200 विद्यार्थियों के उपलब्धि पर सामाजिक व पारिवारिक वातावरण के प्रभाव को जानना था। टी–परीक्षण एवं सहसम्बन्ध गुणांक द्वारा निष्कर्ष में पाया गया कि सामाजिक एवं पारिवारिक वातावरण दोनों का ही छात्रों के शैक्षिक निष्पत्ति पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

तिवारी वेदपाठी एवं बापट विवेक (2024) ने प्राथमिक स्तर पर अध्ययन करने वाले छात्रों के सज्ञानात्मक विकास पर विद्यालय वातावरण के प्रभाव का अध्ययन किया। अध्ययन हेतु ग्वालियर शहर के कुल 800 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया। शालिनी पाण्डेय तथा श्वेता अग्रवाल द्वारा निर्मित विद्यालयी वातावरण मापनी की सहायता से 8वीं कक्षा के विद्यार्थियों से आँकड़ों को संग्रहीत किया गया तथा निष्कर्ष में पाया गया कि अनुकूलित वातावरण में बच्चों का सज्ञानात्मक विकास लड़कों का सज्ञानात्मक विकास काफी बेहतर पाया गया।

चतुर्वेदी, दीपा (2025) ने प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों के शैक्षिक स्तर पर पारिवारिक पृष्ठभूमि के प्रभाव का अध्ययन किया। शोध में सर्वेक्षण विधि की सहायता से अनुपपुर जनपद के कक्षा पाँचवीं तक के 640 विद्यार्थियों का चयन यादृच्छिक विधि से किया गया। अध्ययन में पाया गया कि विद्यार्थियों के माता–पिता की शैक्षिक योग्यताओं, आवास की स्थिति तथा परिवार के स्वरूप का बच्चों के शैक्षिक स्तर को सार्थक रूप से प्रभावित करती है।

4.समस्या कथन

माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि एवं विद्यालयी वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन।

5.चरों का परिभाषीकरण

5.1 शैक्षिक उपलब्धि

शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य है–"प्राप्त ज्ञान या शालेय विषयों में विकसित प्रवीणता या कुशलता, जो कि प्रायः परीक्षण में प्राप्त अंकों द्वारा या शिक्षक द्वारा दिये अंकों या दोनों के द्वारा निश्चित की गई हो"।

शैक्षिक उपलब्धि से अभिप्राय छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध, कौशल, अनुप्रयोग आदि योग्यताओं की मात्राओं से है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य उ.प्र. के अयोध्या मंडल के अनुदानित और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत विद्यार्थियों के मानसिक योग्यता मापनी(डॉ. श्याम स्वरूप जलोटा द्वारा मानकीकृत) के प्राप्तांकों को, शैक्षिक उपलब्धि के रूप में लिया गया है।

5.2 विद्यालयी वातावरण

विद्यालयी वातावरण को शोधकर्ता निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं–''बालक के शैक्षिक विकास को प्रभावित करने वाले समस्त कारकों को विद्यालयी वातावरण कहते हैं।''

विद्यालयी वातावरण से तात्पर्य विद्यालय में विद्यार्थियों के शैक्षिक कार्यों से है जिसमें के.एस. मिश्र द्वारा निर्मित 'विद्यालय वातावरण अनुसूची' के अन्तर्गत विद्यार्थियों के सृजनात्मक उद्दीपक, संज्ञानात्मक प्रोत्साहन, अनुमतिकरण, स्वीकारोक्ति, अस्वीकृति, नियंत्रण आदि से है।

6. अध्ययन के उद्देश्य

1. छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।

7. अध्ययन की परिकल्पनाएं

1. छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

8. शोध विधि

प्रस्तुत शोध कार्य में उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया।

9. अध्ययन के उपकरण –

- विद्यालय वातावरण मापनी–डॉ. करुणा शंकर मिश्रा द्वारा निर्मित।
- मानसिक योग्यता मापनी–डॉ. श्याम स्वरूप जलोटा द्वारा निर्मित।

10. जनसंख्या या समष्टि

प्रस्तुत शोध अध्ययन के सन्दर्भ में जनसंख्या से तात्पर्य, उ.प्र. के अयोध्या मंडल (अयोध्या, अंबेडकर नगर, अमेठी, बाराबंकी एवं सुल्तानपुर) के अनुदानित और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों के समस्त छात्रों व छात्राओं से है।

11.अध्ययन के न्यादर्श

न्यादर्श में उ.प्र. के अयोध्या मंडल (अयोध्या, अंबेडकर नगर, अमेठी, बाराबंकी एवं सुल्तानपुर) के अनुदानित और गैर अनुदानित माध्यमिक विद्यालयों से समानुपात में (प्रत्येक जनपद से 40–40 विद्यार्थी) 100 छात्र–100 छात्राओं का चयन स्तरीकृत यादृच्छिक निदर्श विधि द्वारा किया गया जो कि निम्नलिखित तालिका के अनुसार है–

सारणी : 01–न्यादर्श तालिका

समूह	न्यादर्श (400)				
	अनुदानित		गैर अनुदानित		योग
	शहरी	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण	
छात्र	25	25	25	25	100
छात्राएं	25	25	25	25	100
योग	50	50	50	50	200

परिकल्पनाओं का परीक्षण एवं ग्राफीय प्रदर्शन

परिकल्पना H_01–छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

सारणी : 02

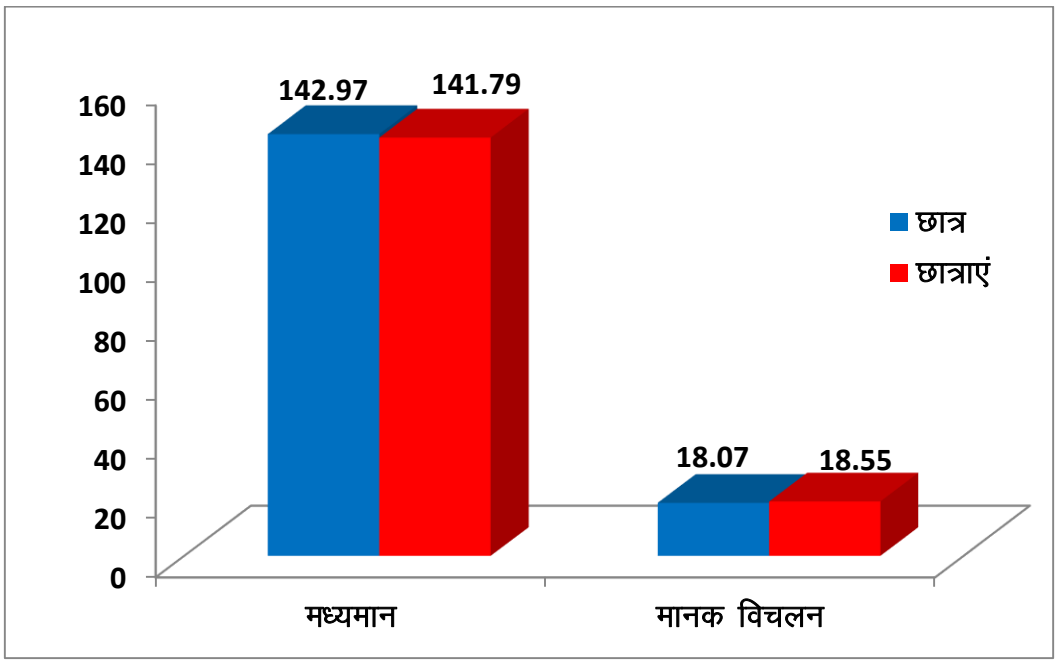
छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण सम्बन्धित टी–मूल्य विश्लेषण

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	मध्यमानों का अन्तर	टी मूल्य df=198
छात्र	100	142.97	18.07	2.60	1.18	0.455
छात्राएं	100	141.79	18.55			(0.01 स्तर पर असार्थक)

(0.01 सार्थकता पर 'टी' मूल्य का मान 2.59 है।)

सारिणी 02 में प्रदर्शित आँकड़ों से स्पष्ट है कि सम्पूर्ण छात्रों के विद्यालयी वातावरण के प्राप्तांकों का मध्यमान व मानक विचलन क्रमशः 142.97 व 18.07 है जबकि सम्पूर्ण छात्राओं का विद्यालयी वातावरण का मध्यमान व मानक विचलन क्रमशः 141.79 तथा 18.55 है। जिनमें टी–मूल्य का मान 0.455 प्राप्त हुआ है। सांख्यिकीय सारिणी में 198 मुक्तांश व 0.01 विश्वास स्तर पर टी–मूल्य का मान 2.59 दिया गया है जो टी–मूल्य के प्राप्त मान 0.455 से बहुत अधिक है।

अतः शून्य परिकल्पना–"छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण में कोई सार्थक अंतर नहीं है" स्वीकृत की जाती है अर्थात् छात्रों एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण में लगभग समानता पाई गई।



ग्राफ संख्या–01
छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण का तुलनात्मक ग्राफ प्रदर्शन

परिकल्पना H_02– छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

सारणी : 03

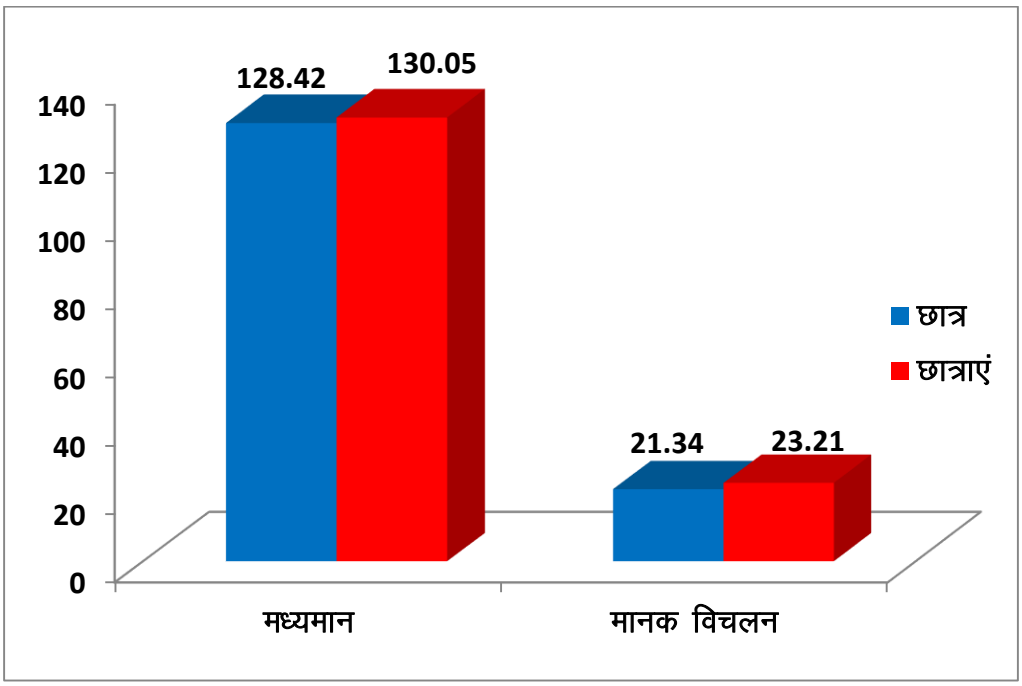
छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि से सम्बन्धित टी–मूल्य विश्लेषण

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मानक त्रुटि	मध्यमानों का अन्तर	टी मूल्य **df=198**
छात्र	100	128.42	21.34	3.15	1.87	0.59
छात्राएं	100	130.05	23.21			(0.01 स्तर पर असार्थक)

(0.01 सार्थकता पर 'टी' मूल्य का मान 2.59 है।)

सारिणी 03 से स्पष्ट है कि छात्रों के शैक्षिक उपलब्धि के प्राप्तांकों का मध्यमान व मानक विचलन क्रमशः 128.42 व 22.63 तथा छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि के प्राप्तांकों का मध्यमान व मानक विचलन क्रमशः 130.05 व 23.21 है। जिनमें टी–मूल्य का मान 0.81 प्राप्त हुआ। सांख्यिकीय सारिणी में 198 मुक्तांश व 0.01 विश्वास स्तर पर टी–मूल्य का मान 2.59 दिया गया है जो टी–मूल्य के प्राप्त मान से अधिक है।

अतः शून्य परिकल्पना– "छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है "स्वीकृत होती है अर्थात् "छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में लगभग समानता पाई गई।



ग्राफ संख्या–02
छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक ग्राफ प्रदर्शन

परिकल्पना परीक्षण 1–

छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सारणी संख्या 02 में आँकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि उच्च प्राथमिक विद्यालयों के छात्र तथा छात्राओं के शैक्षिक अथवा विद्यालयी वातावरण संबन्धित टी–मूल्य–(*t=0.455*) 0.01 सार्थकता स्तर पर असार्थक हैं क्योंकि विद्यालयों में इन विद्यार्थियों के साथ लैंगिक आधार पर कोई भेद नहीं किया जाता है। इसके अतिरिक्त शिक्षक, कक्षा में नए विचारों को प्रोत्साहित करने, समान रूप से कक्षा में प्रश्न पूछने,शिक्षक द्वारा अपने शिक्षण कार्य को रोचक बनाने के प्रयास करने, प्रतिदिन के व्यवहार पर निगरानी करने, विद्यार्थियों को चिंतन करने का, विद्यालय तथा शिक्षकों द्वारा समान अवसर प्रदान किए जाते हैं।

परिकल्पना परीक्षण 2–

छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सारणी संख्या 03 में आँकड़ों के विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि सम्बन्धित टी–मूल्य (*t=0.59*) 0.01 सार्थकता स्तर पर असार्थक है, क्योंकि लैंगिक आधार पर दोनों समूहों को समान रूप से विद्यालय में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में सहभागिता करने के अवसर मिलता है, समान शैक्षिक संसाधनों से अंतर्क्रिया करते हैं, एक ही प्रकार की परीक्षा एवं मूल्यांकन की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। अतः छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में कोई अंतर नहीं है।

12. निष्कर्ष

- छात्र एवं छात्राओं के विद्यालयी वातावरण में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया।
- छात्र एवं छात्राओं के शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं नहीं पाया गया।

संदर्भ–

- आर., शर्मा एवं वी.सक्सेना.(2006).शिक्षा मनोविज्ञान एवं मापन, राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा।
- कपिल, एच.के.(2019). अनुसंधान विधियाँ भार्गव बुक हाउस संस्करण।
- कुमारी अर्चना एवं स्वर्ण रेखा (2022), माध्यमिक विद्यालय के छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि पर उनके पारिवारिक वातावरण एवं सामाजिक वातावरण का प्रभाव, *अपनी माटी,* अंक 39, जनवरी–मार्च 2022.
- चतुर्वेदी, दीपा (2025).प्राथमिक विद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों के शैक्षिक स्तर पर पारिवारिक पृष्ठभूमि के प्रभाव का अध्ययन, *IJMT***,** वाल्यूम 7, पृष्ठ 17–20.
- तिवारी वेदपाठी एवं बापट विवेक (2024). प्राथमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों के सज्ञानात्मक विकास पर विद्यालय वातावरण के प्रभाव का अध्ययन, *स्कालरली रिसर्च जर्नल फॉर इंटर्डीसीप्लिनरी स्टडीज,* वाल्यूम 12, पृष्ठ 94–100.
- नायक, पी0के0 एवं मरकाम, प्रियंका (2018). उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के शालये वातावरण का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन, *इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवासं एजुकेशन एण्ड रिसर्च,* वाल्यूम 03, इश्यू 3, पृ0 28–30.
- सुखिया, एस.पी.(2006). विद्यालय संगठन एवं स्वास्थ्य शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, छब्बीसवां संस्करण।
- Kakkar, N (2016). Study of academic achievement in relation to home environment of secondary school students- *Scholarly Journal for Humanity Science and English Language*, vol 3 (13), page 3247&3252

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन

रतनेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग,
के.बी. पी.जी. कालेज, मीरजापुर

सारांश :
प्रस्तुत अध्ययन मीरजापुर जनपद के नगरीय क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के आध्यात्मिक बुद्धि और शैक्षणिक उपलब्धियों के बीच सम्बन्ध का पता लगाता है। विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि एक आंतरिक प्रेरणा के रूप में कार्य करती है जो उसकी उपलब्धि को प्रोत्साहित करती है। इसलिए, वर्तमान अध्ययन में माध्यमिक छात्रों की आध्यात्मिक बुद्धि के उसकी शैक्षणिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव की जाँच की गयी है। इस अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के आध्यात्मिक बुद्धि और शैक्षणिक उपलब्धि का अध्ययन करना था। प्रस्तुत अध्ययन 05 माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के एक न्यादर्श पर किया गया, जिनमें से 50 छात्र और 50 छात्राएं थीं। अतः आध्यात्मिक बुद्धि के मापन एवं आँकड़ों के संग्रह हेतु के.एस. मिश्रा द्वारा निर्मित 'आध्यात्मिक बुद्धि पैमाने' का उपयोग किया गया। वर्तमान अध्ययन में, नमूना चयन 'समान स्तरीकृत तकनीक' के माध्यम से किया गया। प्राप्त और एकत्रित आँकड़ों को सांख्यिकी तकनीकों का उपयोग करके मात्रात्मक रूप से विश्लेषण किया गया। तथा पाया गया कि विद्यार्थियों में आध्यात्मिक बुद्धि उनके शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव डालती है।

प्रमुख शब्द : आध्यात्मिक बुद्धि, शैक्षिक उपलब्धि, माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी।

1. भूमिका

आध्यात्मिक बुद्धि, मनुष्यों की बुद्धि के महत्वपूर्ण प्रकारों में से एक है। आध्यात्मिक बुद्धि का तात्पर्य आध्यात्मिक जानकारी तक पहुँचने, उसे व्यक्त करने और उस पर विचार करने की क्षमता से है। आध्यात्मिक बुद्धि को मनुष्य की उस क्षमता के रूप में वर्णित किया गया है, जिसके द्वारा वह जीवन के गहरे अर्थों और हमारे तथा जिस दुनिया में हम रहते हैं, उसके बीच अंतर्निहित संबंधों के बारे में प्रश्न पूछता है। आध्यात्मिक बुद्धि किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और सक्षम क्षेत्र है। आध्यात्मिक बुद्धि को एक ऐसे संतुलन के रूप में वर्णित किया जा सकता है, जो धार्मिक मस्तिष्क और दो अलग–अलग स्तरों के बीच के सम्बन्ध को, व्यक्ति के रहने के परिवेश के सहयोग से, इंगित करता है। आध्यात्मिक बुद्धि एक ऐसा साधन है जो जीवन की गुणवत्ता या आत्म–सम्मान, अनुभव, आदर, आनंद, स्नेह, रचनात्मकता और शांति को बढ़ावा देता है। आध्यात्मिक बुद्धि, व्यक्तिगत और दीर्घकालिक जीवन को उच्च स्तरों पर जीने की कुंजी है। आध्यात्मिक बुद्धि वह तरीका है जिसे कोई व्यक्ति अपने परिवेश की समस्याओं के समाधान के लिए अपनाता है, और

अपनी बुद्धि का उपयोग करके उन समस्याओं को हल करने का प्रयास करता है। आध्यात्मिक बुद्धि एक गुप्त शक्ति के समान है। आध्यात्मिक बुद्धि का सम्बन्ध मन और आत्मा के आंतरिक जीवन से, तथा इस भौतिक संसार में हमारे अस्तित्व से है। आध्यात्मिक बुद्धि का तात्पर्य, अस्तित्व संबंधी प्रश्नों की गहरी समझ और चेतना के विभिन्न स्तरों में अंतर्दृष्टि प्राप्त करने की क्षमता से है। इसके अतिरिक्त, आध्यात्मिक बुद्धि का तात्पर्य आत्मा को हमारे अस्तित्व के आधार के रूप में, अथवा विकास की रचनात्मक जीवन–शक्ति के रूप में पहचानने की चेतना से भी है। आध्यात्मिक बुद्धि एक विद्यार्थी को यह समझने में सहायता करती है कि वह अपने परिवेश के साथ किस प्रकार तालमेल बिठा रहा है, और अपनी समस्याओं को कितने प्रभावी ढंग से हल कर रहा है। इस शताब्दी में, आध्यात्मिक बुद्धि का उपयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

शैक्षणिक उपलब्धि किसी छात्र के सीखने का वर्तमान स्तर है। शैक्षणिक उपलब्धि या शैक्षणिक प्रदर्शन से तात्पर्य उस अवधि या सीमा से है, जिस हद तक किसी छात्र, शिक्षक या संस्थान ने अल्पकालिक या दीर्घकालिक शैक्षणिक लक्ष्यों को प्राप्त किया है। शैक्षणिक उपलब्धि को आमतौर पर परीक्षाओं या सतत मूल्यांकन के माध्यम से मापा जाता है, लेकिन इस बात पर कोई एकमत नहीं है कि इसकी गुणवत्ता का आकलन कैसे किया जाए या कौन से घटक सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं–जैसे कि प्रक्रियात्मक ज्ञान (कौशल) बनाम घोषणात्मक जानकारी (तथ्य)।

2.सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा

नेल्म्स (2005) ने "एक विश्वविद्यालय के माहौल में कॉलेज छात्रों की आध्यात्मिकता और स्वास्थ्य के बीच संबंध" पर एक अध्ययन किया। इसमें कॉलेज छात्रों द्वारा स्वयं बताई गई आध्यात्मिकता के स्तर और उनके स्वास्थ्य की स्थिति के बीच सम्बन्ध का पता लगाया गया। यह अध्ययन महत्वपूर्ण प्रतीत होता है, क्योंकि यह युवा वयस्कों के स्वास्थ्य के विभिन्न आयामों में आध्यात्मिकता की भूमिका को समझने की दिशा में एक अहम कदम है।

श्रीजा (2005) ने "विश्वविद्यालय के छात्रों में आध्यात्मिकता, भावनात्मक परिपक्वता और जीवन की गुणवत्ता" पर एक अध्ययन किया है। परिणामों से पता चलता है कि आध्यात्मिकता के मामले में लड़कों और लड़कियों के बीच काफी अंतर है, लेकिन भावनात्मक परिपक्वता और जीवन की गुणवत्ता के मामले में लड़कों और लड़कियों के बीच कोई खास अंतर नहीं है। यह पाया गया कि आध्यात्मिकता और भावनात्मक परिपक्वता धर्म से स्वतंत्र हैं, लेकिन आध्यात्मिकता और भावनात्मक परिपक्वता के बीच एक महत्वपूर्ण सहसम्बन्ध पाया गया।

शबानी, हसन, अहमद और बाबा (2011) ने अध्ययन किया कि आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता और भावनात्मक बुद्धिमत्ता को मानसिक स्वास्थ्य का एक संकेतक माना जा सकता है। परिणामों से यह साबित हुआ कि मानसिक स्वास्थ्य पर आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता और भावनात्मक बुद्धिमत्ता का प्रभाव पड़ सकता है। इसके अलावा, मानसिक स्वास्थ्य के साथ आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता और भावनात्मक बुद्धिमत्ता के सम्बन्ध पर लिंग के मध्यस्थ प्रभाव की पुष्टि नहीं हो पाई।

रावल अजय एवं पटेल वीनाबेन (2019) ने क्षेत्र के संदर्भ में "उच्च माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का अध्ययन" नामक शीर्षक पर शोध कार्य किया। आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता का सम्बन्ध मन और आत्मा के आंतरिक जीवन और दुनिया में हमारे अस्तित्व से है। आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता का अर्थ है अस्तित्व से जुड़े सवालों की गहरी समझ और चेतना के विभिन्न स्तरों की अंतर्दृष्टि। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य छात्रों में आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता के स्तर का पता लगाना तथा छात्रों की आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता पर क्षेत्र के प्रभाव का पता लगाना था। इस अध्ययन का शोध क्षेत्र शैक्षिक मनोविज्ञान है। गांधीनगर जिले के गुजराती माध्यम के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कक्षा 11 में पढ़ने वाले छात्र इस अध्ययन की जनसंख्या के रूप में लिया गया

तथा निदर्श हेतु स्कूलों का चयन 'स्तरीकृत यादृच्छिक तकनीक' से और 423 छात्रों का चयन 'क्लस्टर नमूना विधि' से किया गया। इस अध्ययन के लिए सर्वेक्षण विधि चुनी गई। आँकड़ों को एकत्र करने के लिए स्वयं तैयार किए गए 'आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता पैमाने' का उपयोग किया गया। परिकल्पना परीक्षण के लिए टी–परीक्षण का उपयोग किया गया और स्तर निर्धारित करने के लिए P^{33} और P^{67}का उपयोग किया गया। अध्ययन में पाया गया कि आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता के स्तर के अनुसार, 33.57 प्रतिशत छात्र निम्न और मध्यम स्तर में थे और 32.86 प्रतिशत छात्र उच्च स्तर में थे। आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता के निम्न और मध्यम स्तर में, शहरी क्षेत्रों के छात्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों के छात्रों का प्रतिशत अधिक पाया गया और उच्च स्तर में स्थिति इसके विपरीत था। आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता के मामले में ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों के छात्रों में समानता पायी गयी।

भट्ट, मोहम्मद सईद (2024) ने "कश्मीर घाटी के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों में आध्यात्मिक बुद्धि" नामक शीर्षक पर शोध कार्य किया। अध्ययन में पाया गया कि आध्यात्मिक समझ का विकास छात्रों के अध्ययन में सफलता में मदद करता है। इस संदर्भ में, कश्मीर घाटी के सेकेंडरी स्कूल के छात्रों की आध्यात्मिक समझ पर एक अध्ययन की गई, जिसमें लड़के और लड़कियों, ग्रामीण और शहरी, और सरकारी और प्राइवेट सेकेंडरी स्कूल के छात्रों के बीच तुलना की गई। कश्मीर घाटी के 30 सरकारी और प्राइवेट सेकेंडरी स्कूलों से 600 छात्रों को दैव निदर्शन विधि से चुना गया। आँकड़ों के एकत्र करने के लिए चुने गए छात्रों पर के. एस. मिश्रा (2014) द्वारा विकसित 'सोशल इंटेलिजेंस स्केल' का इस्तेमाल किया गया। आँकड़ों के विश्लेषण के लिए प्रतिशत आँकड़ों और टी–टेस्ट का इस्तेमाल किया गया। अध्ययन के परिणामों में पाया गया कि माध्यमिक विद्यालयों की छात्राओं में छात्रों (लड़कों) की तुलना में काफी ज्यादा आध्यात्मिक समझ पाया गया। शहरी छात्रों की तुलना में ग्रामीण छात्रों में आध्यात्मिक समझ ज्यादा पायी गयी। इसके अलावा, अध्ययन में यह निष्कर्ष निकला कि प्राइवेट माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों की तुलना में कश्मीर घाटी के सरकारी स्कूलों के छात्रों में आध्यात्मिक समझ काफी कम थी।

3.अध्ययन की आवश्यकता और महत्व

आध्यात्मिक बुद्धि की अवधारणा किसी व्यक्ति के निजी जीवन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आध्यात्मिक बुद्धि हमें यह जानने में मदद करती है कि हम कौन हैं, और समाज में उस जागरूकता के साथ जीवन जीने में भी सहायक होती है। आध्यात्मिक बुद्धि दूसरों को सबसे गहरे स्तर पर समझने की हमारी क्षमता का विस्तार करती है। आध्यात्मिक बुद्धि हमें बिना किसी पूर्वाग्रह के, दूसरों के व्यवहार के वास्तविक कारणों को समझने और उनकी सराहना करने में सक्षम बनाती है। साथ ही, यह हमें दूसरों की वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति करने में तब तक मदद करने के लिए प्रेरित करती है, जब तक कि वे स्वयं अपनी आवश्यकताओं को पूरा करना न सीख जाएं। यह अध्ययन कई दृष्टिकोणों से आवश्यक और महत्वपूर्ण है–न केवल लोगों के बीच सद्भाव और श्रेष्ठता स्थापित करने के संदर्भ में, बल्कि शिक्षा के संज्ञानात्मक और गैर–संज्ञानात्मक कारकों के बीच संभावित अंतर्संबंधों को उजागर करने के दृष्टिकोण से भी। आध्यात्मिक बुद्धि, एक 'सामान्य मनुष्य' को एक 'पूर्ण मनुष्य' के रूप में विकसित करने में सहायक सिद्ध होती है। आध्यात्मिक बुद्धि हमें चिंतन–प्रक्रिया और आत्मा के स्वरूप को समझने में मदद करती है। यह किसी भी स्त्री या पुरुष को, विभिन्न लोगों के दृष्टिकोण से समस्याओं का अवलोकन करने और उन पर विचार करने का अवसर प्रदान करती है। आध्यात्मिक बुद्धि, बुद्धिमत्ता का सबसे सहज और सरलतम स्वरूप है। प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि आध्यात्मिक बुद्धि और शैक्षणिक उपलब्धि आपस में किस प्रकार संबंधित हैं। इस अध्ययन के द्वारा शोधकर्ता यह जान सकेगा कि माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में, लिंग के आधार पर आध्यात्मिक बुद्धि में किस प्रकार की भिन्नताएँ पाई जाती हैं। इस अध्ययन से आध्यात्मिक बुद्धि के व्यापक दायरे का भी बोध होगा, जो अंततः आध्यात्मिक बुद्धि के मूल उद्देश्य को

पहचानने में सहायक सिद्ध होगा। इस अध्ययन को पूर्ण करने के उपरांत, हमें आध्यात्मिक बुद्धि तथा शैक्षणिक उपलब्धि के साथ उसके अंतर्संबंधों के विषय में एक स्पष्ट और सुस्पष्ट अवधारणा प्राप्त हो सकेगी।

4.अध्ययन की समस्या

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन।

5.अध्ययन में प्रयुक्त चरों का परिभाषीकरण

- **आध्यात्मिक बुद्धि :** वोलेमेन (2001) ने बताया है कि "आध्यात्मिक बुद्धि वह मानवीय क्षमता है जिसके द्वारा व्यक्ति जीवन के अर्थ के बारे में प्रश्न पूछता है, और साथ ही हममें से प्रत्येक व्यक्ति तथा जिस दुनिया में हम रहते हैं, उनके बीच के अटूट जुड़ाव का अनुभव करता है।"
- **शैक्षिक उपलब्धि :** प्रस्तुत अध्ययन में, शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य माध्यमिक विद्यालय के छात्रों द्वारा अपनी पिछली अंतिम परीक्षा में प्राप्त अंकों से है।
- **माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी**
  माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का अर्थ है, वह छात्र जो किसी माध्यमिक विद्यालय में नामांकित हो। शिक्षा का माध्यमिक चरण, जिसमें कक्षा 9वीं एवं 10वीं का शैक्षणिक अध्ययन शामिल होता है। प्रस्तुत अध्ययन जनपद मीरजापुर के नगरीय माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत कक्षा 10वीं के छात्रों को माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थी के रूप में लिया गया है।

6.अध्ययन के उद्देश्य

- माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि का उनके शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

7.अध्ययन की परिकल्पनाएं

- $H0_1$: माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
- $H0_2$: माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
- $H0_3$: माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

8.अध्ययन की विधि एवं प्रक्रिया

अनुसंधान की आवश्यकता और उद्देश्य के अनुसार, इस शोध में प्रासंगिक आँकड़ों को एकत्र करने हेतु वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया। यह अध्ययन माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के साथ किया गया, और विद्यालयों का चयन उत्तर प्रदेश के मीरजापुर जिले के नगरीय क्षेत्रों से यादृच्छिक रूप से किया गया है।

9.अध्ययन का न्यादर्श

इस अध्ययन में नमूने के चयन के लिए 'सरल यादृच्छिक नमूना चयन' विधि अपनाई गई। वर्तमान अध्ययन में, कुल जनसंख्या में से 5 माध्यमिक विद्यालय के छात्रों को यादृच्छिक रूप से अध्ययन के नमूने के रूप में चुना गया है। इस नमूने में 50 छात्र (पुरुष) और 50 छात्राएं (महिला) शामिल हैं। अध्ययन के लिए नमूने का चयन यादृच्छिक रूप से इसलिए किया गया है, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि जनसंख्या की

प्रत्येक इकाई को चुने जाने का समान अवसर प्राप्त हो। शोध कार्य के लिए शोधकर्ता द्वारा सरल यादृच्छिक नमूना चयन तकनीक का उपयोग किया गया।

10.अध्ययन के उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में आँकड़ों को एकत्र करने हेतु निम्नलिखित उपकरणों का उपयोग किया गया है। के.एस. मिश्रा (2014) द्वारा निर्मित 'आध्यात्मिक बुद्धि पैमाना'। इस पैमाने में 42 मद शामिल हैं। इसे हाई स्कूल के विद्यार्थियों पर लागू किया गया। इसमें पाँच–बिंदु वाले लिकर्ट–प्रकार के प्रतिक्रिया प्रारूप का उपयोग किया गया। ये पाँच प्रतिक्रियाएं हैं– पूर्णतः सहमत, सहमत, अनिर्णित, असहमत और पूर्णतः असहमत। नमूना विषयों की शैक्षिक उपलब्धि का मूल्यांकन, उनके पिछले एक या दो वर्षों के शैक्षिक प्रदर्शन के रिकॉर्ड की जाँच करके किया गया।

11.आँकड़ों का विश्लेषण और व्याख्या

परिकल्पना 1–$H_0 1$: माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका संख्या–01

माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि का टी–मूल्य विश्लेषण

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमानों का अन्तर	टी–मूल्य	सार्थकता स्तर (df 98=2.63)
छात्र	50	149.50	26.32	2.57	**0.510**	**0.01 स्तर पर असार्थक**
छात्राएं	50	146.93	23.97			

उपरोक्त तालिका के अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमशः 149.50 तथा 146.93 एवं मानक विचलन क्रमशः 26.32 तथा 23.97 प्राप्त हुआ। दोनों मध्यमानों के मध्य सार्थक अंतर की जाँच के लिए टी–मूल्य की गणना की गयी जिसका मान 0.510 प्राप्त हुआ जो कि स्वतन्त्रांश 98 के 0.01 सार्थकता स्तर पर टी के सारणी मूल्य 2.63 से कम है। अतः 0.01 सार्थकता स्तर पर टी का गणितीय मान असार्थक है। निष्कर्ष के रूप में **माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि** में अन्तर नहीं पाया गया। अतः शून्य परिकल्पना माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।" स्वीकृत होती है।

परिकल्पना 2–$H_0 2$: माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका संख्या–02

माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का टी–मूल्य विश्लेषण

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	मध्यमानों का अन्तर	टी–मूल्य	सार्थकता स्तर (df 98=2.63)
छात्र	50	68.58	5.65	1.53	**1.224**	**0.01 स्तर पर असार्थक**
छात्राएं	50	70.11	6.89			

उपरोक्त तालिका के अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमशः 68.58 तथा 70.11 एवं मानक विचलन क्रमशः 5.65 तथा 6. 89 प्राप्त हुआ। दोनों मध्यमानों के मध्य सार्थक अंतर की जाँच के लिए टी–मूल्य की गणना की गयी जिसका मान 1.224 प्राप्त हुआ जो कि स्वतन्त्रांश 98 के 0.01 सार्थकता स्तर पर टी के सारणी मूल्य 2.63 से कम है।

अतः 0.01 सार्थकता स्तर पर टी का गणितीय मान असार्थक है। निष्कर्ष के रूप में माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर नहीं पाया गया। अतः शून्य परिकल्पना माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।" स्वीकृत होती है।

परिकल्पना 3–$H_0$3 : माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।

तालिका संख्या–03
माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध विश्लेषण

समूह	संख्या	सहसम्बन्ध	सार्थकता स्तर	सार्थकता df=100
आध्यात्मिक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि	100	0.265	0.05 0.01 0.194 0.253	0.01 सार्थकता स्तर पर सार्थक

उपरोक्त तालिका के अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध 0.265 प्राप्त है। जो 0.01 सार्थकता स्तर पर नियत मान 0.253 से अधिक है।अतः कहा जा सकता है कि छात्र एवं छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सकारात्मक सहसम्बन्ध है, अर्थात् आध्यात्मिक बुद्धि, का विद्यार्थियों की उपलब्धि पर विशेष प्रभाव पड़ता हैं।

अतः शून्य परिकल्पना "माध्यमिक विद्यालयों के छात्र–छात्राओं की आध्यात्मिक बुद्धि एवं उनके शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक सहसम्बन्ध है।" स्वीकृत होती है।

12.अध्ययन के शैक्षिक निहितार्थ

आध्यात्मिक बुद्धि शैक्षिक उपलब्धि का उच्चतम बिन्दु है, क्योंकि यह छात्रों को अच्छे व्यवहार, बुद्धिमत्ता और ईमानदारी सिखा सकती है। आध्यात्मिक बुद्धि ने छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में योगदान दिया है। इस वर्तमान अध्ययन के निष्कर्षों से पता चला कि यह हमारे विश्वास और मान्यताओं को बढ़ाती है, और यह भी पाया गया कि आध्यात्मिक बुद्धि उन महत्वपूर्ण कारकों में से एक है जिसने छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में योगदान दिया है। वर्तमान समय में छात्रों को कई समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जो उन्हें अपने शैक्षिक लक्ष्यों को प्राप्त करने से भटका सकती हैं। इसलिए, इन समस्याओं से निपटने के लिए छात्रों को आध्यात्मिक बुद्धि के तत्वों से न केवल विद्यालयों में, अपितु घर पर भी अवगत कराया जाना चाहिए। प्रस्तुत अध्ययन दर्शाता है कि आध्यात्मिक और शैक्षिक उपलब्धि के बीच एक सकारात्मक सम्बन्ध है। साथ ही आध्यात्मिक बुद्धि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का पूर्वानुमान लगाती है। इस वर्तमान अध्ययन के माध्यम से शिक्षक अपने छात्रों की आवश्यकताओं और उनके स्तर को समझने का एक तरीका खोज सकते हैं, जो उनके शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार के लिए प्रभावी होगा। प्रस्तुत अध्ययन के माध्यम से, छात्र आध्यात्मिक बुद्धि के बारे में जानकर अपने शैक्षिक लक्ष्यों को बेहतर बनाने के लिए कुछ प्रेरणा प्राप्त करते हैं।

13.निष्कर्ष

आध्यात्मिक बुद्धि, बुद्धि का एक उच्च आयाम है। आध्यात्मिक बुद्धि हमें बिना किसी पूर्वाग्रह के, व्यवहार के वास्तविक कारणों को समझने में मदद करती है। इस अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि आध्यात्मिक बुद्धि किस प्रकार छात्रों को उनकी शैक्षणिक आवश्यकताओं को समझने और पूरा करने में सहायता करती है। आध्यात्मिक बुद्धि हमें जीवन जीने का सही तरीका बताती है और हमें आंतरिक संघर्षों से भी मुक्त करती है। आध्यात्मिक बुद्धि हमेशा व्यक्तियों को अपने परिवार और समाज के साथ बेहतर तालमेल बिठाने में मदद करती है। आध्यात्मिक बुद्धि हमें यह जानने में सहायता करती है कि हम कौन हैं, और हमें समाज में उसी आत्म–जागरूकता के साथ जीवन जीने की प्रेरणा देती है। इस अध्ययन के माध्यम से यह निष्कर्ष निकलता है कि आध्यात्मिक बुद्धि और शैक्षणिक उपलब्धि– ये दोनों ही एक–दूसरे से सकारात्मक और महत्वपूर्ण रूप से जुड़े हुए हैं। आध्यात्मिक बुद्धि, छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि में व्यावहारिक रूप से योगदान देती है। शैक्षणिक क्षेत्र के विभिन्न आयामों में आध्यात्मिक बुद्धि एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जिन छात्रों में आध्यात्मिक बुद्धि का स्तर उच्च होता है, वे विभिन्न प्रकार की समस्याओं को हल करने में सक्षम होते हैं और अपनी नकारात्मक भावनाओं को भी प्रभावी ढंग से दूर कर पाते हैं। इस अध्ययन के निष्कर्षों से यह पता चला है कि आध्यात्मिक बुद्धि और शैक्षणिक उपलब्धि हमारे विश्वास और आस्था को सुदृढ़ करते हैं। साथ ही, यह भी स्पष्ट हुआ है कि छात्रों की शैक्षणिक सफलता में योगदान देने वाले प्रमुख कारकों में से एक 'आध्यात्मिक बुद्धि' भी है। इस शोध के माध्यम से, शोधकर्ता ने यह पाया है कि आध्यात्मिकता का छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष, दोनों ही रूपों में प्रभाव पड़ता है।

संदर्भ

1. डब्ल्यू, जे. बेस्ट., एवं कान, जे. वी. (2006). 'रिसर्च इन एजुकेशन'. नई दिल्लीः पी.यच आई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।
2. डॉ. मोहन, राधा, एवं प्रो. ई. जी. परमेश्वर, (2011). ''रिसर्च मेथड इन एजुकेशन''. नई दिल्लीः नीलकमल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड।
3. पाठक, आर. पी. (2011). 'रिसर्च इन एजुकेशन' एंड साइकोलॉजी' नोएडा, भारतः डॉरलिंग किंडरस्ले प्राइवेट लिमिटेड।
4. महासनेह एम. अहमद एवं अन्य (2015); जॉर्डन में विश्वविद्यालय के छात्रों के बीच आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता और व्यक्तित्व गुणों के बीच संबंध, *'साइको रेजिडेंट बिहैव मैनेजमेंट*, 8 (1), पृष्ठ 89–97.
5. जे मेयर, जे. (2000). आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता या आध्यात्मिक चेतना? *'द इंटरनेशनल जर्नल फॉर द साइकोलॉजिव रिलिजन'*, खंड 10,पृष्ठ 47–56.
6. अरबाबीसरजौ, ए., राघिब, एम. एस., मोयेद, एन., एवं रेजाजादेह, एस.एस. (2013). विभिन्न प्रकार की बुद्धिमत्ता और छात्र उपलब्धि के बीच संबंध, *'लाइफ साइंस जर्नल',* 10 (7), पृष्ठ 128–133.
7. जॉर्ज रेचल एवं अन्य (2013). आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता, शिक्षक की प्रभावशीलता और शैक्षणिक उपलब्धि के साथ इसका सहसंबंध–एक अध्ययन, *'इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन एंड साइकोलॉजिकल रिसर्च'.* 2(2), पृष्ठ 106–110.
8. पटेल, सब्बल एवं अन्य (2016). शैक्षणिक उपलब्धि के संदर्भ में उच्च माध्यमिक छात्रों की आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता और भावनात्मक बुद्धिमत्ता के बीच संबंध, *'इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी रिसर्च'.* 1(9), पृष्ठ 67–72.
9. नेल्म्स. डब्ल्यू. एल (2005), विश्वविद्यालय के माहौल में कॉलेज के छात्रों के बीच आध्यात्मिकता और स्वास्थ्य के बीच संबंध, *'जर्नल ऑफ रिलिजन एंड हेल्थ',* खंड 46, संख्या 2, पृष्ठ 249–265.

10. श्रीजा (2005). विश्वविद्यालय के छात्रों के बीच आध्यात्मिकता, भावनात्मक परिपक्वता और जीवन की गुणवत्ता, अप्रकाशित शोध–प्रबंध / थीसिस।
11. रावल, अजय बी.एवं पटेल, वीनाबेन के. (2019), हायर सेकेंडरी स्कूल के छात्रों की आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता का उनके क्षेत्र के संदर्भ में अध्ययन, *रिसर्च गुरुः ऑनलाइन जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी सब्जेक्ट्स (पीयर रिव्यूड),* वॉल्यूम 13(1), पेज पृष्ठ 626–631.
12. भट, मो. सईद (2024), कश्मीर घाटी में सेकेंडरी स्कूल के छात्रों में आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता, *शोधकोशः जर्नल ऑफ विजुअल एंड परफॉर्मिंग आर्ट्स,* वॉल्यूम 5(4), पेज पृष्ठ 149–149.

International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

Sustainable Menstruation: Impact on Environment and Women

Pooja Bharti
Research Scholar-Department of Sociology
Mahatma Gandhi Kashi Vidyapith, Varanasi.
Prof. Bharti Rastogi
Department of Sociology,
Director, Institute of Tourism Studies
Mahatma Gandhi Kashi Vidyapith, Varanasi.

ABSTRACT: -

Menstruation is a natural and biological process in which women bleed every month from the age of 13 - 51 years. During menstruation women use various menstrual products like sanitary pads. Menstruation is not only a women's issue, but it also affects the environment by causing pollution as menstrual products contain plastic and chemicals. In India 121 million girls and women menstruate and dispose of 21,780 million pads, which poses a threat to the environment and can also be a health hazard. This paper aims at studying the impact of menstruation on the environment, importance of safe and hygienic menstruation and efforts taken by Government and non-governmental organisations NGOs to achieve sustainable menstruation.

KEYWORDS: -
Sustainable menstrual products, biodegradable, menstruation, sanitary napkins, environment, women's health.

INTRODUCTION

Worldwide, there are 336 million girls and women who menstruate but according to NFHS 2015 - 2016 only 36 percent of women in India use sanitary pads. In India, sanitary napkins are the most popular menstrual hygiene item, which is non-disposable in nature and has a negative impact on the environment as it contains plastic and polymers. The main objective of Sustainable Menstruation is to make sure that every woman who menstruates has access to sustainable menstrual products and menstrual hygiene management. Menstrual hygiene is not just a personal health issue it is elaborately linked to several of **United Nations Sustainable Development Goals (SDGs)**. There are 17 sets of goals in SDGs which were established in 2015. These goals were created to eradicate poverty, protect the planet and secure prosperity for all by 2030. Menstrual hygiene is very prominent in achieving the goals like poverty, hunger, education, gender equality and sanitation. To start with **Sustainable Development Goals SDG-3** Its objective is to certify

that all age groups people should live healthy lives and promote themselves well. Menstrual hygiene is very important for menstruating girls and women. As neglected, it can cause infections and many reproductive health issues so it becomes necessary that all women should have information about sanitary products so that they can manage their period with safety and dignity. **SDG-4** Its objective is to ensure quality education and inclusion is directly affected by menstruation. There are many adolescent girls who belong to low-income backgrounds who had to drop out from school because of poor quality and less affordability of sanitary pads and lack of facilities to manage their menstruation. In India, menstruation is considered taboo, many stigmas and restrictions are related to it. As a result, girls and women had to go through many problems. They hesitate to talk freely about it and feel embarrassed. That is why it becomes necessary to educate girls about menstruation so that they can fearlessly go ahead and brighten their future uninterrupted. These gave birth to **SDG-5** whose objective is to attain gender equality and empower all girls and women in India. All menstruating girls are compelled to follow all the restrictions out of which girls and women are ashamed of talking about menstruation so it becomes necessary to educate them so that gender equality can be achieved. Especially in rural areas where women do not have many opportunities, education will help them to know about menstruation, menstrual hygiene management, safe disposal and using hygienic and eco-friendly methods of protection. At the end **SDG-6** It focuses on clean water and sanitation to all menstruating women. Hygiene needs proper sanitation and clean water, being unhygienic can bring many health issues. Women require facilities for changing pads and for their proper disposal method. As the sanitary pads contain polymers, plastics and toxic chemicals, which are known as non-biodegradable and mismanagement of disposing menstrual waste can be hazardous for the environment. It can cause various kinds of pollution and environmental degradation. Every year, millions of menstruating women use menstrual products like sanitary pads and inorganic tampons, which are known to be non-biodegradable. It produces almost 10,000 tonnes of menstrual waste which takes approximately 500 - 800 years to decompose, resulting in environmental degradation and human health issues. This highlights the need to find sustainable alternatives to menstrual hygiene practices in India and adopting menstrual management techniques that are good for women and have little or no adverse effect on the environment. **SDG 12** (Responsible Consumption and Protection) Sustainable menstrual products like menstrual cups, period panties and disposable sanitary napkins, which have less impact on environment and women's health as it is made up of organic cotton, renewable fibres and are chemical free most importantly, they are reusable and washable. It means that it reduces the waste generated by menstruation and puts less burden on earth landfills and it takes only a few months to decompose.

SDG 13 (Climate Action) non-biodegradable sanitary pads of single use releases heavy carbon footprint. In conclusion, using sustainable menstrual products will reduce greenhouse gas emission.

The main objective of the present paper is -

To study the impact of menstruation on the environment.

To study the importance of safe and hygienic menstruation among women.

To examine the efforts taken by Government and non-governmental organisations NGOs to achieve sustainable menstruation.

Subramaniyan in an article "Design of Domestic incinerator for the safe disposal of menstrual waste in the rural areas". Analysed that rural women still suffer from lack of safe disposal methods for menstrual waste. They had escaped schools during their periods. Disposing of sanitary napkins in an open environment can be hazardous to health and environment. So being a responsible citizen, it is necessary to dump the waste in ecofriendly designs, and its user's responsibility also to decompose waste in the best way possible as it contains polymers which harm the environment for years (2019).

Joseph. J Elangovan, N., & Sundaravel, E in an article "Attitude of urban women towards sustainable sanitary products: A study in Bangalore this study was conducted on women aged between 15-55 years in urban Bengaluru. This is an obvious factor that affects the purchase intentions of women in urban Bengaluru and awareness of product variables Environmental concern, parental pressure, peer pressure and product feature and sceptical about using sustainable sanitary products (2022).

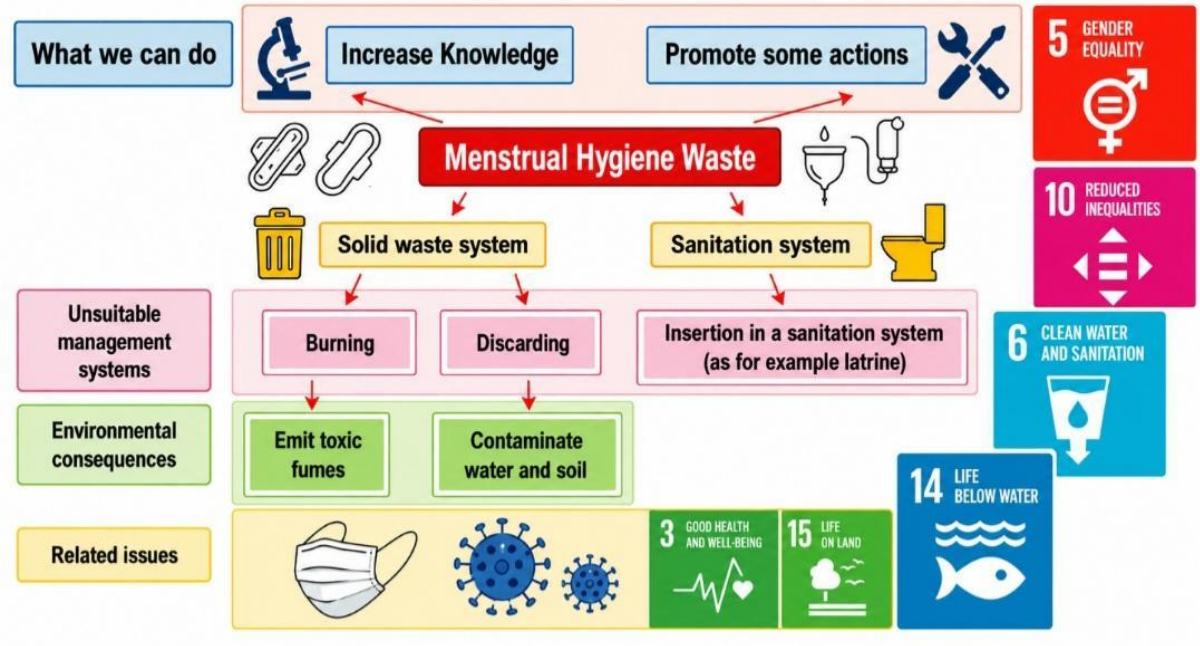
Tu.Jui-Che., Lo,Ting-Yum., Lai, Yi- Ting in an article "Women's cognition and attitude with eco-friendly menstrual products by consumer lifestyle", This study interviewed experts and collected questionnaires for qualitative and quantitative investigation and the analysis concluded that women have a positive attitude towards sustainability and understand their body. They collect information before buying a product while overcoming the difficulties in dealing with the environment and learning to adapt to them. The Government should increase sanitation education and improve sanitation facilities and serve as an important reference index for promotion of eco-friendly menstrual products for the benefit of the environment (2021).

Nagar, Vaishali in an article "A study on perspective of women towards biodegradable sanitary napkins" This study is done to understand the level of awareness towards using biodegradable napkins. The study concluded that the easy excessive availability and less price is the way by which favourable changes can be brought in terms of using biodegradable sanitary napkins, which can decrease the burden of managing biodegradable waste and can reduce the overflowing of the landfills (2022).

Impact of menstruation on environment

Menstrual hygiene is a contemporary problem that alters women, health and prosperity women in her entire productive age uses approximately 10,0000 pads, which takes 500-800 years to decompose, the decomposition of synthetic menstrual product and to manage it have conspicuous impact on the environment because it contains extreme amounts of plastic, bleach and super absorbent polymers, which are non-biodegradable. The synthetic sanitary pads require several energy resources which contribute to the emission of greenhouse gases as they cause pollution and are hazardous for the environment and wildlife, as well as human beings. Menstrual waste has become a serious ecological concern as millions of people use disposable menstrual products every month particularly in countries like India where waste management is already under compulsion. According to the study conducted by **Toxic Link in India, 2019** concluded that even the average

synthetic sanitary pads is equivalent to four plastic bags which takes hundreds of years to degrade. Moreover, a report by the Menstrual Health Alliance of India (MHAI 2018) disclosed that in India Approximately 121 million women use disposable sanitary napkins, which overall produces 11,30,000 menstrual waste per annum. Disposable sanitary pads one of the most used sanitary pads a single sanitary pad consists of 90% of the plastic components, super absorbent polymers, synthetic fibres, adhesive and chemicals. Millions of menstruating women use disposable sanitary napkins generating large amounts of non-biodegradable waste making it a major crisis. Tampons and applicators are composed of bleached rayon and cotton. Waste is generated by microplastic and packaging is a major factor that contributes to the pollution. Tampons not flushed clearly clog sewage systems and can contaminate water sources. Disposable sanitary napkins contain fragrance, dioxins and pesticide residues when disposed of in landfills cause leach into soil, pollute ground water and affect microorganism and soil fertility. In many places menstrual products are burned due to the lack of disposal facilities. The burnt pads cause air pollution as they contain toxic fumes, dioxins and furans causing respiratory problems and global warming. Throwing sanitary pads in water bodies can block drainage systems, increase flooding risk and entry of fibre into oceans. It also affects marine ecosystems by entering into the food chain as microplastic. It can also damage the digestive system of marine animals as they end up eating the plastic fragments considering it as their food.



Source: - Anand Uttpal, Vithanage Meththika, Upamali Anushka, et al; (2022) “Inapt management of menstrual hygiene waste (MHW): An urgent global environmental and public health challenge in developed and developing countries”.

Menstrual products come with plastic wrapper cardboard boxes and individual pad cover that causes packaging waste which adjoins secondary waste and elevates overall environmental burden. Menstruation despite being a natural biological process and because of the social stigma attached to it menstrual waste is often mixed with household garbage's. It can also be practised due to the lack of dedicated disposal infrastructure. This practice can cause various health problems to the waste collector or sanitation worker as they handle it without any proper protection and also causes environmental hazards due to the high plastic content. While menstruation itself is natural the commercialization of menstrual management has led to significant environmental problems. Disposable plastic products stain waste systems that raise carbon emissions and contribute to air, water and land pollution. In order to safeguard women's health and environment it is essential to educate women about menstruation and promote the use of sustainable, reusable and biodegradable alternatives and enhance waste management. The reason for a woman shifting towards biodegradable menstrual products is eco-friendliness. Women are attached to the environment; these menstrual products are green and cause less harm to the environment. We can avoid these barriers by educating women and making them aware about sustainable biodegradable menstrual products by awareness raising campaigns. It is necessary for every woman to know that there is a better option available than synthetic napkins and it is better for them as well as the environment. Workshops need to be conducted around menstrual health and hygiene, particularly targeting the social-cultural aspects of menstruation and strengthening them.

Importance of safe and hygienic menstruation among women

Safe and hygienic menstruation is an essential component of women's health and dignity. Menstrual hygiene management refers to having access to water and sanitation, having hygiene menstrual products, proper disposal facilities and having enough information and education regarding menstruation. In a country like India where a natural biological process such as menstruation is governed by social stigma, taboos. Lack of awareness, sanitation and knowledge about proper menstrual products and their disposal continues to influence menstrual practices. It becomes very important to fortify safe and hygienic menstruation. In India research shows that half of the adolescent girls face health issues due to poor menstrual hygiene emphasizing how lack of Information and silence affects women's well-being. Globally, the World Bank estimates that 500 million women still lack access to safe products and facilities showing the scale of the challenges. It is very important to maintain menstrual hygiene to avoid most of the health complications. The use of relevant and clean sanitary menstrual products like sanitary pads, tampons, cotton cloth which is properly washed and sun dried, maintaining proper sanitation like washing genital organs, and regularly changing pads lowers the risk of infection. Having unhealthy menstrual practices can lead to various infections and health issues like Reproductive Tract Infection, Bacterial and fungal infection, skin irritation and rashes, Pelvic inflammatory disease. Safe and hygienic menstrual practices are related to reproductive health of women infections can cause harm to the fertility and lead to chronic reproductive health problems. Consequently, maintaining proper menstrual hygiene is very important.

Environmental Burden of Different Menstrual Products

Product Type	Waste Generated Per Women During Reproductive Life	Decomposition Time
Disposal Pads	125-150 kg	500-800 years
Tampons	90-120 kg	6 months - 500 years
Menstrual Cup	Less than 1kg	Up to 10 years
Reusable Cloth Pads	5-10 kg	5-6 months

Source: - Menstrual Products & their Disposal, Toxic Link.

Shifting towards menstrual products that are eco-friendly and biodegradable have a number of health benefits and well-being of the girls and women for their reproduction and vagina. Using plastic products in a sensitive area for hours can deteriorate the vaginal health and can cause itchiness, rashes, which leads to mild infections. The only way to get rid of it is to switch on to the sustainable natural products which are beneficial for women as well as the environment. They are reusable and generate less waste and it also takes less time to decompose. Here are some sustainable menstrual products: -

● **Menstrual Cup: -** It is a reusable menstrual product that can be used for 5 -10 years. It is made up of medical grade silicon. It is a new concept in the development of menstrual products, especially for the rural menstruating
population, which cannot afford purchasing sanitary napkins monthly. Menstrual cups are not only an affordable solution but also good for the environment and are more sustainable.

● **Reusable cloth pads: -** Cloth sanitary napkins are reusable. It can be washed and used for up to 2 years. Earlier women used to use clothes. This could be relevant today also if used in a hygienic manner and would be an eco-friendly and sustainable method, it can be proven to be a better alternative to disposable sanitary pads from an environmental standpoint.

● **Biodegradable Sanitary Pads: -** These pads are ecofriendly and can be easily degraded in 6-12 months in comparison to the disposable sanitary napkin, which takes years to decompose. This sanitary napkin is the best replacement of synthetic sanitary pads and comfortable for those who use sanitary pads, for example pads like Nua, Carmesi, etc.

● **Menstrual Underwear: -** It is also known as period panties, it is like normal woman underwear, but has an absorbent core, which can be washed and reused for 2 years. Menstrual underwear has multiple layers of microfiber polyester, which absorbs the menstrual blood. It also has a microbial layer made to avoid odour; the outermost layer is usually nylon or lyra, it is easy to use effectively and a great alternative to biodegradable products.

TYPES OF MENSTRUAL PRODUCTS AND THEIR SUSTAINABILITY CHARACTERISTICS

Menstrual Products	Average Usage Duration	Approximate Annual Cost (INR)	Biodegradability	Environmental Impact
Disposable sanitary pads	Single use (4-6 hrs)	1,200-3,000	Low	High waste generation.
Tampons	Single use (4-8 hrs)	1,500-3,500	Low to moderate	Moderate to high waste.
Menstrual Cup	5-10 years	500-2,000	Moderate	Very low waste.
Reusable cloth pads	2-5 years	500-1,500	High	Low waste.
Traditional cloth	Single use	Minimal	High	Environmentally sustainable if hygienically managed.

Source: - Mrs.Kumari Mamta, Dr. Sharma Kumar Umesh (2026), Menstrual Hygiene Management and Waste Disposal Practices: A Narrative Review.

Percentage of Women Age 15-19 and Types of Protection Used During Their Menstrual Period in India

Types of protection during menstrual period	NFHS-4	NFHS-5
Cloths	62.5	49.3
Locally prepared napkins	16.6	15.2
Sanitary napkins	42.2	64.5
Tampons	2.4	1.7
Menstrual Cup	-	0.3
Any hygienic method	58.3	78.0
Nothing	0.4	0.2

Source: - NFHS-4 and NFHS-5 DATA

Menstruation is not only related to women's health but also to women's dignity, gender equality, education and basic Human Rights. Lack of availability of menstrual products, disposable facilities, clean toilets and water leads to eroded women's wisdom, joy and freedom. Women have all the rights to manage their menstruation without shame and safely. Menstruation also affects girls from achieving education. Many adolescent girls miss or dropout their school because of inadequate facilities, dirty toilets, low access to menstrual products, social stigma and restrictions. Schools and management should take care of sanitation, proper toilets should be there, menstrual production should be made available in the school and most important menstruation related education should be provided in this school so that girls may feel comfortable to increase attendance and achieve education.

Menstruation discomfort and inadequate facilities at the workplace reduces the women's participation in economic growth and limits their participation in the labour force. Providing all the facilities and easy access to menstrual products result in a comfortable environment which will eventually increase productivity and more economic growth. In India menstruation is considered as a social taboo which affects the psychology and emotional well-being of a woman. They had to face embarrassment, fear, low self-esteem, and inequality. By enabling women and girls to fully engage in all aspects of life, ensuring safe menstrual hygiene management combats discriminatory practices and advances gender equality. Menstrual hygiene management supports achievement of **Sustainable Development Goals (SDGs)** like

SDG 3 (Good Health and Well-being) maintaining menstrual hygiene and education leads to good health.

SDG 4 (Quality Education) availability of menstrual products and sanitation so that girls can attend school promoting quality education.

SDG 5 (Gender Equality) by minimising discrimination, social stigma and challenges faced by women during menstruation.

SDG 6 (Clean Water and Sanitation) aligns with availability of clean water, Menstrual Hygiene Management (MHM) and sanitation facilities.

SDG 8 (Decent Work and Economic Growth) good menstrual health and availability of hygiene facilities in the workplace increases participation in economic growth.

SDG 10 (Reduce Inequality) by eroding discrimination and restrictions that had to be faced by women.

SUSTAINABLE MENSTRUATION AND SUSTAINABLE DEVELOPMENT GOALS (SDG)

SUSTAINABLE DEVELOPMENT GOALS	GOALS	RELATIONSHIP WITH SUSTAINABLE DEVELOPMENT

SDG-3	Good Health and Well-being	Using eco-friendly menstrual products decreases the chances of infections and rashes.
SDG-4	Quality Education	Lack of sanitation and access to menstrual products leads to school dropout, reducing absentees among girls.
SDG-5	Gender Equality	Awareness about sustainable menstruation increases dignity and empowerment.
SDG-6	Clean Water and Sanitation	Improves menstrual hygiene management.
SDG-8	Decent Work and Economic Growth	MHM results in the increase of women participation at the workplace.
SDG-10	Reduce Inequality	Awareness about menstruation will reduce taboos, social stigma and restrictions imposed on women.
SDG-12	Responsible Consumption and Production	Encourage us to use eco-friendly and reusable products.
SDG-13	Climate Action	Reduces non-biodegradable waste.

Source: Splash India Menstrual Health Literature Review, 2020

Therefore, in India Menstrual Hygiene Management is very crucial for inclusive and sustainable development. Using eco-friendly biodegradable menstrual products will consciously lead to less menstrual waste and will cause less harm to the environment as well as human beings. Long term sustainability, efficient waste management and environmental protection are all aided by adopting

environment friendly menstruation practices and making sure that the right disposal techniques are used.

GOVERNMENTAL AND NON-GOVERNMENTAL SCHEMES

- Menstrual Hygiene Scheme (MHS) under National Health Mission central government distributes subsidised sanitary napkins at Rs 6 for a pack of 6 pads. Aims is to ensure safe and ecofriendly disposal.

  The Ministry of Health and Family Welfare has implemented the scheme for promotion of menstrual hygiene among adolescent girls at the age of 10-19 years since 2011. This scheme is supported by the National Health Mission through the State Program Implementation Plan PIP route, based on a proposal received from the state/UTs the major objectives of the scheme are to educate adolescent girls on menstrual hygiene to increase the excess of using high quality sanitary napkins by adolescent girls and to ensure safe disposal of sanitary napkins in an environmentally friendly manner.
- Government Sanitary Napkin Schemes: - The sanitary napkin scheme was launched by the Government of India, in 2018 to provide free and subsidized sanitary napkins to two women from vehicle economic backgrounds. This scheme was implemented by the Ministry of Health and Family Welfare and aims to reach the target of 10 million women by 2023.
- Jan Aushadhi Suvidha Sanitary Napkins: - Through this scheme, the government provides sanitary napkins rate by its network of joint asuddin aushadhi stores here Life Care apply public sector undertaking manufactures and are present at subsidious price of rupees by using natural materials such as bamboo fibre and cornstarch, these napkins are available at Jan Aushadhi stores and online platforms.

According to NFHS 5 it is stated that the percentage of women aged 15 to 24 years use hygienic methods during their menstrual cycle has increased from 58.3% in NFHS 4 to 78.0% in NFHS 5.

The Ministry of Drinking Water and Sanitation under Swachh Bharat Abhiyan has created National Guidelines on Menstrual Hygiene Management (MHM) to raise awareness of MHM in rural regions as part of its overall interventions linked to behaviour change on the issue of sanitation and hygiene.

Every state has its scheme for distributing sanitary napkins like: -

Rajasthan - Udaan

Maharashtra - Asmita Yojana

Andhra Pradesh - Swechcha

Kerala - She Pad

Odisha - Khushi

Kerala and Karnataka have been distributing menstrual cups as a sustainable alternative to sanitary napkins.

There are many **NGOs**, which helps in spreading awareness related to menstruation.

● **Pragati NGO: -** Help to empower rural and underprivileged women and educate them about menstrual hygiene and distribute sanitary pads.

● **Goonj: -** Started in 1999 works on issues like menstruation education and health. They work with rural women, slums communities to tackle stigma related to menstruation. They work in many regions of India. They produce and distribute cloth pads **'My Pads'.**

● **Ammada Trust: -** Started by Ashok Kurien and Ammada. They conduct a campaign named # Give Her 5 to help rural girls so that they don't miss their school. They raise funds to provide napkins to girls which are reusable pads with 12 hrs of protection.

● **Myna Mahila Foundation: -** They work on the root cause of menstrual hygiene management. They educate women about menstruation and distribute sanitary pads which are cheaper in price to the **Govandi slum dweller communities**. They also produce low cost, high quality sanitary pads, which is more affordable than which is available in the market. They go to every doorstep to give paths to those women who cannot go outside or buy pads for a variety of reasons.

CONCLUSION

In conclusion, menstruation is not just a women's problem but also an environmental concern, as synthetic menstrual products contain plastic and harmful chemicals, which degrade the environment in several ways and take hundreds of years to decompose. That's why it becomes mandatory to switch to sustainable menstrual products which are biodegradable made up of organic substances and take only a few months to decompose. So, it becomes necessary to educate and raise the awareness among girls and women about the benefits of sustainable menstrual products like menstrual cups, menstrual cloth pads, period panties, etc. moreover encourage them to use as they are reusable and sustainable. Less cost and easy availability of sustainable menstrual products will allow more women to use these products as it reduces health-related issues. Menstrual hygiene management is very crucial as proper disposal facilities, sanitation, clean water and clean toilets enable women to manage their menstruation safely and confidently. It encourages women to educate and work contributing to the economic growth of the country. The Government and NGO have also launched various schemes for the awareness regarding menstrual products, their hygiene management and ensure safe disposal. Many states and UTs launch their own Schemes related to menstruation. It is essential to educate women about sustainable alternatives and encourage them to make conscious choices that reduce environmental degradation.

REFERENCES: -

1. Ministry of Women and Child Development Scheme for Promotion of Menstrual Hygiene (2020), by PIB Delhi.
2. National Family Health Survey (NFHS-5), 2019-21 Ministry of Health & Family Welfare Government of India.
3. Menstrual products and sustainable alternatives report (2021), Life cycle Initiative hosted by UN environment programme.

4. Menstruation: Environmental Impact and need for global health equity (2022), EDITORIAL GYNECOLOGY OBSTETRICS WILEY.
5. Pednekar Sulochana, Some Shreya, Thakore Renuka (2022), Enabling factors for sustainable menstrual hygiene management practices: A rapid review.
6. Aujla Mandip, Logie H Carmen, Hardon Anita, Narasimhan Manjulaa (2024), Environmental Impact of menstrual hygiene products.
7. Garg Gaurav (2024), Biodegradable Sanitary Napkin Policy India-B2B Guide 2026.
8. Menstrual Hygiene: Your Guide to Sustainable, Zero Waste Periods (2025).
9. Importance of Menstrual Health and Hygiene in Women's Wellness (2025).
10. List of NGOs Working on Menstrual Hygiene in India (2025), VISION.
11. Mrs.Kumari Mamta, Dr. Sharma Kumar Umesh (2026), Menstrual Hygiene Management and Waste Disposal Practices: A Narrative Review.
12. Menstrual Hygiene: Training Module for ASHA.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया का प्रभाव: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

प्रवेश कुमार सिंह,
शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग,महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।
डॉ जितेन्द्र कुमार सिंह,
शोध निर्देशक/सहायक प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, लालता सिंह राजकीय,महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अदलहाट, मिर्जापुर।

सार –
वर्तमान समय के इस डिजिटल युग में सोशल मीडिया हमारे दैनिक जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। जिसके माध्यम से हम सूचनाओं का आदान प्रदान करते हैं, साथ ही साथ इसके कारण मनोरंजन शिक्षा और सामाजिक संपर्क भी सरल हुआ है किंतु हर सिक्के के दो पहलू होते हैं और सोशल मीडिया का एक नकारात्मक पक्ष यह है कि इसका अत्यधिक इस्तेमाल हमारे मानसिक स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य बदलते परिदृश्य में युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया के प्रभाव का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना है, सोशल मीडिया वर्तमान समय में सामाजिक सहभागिता एवं सूचनाओं के आदान-प्रदान का एक महत्वपूर्ण जरिया बन चुका है। बढ़ती इंटरनेट एवं स्मार्टफोन की सुविधा ने युवाओं के वर्तमान जीवन में व्यापक प्रभाव डालें है, सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्म जैसे व्हाट्सएप फेसबुक यूट्यूब तथा इंस्टाग्राम ने युवाओं को दुनिया भर के जानकारी से जुड़ने का एक आसान और सस्ता माध्यम उपलब्ध कराया जो विभिन्न प्रकार के ज्ञान प्राप्त करने शैक्षणिक सामग्री को प्राप्त करने तथा सामाजिक एवं राजनीतिक मुद्दों पर अपने विचारों के आदान-प्रदान करने का एक आभासी मंच प्रदान किया। अध्ययन में चंदौली जनपद के विभिन्न महाविद्यालय में अध्ययन करने वाले 310 युवाओं को सैंपलिंग के रूप में चुना गया यह अध्ययन वर्णनात्मक एवं विश्लेषणत्मक शोध पद्धति पर आधारित हैं, तथा प्राथमिक आंकड़ों के संग्रह हेतु साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है।
वर्तमान अध्ययन के निष्कर्ष से यह ज्ञात होता है कि सोशल मीडिया समाज के सभी वर्गों खासकर युवाओं के लिए विभिन्न सूचनाओं शिक्षा तथा सामाजिक संपर्क का एक प्रभावशाली माध्यम के रूप में उभर रहा है, जहां युवाओं के लिए विभिन्न प्रकार की मनोरंजन सामग्री, शैक्षणिक सामग्री, सूचना तथा एक दूसरे से सामाजिक संपर्क स्थापित करने का जरिया बना। परंतु सोशल मीडिया का अत्यधिक इस्तेमाल इसके सकारात्मक प्रभाव की तुलना में युवाओं मैं मानसिक तनाव, समय की बर्बादी, नींद संबंधी समस्याएं एवं आमने-सामने के संवाद में कमी का एक महत्वपूर्ण कारक बनता दिख रहा है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है की सोशल मीडिया जितना युवाओं के लिए सकारात्मक है उतना ही नकारात्मक, इसका प्रभाव इसके इस्तेमाल और उपयोग करने के उद्देश्य और तरीकों पर निर्भर करता है, अतः युवाओं में सोशल मीडिया इस्तेमाल को लेकर एक संतुलित व्यवहार अपने के साथ-साथ उनके अंदर इसके प्रति जागरूकता को बढ़ावा देना अत्यंत आवश्यक है

मुख्य शब्द : सोशल मीडिया, मानसिक स्वास्थ्य, युवा, तनाव, चिंता, डिजिटल समाज, साइबर जागरूकता

परिचय - इक्कीसवीं शताब्दी सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का युग हैं, जिसने मानव जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित किया है। इंटरनेट तथा स्मार्टफोन के बढ़ते प्रसार ने सोशल मीडिया को युवाओं के जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बना दिया है। फ़ेसबुक,

इंस्टाग्राम व्हाट्सएप यूट्यूब तथा एक्स जैसे प्लेटफ़ॉर्म आज केवल सूचना के साधन नहीं रह गए हैं, बल्कि शिक्षा, मनोरंजन, रोजगार, सामाजिक सहभागिता तथा व्यक्तिगत अभिव्यक्ति के महत्वपूर्ण माध्यम बन चुके हैं।

वर्तमान समय में भारत दुनिया के सबसे बड़े इंटरनेट उपभोक्ताओं वाले देशों में से एक है। विशेष रूप से युवा, सोशल मीडिया का सर्वाधिक उपयोग करने वाला वर्ग है। वे अध्ययन सामग्री प्राप्त करने, मित्रों से संवाद स्थापित करने, समाचार प्राप्त करने तथा मनोरंजन के लिए प्रतिदिन 3 से 5 घंटे या उससे भी अधिक सोशल मीडिया पर व्यतीत कर रहा हैं। जहां डिजिटल तकनीक ने युवाओं के लिए विविध प्रकार के क्षेत्रों में अवसर उत्पन्न किए , वहीं इसके ज्यादा और अनियंत्रित उपयोग ने युवाओं के लिए मानसिक स्वास्थ्य संबंधी अनेक चुनौतियाँ भी सामने आई हैं।

मानसिक स्वास्थ्य विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) के अनुसार केवल मानसिक रोगों की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि ऐसी अवस्था है जिसमें व्यक्ति अपनी क्षमताओं को पहचानते हुए जीवन की सामान्य चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना कर सके, उत्पादक रूप से कार्य कर सके तथा समाज में सकारात्मक योगदान दे सके। यदि कोई व्यक्ति अत्यधिक तनाव, चिंता, अवसाद, अनिद्रा अथवा भावनात्मक असंतुलन का अनुभव करता है, तो उसका मानसिक स्वास्थ्य प्रभावित माना जाता है।

सोशल मीडिया का लगातार इस्तेमाल युवाओं की रोजमर्रा की सामान्य जिंदगी, उसकी नींद, अध्ययन के तरीके, सामाजिक संबंध तथा भावनात्मक संतुलन को प्रभावित कर दिया है। देर रात तक सोशल मीडिया का उपयोग, नोटिफिकेशन की तरफ लगातार आकर्षित होना, दूसरों से स्वयं की तुलना करना एवं साइबर बुलिंग जैसी गतिविधिया मानसिक तनाव को बढ़ा सकती हैं। दूसरी ओर, सोशल मीडिया के माध्यम से मानसिक स्वास्थ्य संबंधी जानकारी, प्रेरणादायक सामग्री तथा सामाजिक समर्थन भी प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए सोशल मीडिया का प्रभाव मिलाजुला एवं बहुआयामी है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो सोशल मीडिया ने युवाओं के सामाजिक संबंधों को लेकर विचार, बातचीत के तरीके , सामाजिक मूल्यों तथा व्यवहार के तरीकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे जा सकते हैं। सोशल मीडिया ने सामाजिक अंतःक्रिया के नए प्रतिमान विकसित किए हैं, जिनका मानसिक स्वास्थ्य पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अतः सोशल मीडिया और मानसिक स्वास्थ्य के मध्य संबंध का अध्ययन समाजशास्त्र के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण विषय बन गया है।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य महाविद्यालय मे अध्ययन करने वाले युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया के प्रभाव का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करना तथा यह समझना है कि सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग युवाओं में मानसिक तनाव, चिंता, अनिद्रा, मानसिक थकान तथा एकाग्रता जैसे पहलुओं को किस प्रकार प्रभावित करता है। यह अध्ययन डिजिटल युग में स्वस्थ एवं संतुलित सोशल मीडिया उपयोग के लिए उपयोगी सुझाव भी प्रस्तुत करता है।

साहित्य समीक्षा (Review of Literature)

सोशल मीडिया और मानसिक स्वास्थ्य पर विश्व तथा भारत में अनेक शोध किए गए हैं। इन अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ते हैं।

Twenge (2020) ने अमेरिकी किशोरों पर किए गए अध्ययन में पाया कि सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग करने वाले युवाओं में अवसाद, अकेलापन तथा आत्मसम्मान में कमी की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक थी। अध्ययन में यह भी स्पष्ट किया गया कि प्रतिदिन तीन घंटे से अधिक सोशल मीडिया उपयोग मानसिक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं की संभावना को बढ़ा सकता है।

Keles, McCrae एवं Grealish (2020) ने विभिन्न अध्ययनों की समीक्षा करते हुए निष्कर्ष निकाला कि सोशल मीडिया उपयोग और चिंता, अवसाद तथा मनोवैज्ञानिक तनाव के मध्य सकारात्मक संबंध पाया जाता है। उन्होंने सुझाव दिया कि संतुलित उपयोग तथा डिजिटल अनुशासन मानसिक स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।

Orben एवं Przybylski (2021) ने यह तर्क दिया कि सोशल मीडिया का प्रभाव सभी युवाओं पर समान नहीं होता। व्यक्तिगत परिस्थितियाँ, पारिवारिक वातावरण, उपयोग का उद्देश्य तथा उपयोग की अवधि जैसे कारक इसके प्रभाव को प्रभावित करते हैं। इसलिए सोशल मीडिया के प्रभाव का अध्ययन बहुआयामी दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए।

WHO (2022) ने युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य को वैश्विक सार्वजनिक स्वास्थ्य की प्रमुख चुनौती बताया तथा डिजिटल वातावरण में स्वस्थ व्यवहार विकसित करने पर बल दिया। रिपोर्ट के अनुसार डिजिटल तकनीकों का उपयोग लाभकारी हो सकता है, यदि उनका उपयोग संतुलित और उद्देश्यपूर्ण ढंग से किया जाए।

Kumar एवं Singh (2023) ने उत्तर भारत के महाविद्यालयी विद्यार्थियों पर किए गए अध्ययन में पाया कि देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग करने वाले विद्यार्थियों में नींद की समस्या, अध्ययन में एकाग्रता की कमी तथा मानसिक थकान अधिक पाई गई। शोधकर्ताओं ने समय-सीमा निर्धारित कर सोशल मीडिया उपयोग करने की सलाह दी।

UNESCO (2023) ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि डिजिटल शिक्षा के विस्तार में सोशल मीडिया की उपयोगिता बढ़ी है, किंतु इसके अनियंत्रित उपयोग से विद्यार्थियों का ध्यान अध्ययन से भटकने तथा मानसिक दबाव बढ़ने की संभावना भी रहती है।

भारत में हाल के वर्षों में हुए कई समाजशास्त्रीय अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि ग्रामीण एवं शहरी युवाओं के सोशल मीडिया उपयोग के स्वरूप में अंतर है। शहरी क्षेत्रों में मनोरंजन एवं नेटवर्किंग प्रमुख उद्देश्य हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा तथा रोजगार संबंधी जानकारी प्राप्त करना भी एक महत्वपूर्ण उद्देश्य बन गया है।

उपरोक्त साहित्य से स्पष्ट है कि सोशल मीडिया के प्रभाव एकरूपता नहीं हैं। इसका प्रभाव उपयोग की अवधि, उद्देश्य, सामाजिक परिवेश, लिंग, आयु तथा डिजिटल साक्षरता जैसे कारकों पर निर्भर करता है। इसलिए स्थानीय स्तर पर समाजशास्त्रीय अध्ययन की आवश्यकता बनी रहती है।

उपलब्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि अधिकांश अध्ययन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित हैं जबकि समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से पूर्वी उत्तर प्रदेश विशेषकर चंदौली जनपद के महाविद्यालयी युवाओं पर अध्ययन अत्यंत सीमित हैं। इसी शोध-अंतर को ध्यान में रखते हुए वर्तमान अध्ययन किया गया।

शोध पद्धति-

प्रस्तुत अध्ययन महाविद्यालयी युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य पर सोशल मीडिया के प्रभाव का समाजशास्त्रीय विश्लेषण करने के उद्देश्य से किया गया अध्ययन का स्वरूप वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक है।

अध्ययन के उद्देश्य-

इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

सोशल मीडिया उपयोग एवं मानसिक स्वास्थ्य के मध्य संबंध का विश्लेषण करना।

सोशल मीडिया उपयोग का तनाव, चिंता एवं अनिद्रा पर प्रभाव ज्ञात करना।

सोशल मीडिया उपयोग का मानसिक थकान एवं एकाग्रता पर प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाएँ-

सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग तनाव एवं चिंता को बढ़ाता है।

देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग करने वाले विद्यार्थियों में अनिद्रा की संभावना अधिक होती है।

सोशल मीडिया के अत्यधिक उपयोग से मानसिक थकान एवं एकाग्रता प्रभावित होती है।

अध्ययन क्षेत्र के रूप में उत्तर प्रदेश के चंदौली जनपद के चयनित महाविद्यालयों को लिया गया है। अध्ययन की समग्र जनसंख्या में महाविद्यालयों में अध्ययनरत युवा विद्यार्थी सम्मिलित हैं। नमूना चयन हेतु उद्देश्यपूर्ण नमूना चयन विधि का प्रयोग किया गया तथा कुल 310 उत्तरदाताओं को अध्ययन में शामिल किया गया। प्राथमिक आंकड़ों का संग्रह साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया, जबकि

द्वितीयक आंकड़ों के लिए पुस्तकों, शोध पत्रों, शोध प्रबंधों एवं संबंधित रिपोर्टों का उपयोग किया गया। प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण के लिए SPSS सॉफ्टवेयर का प्रयोग किया गया। आंकड़ों के विश्लेषण हेतु आवृत्ति वितरण, प्रतिशत विश्लेषण, Cross-tabulation, एवं Chi-square Test (χ^2 परीक्षण) जैसी सांख्यिकीय तकनीकों का उपयोग किया गया। प्राप्त परिणामों को तालिकाओं एवं व्याख्यात्मक विवरण के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए सोशल मीडिया के युवाओं पर पड़ने वाले सामाजिक, शैक्षिक, स्वास्थ्य एवं व्यवहारिक प्रभावों का समाजवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया।

परिणामों का विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण

प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन के अंतर्गत एकत्रित प्राथमिक आंकड़ों का विश्लेषण एवं प्रस्तुतीकरण किया गया है। अध्ययन हेतु चयनित 310 उत्तरदाताओं से प्राप्त सूचनाओं को शोध उद्देश्यों के अनुरूप वर्गीकृत एवं विश्लेषित किया गया है।

तालिका 1

प्रतिदिन सोशल मीडिया उपयोग की अवधि

उपयोग की अवधि	आवृत्ति	प्रतिशत	वैध प्रतिशत	संचयी प्रतिशत
1 घन्टे से कम	47	15.16	15.16	15.16
1 से 3 घन्टे	119	38.39	38.39	53.55
3 से 5 घन्टे	91	29.35	29.35	82.9
5 घन्टे से अधिक	53	17.10	17.10	100
योग	310	100	100	

तालिका संख्या 1 से स्पष्ट होता है कि अधिकांश 38.39 प्रतिशत विद्यार्थी प्रतिदिन 1–3. घंटे सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं। 29.35 प्रतिशत विद्यार्थी प्रतिदिन 3–5 एव 17.10 प्रतिशत 5 घंटे से अधिक समय व्यतीत करते हैं, इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सोशल मीडिया युवाओं की दैनिक दिनचर्या का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है।

तालिका संख्या 2

सोशल मीडिया उपयोग से एकाग्रता, धैर्य एवं भावनात्मक संतुलन पर प्रभाव

एकाग्रता, धैर्य एवं भावनात्मक संतुलन पर प्रभाव	आवृत्ति	प्रतिशत	वैध प्रतिशत	संचयी प्रतिशत
हाँ	196	63.22	63.22	63.22
नहीं	114	36.78	36.78	100
योग	**310**	**100**	**100**	

तालिका संख्या–2 से स्पष्ट होता है कि कुल 310 उत्तरदाताओं में से 196 (63.22%) उत्तरदाताओं ने माना कि सोशल मीडिया का उपयोग उनकी एकाग्रता, धैर्य एवं भावनात्मक संतुलन को प्रभावित करता है, जबकि 114 (36.78%) उत्तरदाताओं ने इससे असहमति व्यक्त की। इससे ज्ञात होता है कि अधिकांश युवा सोशल मीडिया के अत्यधिक अथवा बार-बार उपयोग को अपने मानसिक व्यवहार एवं भावनात्मक स्थिति में परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण कारण मानते हैं। उत्तरदाताओं के अनुसार सोशल मीडिया पर अधिक समय व्यतीत

करने से ध्यान केंद्रित करने की क्षमता में कमी, अधीरता तथा भावनात्मक उतार-चढ़ाव जैसी समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। यह निष्कर्ष संकेत करता है कि सोशल मीडिया का अनियंत्रित उपयोग युवाओं के मनोवैज्ञानिक एवं व्यवहारिक पक्षों को प्रभावित कर सकता है।

सारणी संख्या-3

सोशल मीडिया के कारण देर रात तक जागने की स्थिति

देर रात तक जागने की स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत	वैध प्रतिशत	संचयी प्रतिशत
हमेशा	102	32.90	32.90	32.90
कभी-कभी	156	50.32	50.32	83.22
कभी नहीं	52	16.78	16.78	**100**
योग	**310**	**100**	**100**	

सारणीसंख्या -3 से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 50.32 प्रतिशत उत्तरदाता सोशल मीडिया के कारण कभी-कभी देर रात तक जागते हैं। जबकि 32.90% उत्तरदाता हमेशा ऐसा करते हैं। वहीं 16.78% उत्तरदाता ऐसे हैं जो सोशल मीडिया का उपयोग देर रात तक नहीं करते। अध्ययन से स्पष्ट है कि सोशल मीडिया के कारण युवाओं में देर रात तक जागने की आदत बढ़ती जा रही है, सोशल मीडिया युवाओं की नींद एवं स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। देर रात तक मोबाइल एवं इंटरनेट का उपयोग मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है।

सारणी संख्या-4

सोशल मीडिया उपयोग के कारण तनाव एवं चिंता एवं अनिद्रा की स्थिति

तनाव, चिंता एवं अनिद्रा की स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत	वैध प्रतिशत	संचयी प्रतिशत
हाँ	214	69.03	69.03	69.03
नहीं	96	30.97	30.97	**100**
योग	**310**	**100**	**100**	

तालिका संख्या–4 से स्पष्ट होता है कि कुल 310 उत्तरदाताओं में से लगभग 69.03 प्रतिशत विद्यार्थियों ने माना कि सोशल मीडिया उपयोग के कारण उन्हें तनाव या चिंता का अनुभव होता है। जबकि 30.97 प्रतिशत विद्यार्थियों को एस अनुभव नहीं हो रहा है। यह परिणाम दर्शाता है कि अत्यधिक डिजिटल संलग्नता मानसिक दबाव चिंता एवं अनिद्रा की स्थिति उत्पन्न कर सकती है।

सारणी संख्या- 4.1

देर रात तक जागना एवं तनाव, चिंता एवं अनिद्रा की स्थिति (3 / 4)

देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग	तनाव, चिंता एवं अनिद्रा (हाँ)		तनाव, चिंता एवं अनिद्रा (नहीं)		योग	
	आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत	आवृति	प्रतिशत
हमेशा	91	89.22	11	10.78	102	100
कभी-कभी	103	66.03	53	33.97	156	100
कभी नहीं	20	38.46	32	61.54	52	100
योग	**214**	**69.03**	**96**	**30.97**	**310**	**100**

χ^2=42.18, df =2 , p-value< 0.05(5.991)

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग करने एवं तनाव, चिंता तथा अनिद्रा जैसी समस्याओं के बीच महत्वपूर्ण संबंध पाया गया है। कुल 310 उत्तरदाताओं में से 214 (69.03%) उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया कि सोशल मीडिया उपयोग के कारण उन्हें तनाव, चिंता एवं अनिद्रा की समस्या होती है, जबकि 96 (30.97%) उत्तरदाताओं ने इससे असहमति व्यक्त की। सारणी के अनुसार जो उत्तरदाता हमेशा देर रात तक सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं, उनमें 91 (89.22%) उत्तरदाताओं ने तनाव, चिंता एवं अनिद्रा की समस्या स्वीकार की। वहीं 156 उत्तरदाताओं में से 103 (66.03%) उत्तरदाताओं ने बताया कि कभी-कभी देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग करने पर भी उन्हें ऐसी समस्याएँ महसूस होती हैं। इसके विपरीत जो उत्तरदाता कभी देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग नहीं करते, उनमें केवल 20 (38.46%) उत्तरदाताओं ने तनाव एवं अनिद्रा की समस्या बताई, जबकि 32 (61.54%) उत्तरदाताओं ने किसी प्रकार की समस्या से इनकार किया।

काई-स्क्वायर परीक्षण में प्राप्त $\chi^2 = 42.18$ तथा p-value < 0.05 यह दर्शाता है कि दोनों चरों के बीच संबंध सांख्यिकीय रूप से सार्थक है। अतः यह उपकल्पना सिद्ध होती है कि देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है तथा तनाव, चिंता एवं अनिद्रा जैसी समस्याओं को बढ़ाता है। अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि अत्यधिक सोशल मीडिया उपयोग युवाओं की दिनचर्या एवं नींद की गुणवत्ता को प्रभावित कर रहा है, जिसके कारण मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता।

उपरोक्त परिणामों से यह संकेत मिलता है कि सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग युवाओं की नींद, मानसिक शांति, एकाग्रता तथा भावनात्मक संतुलन को प्रभावित कर सकता है। देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग करने वाले विद्यार्थियों में तनाव, चिंता तथा मानसिक थकान की प्रवृत्ति अधिक दिखाई देती है। दूसरी ओर, सीमित एवं उद्देश्यपूर्ण उपयोग करने वाले विद्यार्थियों ने अपेक्षाकृत कम नकारात्मक प्रभाव अनुभव किए। इसलिए यह कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया स्वयं समस्या नहीं है, बल्कि उसका अत्यधिक एवं असंतुलित उपयोग मानसिक स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों को बढ़ा सकता है।

निष्कर्ष एवं सुझाव -

प्रस्तुत अध्ययन के परिणामों से यह स्पष्ट होता है कि सोशल मीडिया वर्तमान डिजिटल युग में युवाओं के जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है। सोशल मीडिया ने युवाओं को शिक्षा, सूचना प्राप्ति, सामाजिक संपर्क एवं विचारों के आदान-प्रदान के लिए अनेक अवसर

प्रदान किए हैं। इसके माध्यम से विद्यार्थी शैक्षिक सामग्री प्राप्त करने, नवीन जानकारियों से जुड़ने तथा सामाजिक एवं समसामयिक मुद्दों के प्रति जागरूक होने में सक्षम हुए हैं।

अध्ययन से ज्ञात हुआ कि अधिकांश विद्यार्थी प्रतिदिन एक से तीन घंटे या उससे अधिक समय सोशल मीडिया के उपयोग में व्यतीत करते हैं। सोशल मीडिया का अत्यधिक एवं अनियंत्रित उपयोग करने वाले विद्यार्थियों में तनाव, चिंता, मानसिक थकान, नींद संबंधी समस्याएँ तथा अध्ययन में एकाग्रता की कमी जैसी समस्याएँ अपेक्षाकृत अधिक पाई गईं। विशेष रूप से देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग करने वाले विद्यार्थियों ने अनिद्रा एवं अगले दिन मानसिक थकावट का अनुभव अधिक व्यक्त किया।

अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सोशल मीडिया अपने आप में न तो पूर्ण रूप से लाभकारी है और न ही हानिकारक, बल्कि इसका प्रभाव उपयोग के तरीके एवं उद्देश्य पर निर्भर करता है। इसलिए युवाओं को सोशल मीडिया का संतुलित, जिम्मेदार एवं उद्देश्यपूर्ण उपयोग करना चाहिए। इसके लिए विद्यार्थियों को सोशल मीडिया उपयोग की समय-सीमा निर्धारित करनी चाहिए तथा शिक्षा एवं कौशल विकास जैसे सकारात्मक उद्देश्यों के लिए इसका अधिक प्रयोग करना चाहिए। महाविद्यालयों में डिजिटल वेल-बीइंग, साइबर सुरक्षा एवं मानसिक स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए। अभिभावकों एवं शिक्षकों को युवाओं के ऑनलाइन व्यवहार के प्रति सकारात्मक मार्गदर्शन प्रदान करना चाहिए। देर रात तक सोशल मीडिया उपयोग की प्रवृत्ति को नियंत्रित करने के लिए डिजिटल अनुशासन एवं समय प्रबंधन को बढ़ावा देना आवश्यक है। साथ ही, मानसिक तनाव या चिंता का अनुभव करने वाले विद्यार्थियों के लिए परामर्श सेवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित की जानी चाहिए। इस प्रकार संतुलित एवं जागरूक सोशल मीडिया उपयोग के माध्यम से इसके सकारात्मक प्रभावों को बढ़ाया जा सकता है तथा नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है।

संदर्भ सूची-

1. Greenfield, P. M. (2014). *Mind and media: The effects of digital technology on cognitive development and social behavior*. Journal of Applied Developmental Psychology, 35(2), 123–131.
2. Jenkins, H. (2024). *Convergence culture: Where old and new media collide*. New York: New York University Press.
3. Kumar, A. (2020). *Social media and youth behavior: A sociological analysis*. International Journal of Social Science Research, 8(2), 45–58.
4. Twenge, J. M. (2024). *Generations: The real differences between Gen Z, millennials, Gen X, boomers, and silent—and what they mean for America's future*. New York: Atria Books.
5. Van Dijck, J. (2013). *The culture of connectivity: A critical history of social media*. Oxford: Oxford University Press.
6. Zuboff, S. (2020). *The age of surveillance capitalism: The fight for a human future at the new frontier of power*. New York: Public Affairs.
7. Internet and Mobile Association of India (IAMAI). (2024). *Internet in India Report 2024*. New Delhi: IAMAI.
8. Telecom Regulatory Authority of India (TRAI). (2025). *The Indian Telecom Services Performance Indicators Report*. New Delhi: Telecom Regulatory Authority of India.

9. Annual Status of Education Report (ASER). (2024). *ASER 2024: Annual Status of Education Report*. New Delhi: Pratham Education Foundation.
10. Pew Research Center. (2024). *Social media use and its impact on young adults*. Washington, DC: Pew Research Center.
11. Boyd, D. (2014). *It's complicated: The social lives of networked teens*. New Haven: Yale University Press.
12. Castells, M. (2010). *The rise of the network society: The information age: Economy, society, and culture (Vol. 1)*. Oxford: Wiley-Blackwell.
13. Turkle, S. (2017). *Reclaiming conversation: The power of talk in a digital age*. New York: Penguin Press.
14. Livingstone, S. (2014). Developing social media literacy: How children learn to interpret risky opportunities online. In *Digital Literacies: Concepts, Policies and Practices*. New York: Peter Lang.
15. World Health Organization (WHO). (2022). *Mental health and digital technologies: Understanding the impact of digital media use*. Geneva: World Health Organization.

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

सोशल मीडिया सर्विलांस:एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

कमला यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर- समाजशास्त्र विभाग
राजकीय महिला महाविद्यालय सलेमपुर देवरिया
प्रोफेसर आलोक कुमार कश्यप
समाजशास्त्र विभाग, महाराज बलवंत सिंह पी जी कॉलेज
गंगापुर वाराणसी

सारांश

अभिव्यक्त की आजादी के एक आकर्षक माध्यम के रूप सोशल मीडिया द्वारा उपभोक्ता के रूप में आम लोगों के निजी जीवन की निगरानी अर्थात् लोगो के निजी जीवन से जुड़ी "सूचनाओं का संग्रह" सोशल मीडिया द्वारा प्रदत्त अभिव्यक्ति की आजादी की भारी भरकम कीमत है। जिससे लोगों की सुरक्षा को खतरा पैदा हो रहा है। जहा एक तरफ सोशल मीडिया सर्विलांस के माध्यम से निजी जीवन की सूचनाओं को राजनीति और बाजार में बेचा जा रहा है वही दूसरी तरफ राज्य द्वारा सोशल मीडिया का इस्तेमाल अपने विरोधियों और आलोचकों की निगरानी करने , उनकी पहचान करने,उनको डराने और उनकी आवाज को दबाने के लिए किया जा रहा है। प्रस्तुत शोधपत्र में राज्य द्वारा खासकर सोवियत रूस, मिस्र चीन सीरिया और सयुक्त राज्य अमेरिका मे सरकार और निजी क्षेत्र की कंपनियों द्वारा लोगों की निगरानी (सर्विलांस) मे सोशल मीडिया की भूमिका का अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द: सोशल मीडिया, सर्विलांस,लोकतंत्र, शरणगाह, विशेषीकरण

प्रस्तावना

तकनीकी एक स्तर के बाद लोकतंत्र के रास्ते मे खड़ी हो जाती है,वही तकनीकी जिसे लोकतंत्र विकसित होने का मौका देता है। लोकतंत्र में बागी या विद्रोही का होना जरूरी है किसी भी समय में प्रचलित विचार और धारणा के खिलाफ सोचने और बोलने वाले लोगों को बागी या विद्रोही कहा जाता है। विद्रोही के लिये शरणगाह का होना जरूरी है । लोकतंत्र में अनेक तरह की शरणगाह होती है , निजता का अधिकार ,अभिव्यक्ति की आजादी का अधिकार लोकतंत्र मे शरणगाह के उदाहरण हैं। वस्तुतः 21वी सदी मे तकनीकी इन्ही शरणगाहों पर हमले कर रही है । ,विद्रोही विचार ,आने वाले संभावित खतरे से सत्ताधारी को आगाह करते हैं । लोकतंत्र की खूबसूरती है कि लोकतंत्र समाज में मौजूद बागी और विद्रोही की आवाज को सुनता है , यह लोकतंत्र की ताकत है कि वह विद्रोही और बागी को बर्दाश्त करता है , व्यवस्था में सुधार करता है। लेकिन यदि लोकतंत्र मे सत्ताधारी बागी, विद्रोही और अलग विचारों को सुनने के बचाए उन पर निगरानी करके , उनकी पहचान करती है और उनको खत्म करने की कोशिश करती है तो यही से लोकतंत्र को खतरा उत्पन्न होता है, तकनीकी का इतिहास रहा है इसने लोकतंत्र और समुदाय को कुचला है। तकनीकी विशेषीकरण (specialization) पैदा करती है , दुरखींम ने अपनी कृति "डिवीजन ऑफ लेबर इन सोसाइटी" मे कहा था कि विशेषीकरण/श्रम विभाजन फैक्ट्री की दीवारों से बाहर

निकलकर समाज मे प्रशासन ,राजनीति ,न्यायपालिका,कला और विज्ञान सबको प्रभावित करेगा उन्होंने कहा कि जब विशेषीकरण /श्रम विभाजन सामान्य रहता है तब यह एकता और पारस्परिकता पैदा करता है लेकिन जब विशेषीकरण /श्रम विभाजन असामान्य/व्याधिकीय (Abnormal/pathological) हो जाता हैः तो इसका समाज पर विनाशकारी प्रभाव जैसे असमानता ,अन्याय, शक्ति मे असंतुलन और असंतोष पैदा करता है(Shoshana Zuboff(2019,225-26)। जब तकनीकी पर कुछ खास लोगों का नियंत्रण हो जाता है तो वे लोग उसी तकनीकी का इस्तेमाल करके समाज में अन्य लोगों को नियंत्रित करने की कोशिश करते हैं इसके अनेक उदाहरण मौजूद हैं दुरखींम तकनीकी के इसी असामान्य/व्याधिकीय स्वरूप के दुसप्रभाव की बात कर रहे थे जिसे आज हम सोशल मीडिया के रूप मे देख रहें हैं। 2010 के बाद खासकर अरब स्प्रिंग के दौरान जब आम लोगों ने सोशल मीडिया का इस्तेमाल विरोध प्रदर्शन को आयोजित करने मे किया तो जब यह स्पष्ट हो गया कि सोशल मीडिया का इस्तेमाल लोगों को लामबंद करने और सत्ता परिवर्तन के लिए किया जा सकता है। और इससे सबक लेकर कुछ देशों की सरकारो ने सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाए तो कुछ ने उसी सोशल मीडिया का इस्तेमाल अन्दोलनकारियों तथा सरकार के आलोचकों की पहचान करने और उनका दमन करने के लिए किया जिसे सोशल मीडिया सर्विलांस कहा जाता है। उदाहरण के तौर पर मई 2014 मे तुर्की के प्रधान मंत्री ने Gezi Park के सरकार विरोधों प्रदर्शन के कारण ट्वीटर पर प्रतिबंध लगा दिया क्योंकि ट्वीटर प्रदर्शनकारियों मे बहुत लोकप्रिय हो रहा इसके अलावा 2014 सितंबर मे हाँगकाँग मे प्रदर्शन के दौरान चीन की सरकार ने भी इंस्टाग्राम की इमेज साझा करने वाली सेवाओ पर प्रतिबंध लगाया था (Gohdes 2014,2)। लेकिन इससे पहले 2011 मे सीरिया की बसर अल असद की सरकार ने लंबे समय तक मीडिया पर प्रतिबंध लगाने के बाद अपनी रणनीति बदली और अलग रास्ता अपनाया उन्होंने सोशल मीडिया को प्रतिबंधित करने के बजाय फेसबूक और अन्य वेबसाईट को खुले तौर पर लोगों को इस्तेमाल करने की आजादी दी लेकिन के उस पर कड़ी नजर रखा ,लोगों की गतिविधियों की सोशल मीडिया के माध्यम से निगरानी की ,उनकी पहचान की और दमन किया ((Gohdes 2014,3)।

यदि राज्य लोगों को नियंत्रित करने की कोशिश करता है तो इसका अर्थ है वह लोकतंत्र से दूर जा रहा है। 21वीं सदी में अभिव्यक्त की आजादी का दावा करने वाला, लोगों को जोड़ने का दावा करने वाला सोशल मीडिया प्रथम दृष्टया ऐसा करता दिखाई देता है कि यह लोगों को आवाज दे रहा है। लेकिन इसका दूसरा पहलू यह है कि यह लोगों की निजी जीवन की सूचना और उनकी पहचान को एकत्र कर रहा है जिसका इस्तेमाल राज्य लोगों के खिलाफ उनको नियंत्रित करने के लिए करता है और कर रहा है। हावर्ड यूनिवर्सिटी की प्रोफेसर सुशाना जूबोफ़ के मुताबिक यदि आपके पास छुपाने के लिए कुछ भी नहीं है तो इसका अर्थ है आप कुछ नहीं है। अर्थात आपका अस्तित्व ही खतरे में है। स्वतंत्र नागरिक ही लोकतंत्र की बात कर सकता है और लोकतंत्र के बिना स्वस्थ समाज की कल्पना भी नहीं की जा सकती। 21वीं सदी में विरोध प्रदर्शन और आंदोलन में सोशल मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका है यह इसका सकारात्मक पहलू है। लेकिन सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से आंदोलनकारी और विरोधियों के निजी जीवन की सूचनाओं और उनकी पहचान को उजागर करना और राज्य को उपलब्ध कराना या बेच देना यह सिक्के का दूसरा और सबसे खतरनाक पहलू है। दुनिया भर में हो रहे विरोध प्रदर्शनों में अनेक मौके सामने आए हैं जब राज्य ने सोशल मीडिया के माध्यम से आंदोलनकारियों की पहचान करके उनके खिलाफ कठोर कार्रवाई की है। चीन, रूस और सीरिया ,मिस्र और संयुक्त राज्य अमेरिका इसके महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। सोशल मीडिया द्वारा अभिव्यक्ति की आजादी और सर्विलेंस का एक पहलू यह है कि यह अभिव्यक्ति की आजादी को एक मछली के चारे के तौर पर इस्तेमाल कर रहा है ऐसा अधिकांश तकनीकी के विद्वान मानते हैं।

सोशल मीडिया सर्विलांस :सोवियत रूस

चीन रूस ईरान जैसे कुछ गिने-चुने देश हैं जिनका अपना सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म और सर्च इंजन है उनका अपना इंटरनेट है वह अमेरिका और पश्चिमी देशों की सोशल मीडिया और इंटरनेट का इस्तेमाल नहीं करते इस घटना के दो पहलू हैं पहले यह कि अमेरिका और यूरोप द्वारा नियंत्रित और संचालित सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म और सर्च इंजन उनके देश में जासूसी कर सकते हैं ,विद्रोह भड़का सकते हैं, जनमत को प्रभावित कर सकते हैं और राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा पैदा कर सकते हैं। लेकिन इसका एक दूसरा पहलू भी है इन देशों का

मानना है कि यदि हमारा अपना सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म और सर्च इंजन होगा जिस पर हमारा पूरा नियंत्रण होगा तो इसके माध्यम से हम अपने नागरिकों को नियंत्रित कर सकते हैं, और सत्ता के विरोध में किसी भी आवाज की पहचान करके उसे खत्म कर सकते हैं। इसके अलावा इसका इस्तेमाल विदेश में रह रहे अपने देश के नागरिकों पर भी निगरानी के लिए कर सकते हैं। सोवियत रूस मे अपने देश के निजी क्षेत्र द्वारा निर्मित और संचालित सर्च इंजन और सोशल मीडिया वेबसाईट है। VKontakte नामक सोशल मीडिया वेबसाईट जिसकी स्थापना रूसी उद्योगपति Pavel Durov ने 2012 में की थी यह सोशल मीडिया वेबसाईट काफी हद तक फ़ेसबुक के समान है जिसकी रूस मे सर्वाधिक लोकप्रियता थी। यद्यपि उपभोक्ता को इसका इस्तेमाल करने के लिए अपनी वास्तविक पहचान को VKontakte में पंजीकृत करना पड़ता था। लेकिन निजता की सुरक्षा के मामले मे इसका रिकार्ड अच्छा था, इसका कुल मुनाफा 15 मिलियन डालर था, अचानक Pavel Durov द्वारा अपनी कंपनी VKontakte की हिस्सेदारी एक बड़ी दूर संचार कंपनी MegaFon के सीईओ Ivan Tavrin, बेचने को बेचने की खबर आई। बाद मे खुद पावेल दुरोव ने दिसंबर 2013 में खुलासा किया कि रूसी सुरक्षा एजेन्सी FSB ने हमारी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म VKontakte से रूसी सरकार ने यूक्रेन मे तत्कालीन रूसी समर्थक यूक्रेन के राष्टपति Viktor Yanukovych'की सरकार के विरोध मे प्रदर्शन कर रहे Euromaidan groups के आयोजकों के निजी जीवन के आकडे (personal data) को FSB के साथ साझा करने को कहा और मैंने मना कर दिया क्योंकि यूक्रेन के लोगों के निजी डाटा को रूसी अधिकारियों को देना न सिर्फ गैर- कानूनी था बल्कि यूक्रेन के लाखों उपभोक्ताओ के विश्वास के साथ धोखा होता इस लिए मैंने अपना ही बहुत कुछ बलिदान कर दिया मेरे पास कोई संपत्ति नहीं है लेकिन मेरा जमीर हैं (Andrei Soldatov and Irina Borogan 2015 ,297)अर्थात रूसी सरकार के दबाव मे उन्होंने अपनी कंपनी बेच दी। अन्य शब्दों मे रूसी सरकार किसी भी कीमत पर जासूसी करना चाहती थी। यहा स्पष्ट है की रूस सोशल मीडिया के माध्यम से यूक्रेन की राजनीति मे हस्तक्षेप कर रहा था।जहा एक तरफ "यूरोमैदान' के प्रदर्शनकारी सोशल मीडिया का इस्तेमाल विरोध प्रदर्शन को संगठित करने के लिए कर रहे थे जैसा कि यूक्रेन के एक टेलीविजन जर्नलिस्ट 32 वर्षीय Mustafa Nayyem, ने 21, नवंबर 2013, को यूक्रेन के राष्ट्रपति विक्टर यानोकोविच द्वारा यूक्रेन के युरोपियन यूनियन मे शामिल नहीं होने के फैसले के विरोध मे एक फेसबूक पोस्ट लिखा जिसमे उसने कहा की " अब हमे गंभीर हो जाना चाहिए हमे" यूरो मैदान" मे चलकर विरोध प्रदर्शन करना चाहिए" (Soldatov &Borogan 2015 ,278)। यही से यूक्रेन मे सरकार के विरोध मे प्रदर्शन आरंभ हुए और यानुकोविच को देश छोड़कर रूस भागना पड़ा। वहीं रूसी समर्थक यूक्रेनी राष्ट्रपति विक्टर यानुकोविच को रूसी सरकार सोशल मीडिया के माध्यम से हर संभव मदद कर रही थी यह एक स्थापित तथ्य बन चुका है।

सोवियत रूस में व्लादिमीर पुतिन काफी लंबे समय से सत्ता में है ऐसा एक पैटर्न बन चुका है कि जो सत्ता और पुतिन का विरोध करता है वह या तो मार दिया जाता है या रहस्यमय ढंग से उसकी मृत्यु हो जाती है या वह गायब हो जाता है। दूरसंचार से जुड़ी जिन कंपनियों ने सरकार की बात नहीं मानी उनको जबरदस्ती क्रेमलिन समर्थक कंपनी मे मिला लिया गया VKontakte इसका उदाहरण है। क्रेमलिन समर्थक एक ब्लागर Viktor Levanov पुतिन की मौजूदगी मे एक सभा कहा कि अमेरिका इंटरनेट को नियंत्रित करता है गूगल अपना सर्वर यहा रूस में क्यों नहीं बना सकता ,मैं नहीं चाहता की हमारा व्यक्तिगत डाटा अमेरिका जाए, Viktor Levanov ने जब ये बात कह रहे थे तब रूस मे खुद का एक सर्च इंजन Yandex काम कर रहा था , Viktor Levanov ने कहा कि Yandex क्या है एक तरफ यह सर्च इंजन दिखता है दूसरी तरफ यह न्यूज मीडिया दिखता है , यदि यह मीडिया की तरह खबरे देता है तो इसे रूसी कानून के तहत पंजीकृत होना चाहिए इसे जिम्मेदार बनाया जाना चाहिए अन्य अर्थों मे Viktor Levanov एक तरह से Yandex पर सरकारी नियंत्रण यानि उपभोक्ताओ के निजी आकड़ों पर सरकारी नियंत्रण की वकालत कर रहा था (Soldatov & Borogan 2015 ,299)। सोशल मीडिया के माध्यम से आम लोगों की निगरानी सोवियत रूस में बिल्कुल सामान्य बात है उन्होंने सोशल मीडिया पर प्रतिबंध लगाने के बजाय सोशल मीडिया को खुला छोड़ दिया लेकिन उसपर पूरी नजर रखते हैं। परंपरागत तानाशाही सरकारों में समाचार पत्रों पर प्रतिबंध लगाये जाते थे उनके मालिकों ,पत्रकारों को जेल में डाल देते थे लेकिन यह अब बदल चुका है। रूसी सरकार ने 2011 मे सोशल मीडिया वेबसाईट VKontakte के मालिक Pavel Durov से रूस और पूर्वी यूक्रेन के उपभोक्ताओ के बारे मे सूचनाओ

की माग की, सोवियत रुस की सरकार ने VKontakte को न तो प्रतिबंधित किया न ही Durov को जेल मे डाला बल्कि बाद मे रूसी सरकार के दबाव मे सोशल मीडिया कंपनी VKontakte का नियंत्रण durov से हटकर पुतिन समर्थक उद्योगपति Ivan Tavrin के हाथों में चला गया।

सोशल मीडिया का बिल्कुल स्पष्ट मॉडल है जहां राज्य इस मॉडल पर चलता है कि पहले विद्रोह की आवाज को बाहर आने दो फिर उसकी पहचान करो फिर उसको खत्म करो. सोवियत रूस ने सोशल मीडिया का इस्तेमाल सिर्फ अपने नागरिकों पर निगरानी रखने के लिए ही नहीं किया बल्कि दक्षिण यूक्रेन के क्रीमिया और डोनाबास इलाके में रह रहे रूसी नागरिकों पर भी यूक्रेन रूस युद्व में निगरानी रखा, खासकर क्रीमिया में और काफी हद तक डोनाबास इलाके के अधिकांश रूसी नागरिकों को प्रोपेगेंडा , झूठी और भ्रामक सूचनाओं के माध्यम से रूस समर्थक बनाने में कामयाब रहा। रूस ने अपने पड़ोसी देशो जैसे कजाकिस्तान उज़्बेकिस्तान किर्गिस्तान और हंगरी और माल्दोवा और बुल्गारिया में रूसी समर्थक उम्मीदवारों को आर्थिक संसाधनों के अलावा इंटरनेट और सोशल मीडिया के माध्यम से सत्ता में स्थापित करने में मदद की Nathalie Maréchal(2016,29-5)। तकनीकी के विशेषज्ञ मानते हैं कि के हंगरी में विक्टर ओरबान को सत्ता में स्थापित करने, और Brexit leave (ब्रिटेन द्वारा युरोपियन यूनियन से बाहर निकलने की घटना) में रूस द्वारा सोशल मीडिया और इंटरनेट के माध्यम से काफी मदद की गई। रूसी फेडरल सिक्योरिटी एजेंसी FSB द्वारा निर्मित हार्डवेयर को सभी इंटरनेट और सोशल मीडिया सेवा देंने वाली कंपनी को इंस्टाल करना अनिवार्य कर दिया गया ताकि उपभोक्ताओं से जुड़ी सूचनाओं को FSB हासिल कर सके और उन पर नियंत्रण रख सके Nathalie Maréchal(2016,32)।

Soldatov&Borogan(2015). के मुताबिक 2014 मे रूसी दूर संचार मंत्रालय ने सभी कंपनियों के लिए The System of Operational-Investigatory Measures (SORM)की नीति के तहत एक नया इलेक्ट्रॉनिक उपकरण जिसमें Deep Packet Inspection (DPI) capability हो उसे लगान अनिवार्य कर दिया ताकि लोगों की गतिविधियो पर सटीक निगरानी रखी जा सके। Andrei Soldatov and Irina Borogan(2015) के मुताबिक 2007 से 2012 के बीच पिछले 6 वर्षों मे सोवियत रूस मे सरकार की सुरक्षा एजेंसियो द्वारा SORMS के द्वारा लोगों के फोन इमैल पर निगरानी की संख्या मे भारी मात्रा मे बृद्धि हुई है यह आकडा 2007 मे 265937 से बढ़कर 2012 में 539864 लगभग दो गुना हो गया है। इससे अंदाज लगे जा सकता है की रूसी खुफिया तंत्र अपने नागरिकों पर किस हद तक निगरानी रखता है ,जिनका मुख्य उदेश्य किसी भी तरह की विरोध की आवाज की पहचान की जा सके। 2013 मे प्रधान मंत्री देमेट्री मेदवेदेव ने एक आदेश पर हस्ताक्षर किए जिसमे कहा गया कि पत्रकार ,खिलाड़ी ,दर्शक , खेल से जुड़े जज या राजनीतिज्ञ सभी लोग जो " सोची ओलंपिक" मे भाग लेने के लिए आ रहे हैं वे सभी लोग FSB की निगरानी मे रहेंगे (Soldatov&Borogan 2015 255)।

तुर्की मे लंबे समय से अरदोगान सत्ता में हैं , 2016 मे राष्ट्रपति अर्डोगान की सरकार ने बड़ी संख्या मे उन लोगों को गिरफ्तार किया गया जिन्होंने सोशल मीडिया पर अरदोगान के खिलाफ पोस्ट लिखा था। (Mustafa Oz & Akan Yanik (2022, 4) के मुताबिक इन गिरफ्तार किए गए लोगों की संख्या लगभग 1600 से अधिक थी। राजनीति विज्ञान के विशेषज्ञ मानते हैं कि 2016 में अपने खिलाफ सैन्य तख्तापलट को विफल करने के लिए अरदोगान की सरकार ने बहुत ही प्रभावशाली तरीके से सोशल मीडिया का इस्तेमाल किया। तख्तापलट को विफल करने के बाद अरदोगगान की सरकार ने सोशल मीडिया का इस्तेमाल करके बड़ी संख्या मे अपने विरोधियों को गिरफ्तार किया और उनके खिलाफ कोर्ट मे मुकदमे चलाए गए। इससे पता चलता है कि अधिकांश देशों मे सत्ताधारी दल सत्ता पर अपनी पकड़ मजबूत रखने के लिए अपने विरोधियों की निगरानी करते है जिसके लिए सोशल मीडिया का इस्तेमाल किया जा रहा है

सोशल मीडिया सर्विलांस :मिस्र,चीन और सीरिया

अरब स्प्रिंग के दौरान मिस्र मे होस्नी मुबारक की सरकार ने बड़े पैमाने पर सोशल मीडिया का इस्तेमाल प्रदर्शनकारियों की पहचान करने और उनको गिरफ्तार करने के लिए किया। (Gohdes 2014,34) के मुताबिक मिस्र की सुरक्षा एजेंसियों ने अमेरिका की Narus कंपनी

द्वारा उपलब्ध कराए गए deep packet inspection (DPI) टेक्नोलाजी का इस्तेमाल विरोध प्रदर्शन के दौरान इंटरनेट और Skype पर प्रदर्शनकारियों की बातचीत सुनने और सूचनाओ पर निगरानी करने के लिए किया तथा इसके द्वारा प्रदर्शन से जुड़े कार्यकर्ताओ की योजना ,संदेश और उनके स्थान (location) से जुड़ी जानकारी के आधार पर उनमे से बड़ी संख्या मे लोगों को गिरफ्तार किया गया और जाईल मे डाल दिया गया जिसमे एक चर्चित कार्यकर्ता गूगल के CEO रहे Wael Ghonim को गिरफ्तार किया गया। वस्तुतः Wael Ghonim ने मुबारक के खिलाफ विरोध प्रदर्शन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

Anita Rosemary Gohdes(2014 37) के अपने शोध Repression in the Digital Age: Communication Technology and the Politics of State Violence के मुताबिक चीन की सरकार ने जहा एक तरफ गूगल ,यूट्यूब ,फेसबूक ,ट्वीटर और अन्य सोशल मीडिया वेबसाईट को प्रतिबंधित किया है लेकिन उनकी अपनी खुद की सोशल मीडिया वेबसाईट और सर्च इंजन है जिसमे Youku , Sina Weibo शामिल हैं उनका चीन के नागरिक मुक्त रूप से इस्तेमाल करते हैं। जिसमे Sina Weibo ट्वीटर के समान है तथा Youku यूट्यूब से मिलती जुलती है , लेकिन सरकार द्वारा इन प्लेटफॉर्म के माध्यम से लोगों की गतिविधियों और सरकार विरोधी गतिविधियों पर कड़ी नजर रखी जाती है तथा सरकार विरोधी सामग्री वीडियो ,लेख आदि को फ़िल्टर कर दिया जाता है। चीन की सरकार ने अनेक मौकों पर विरोध प्रदर्शन और दंगे की स्थिति मे इंटेरबनेट और सोशल मीडिया पर पूरी तरह से प्रतिबंध लगा देती है ताकि सामूहिक प्रदर्शन को फैलने से रोका जा सके। 2009 मे Xinjiang प्रांत में हुए ethnic दंगों के दौरान सोशल मीडिया और इंटरनेट प्रतिबंधित किया गया , चीनी अधिकारियो ने खुद बताया कि Urumqi के कुछ इलाकों मे इंटरनेट पूरी तरह से बंद कर दिया है ((Gohdes 2014,37)। वस्तुतः Urumqi चीन के पश्चिमी सीमा पर है जहा स्थानीय उगमीर समुदाय बहुसंख्यक है जो इस्लाम को मानते है, ये लोग भेदभाव और शोषण के खिलाफ अक्सर सरकार के खिलाफ विरोध प्रदर्शन करते रहते हैं। इन लोगों पर चीन की सरकार कड़ी निगरानी रखती है। सीरिया मे बसर अल असद की सरकार ने 2011 से 2014 के बीच सोशल मीडिया और इंटरनेट आधारित निगरानी के माध्यम से अपने विरोधयो की गिरफ़्तारी की इसके लिए उन्होंने "deep packet inspection (DPI) टेक्नॉलाजी का इस्तेमाल किया ,इसके अलावा सरकार ने हैकरों के समूह "SEA(Syrian Electronic Army)" का इस्तेमाल किया ,ये लोग Silverhawk मालवेयर को संदिग्ध और विरोधियों के मोबाईल नंबर पर सॉफ्टवेरे अपडेट के नाम से भेजते थे एक बार डॉउनलोड होने के बाद Silverhawk मोबाईल की location (भौगोलिक स्थिति) ,मीटिंग के स्थान ,के अलावा मोबाईल मे मौजूद सभी सूचनाए और सामग्री निकालकर Syrian Electronic Army ("SEA") को भेज देता था इसके अलावा SEA ने फेसबूक और अन्य सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के माध्यम से भी मालवेयर को फैलाकर सूचनाओ को एकत्र किया कुछ Trojans जैसे Darkcoment and Xtreme का भी इस्तेमाल किया तथा विरोधियो की गिरफ़्तारी और हत्याये की (Sarah et al 2021, 1-25)। असद की सरकार ने अपने विरोधियों को ही नहीं बल्कि मानवाधिकार कार्यकर्ताओ, पत्रकारों और कार्टूनिस्टों को भी गिरफ्तार किया और हत्याएं की। 2012 मे कार्टूनिस्ट Akram Raslan जो Hama शहर के समाचारपत्र "Al-Fedaa" मे काम करते थे उनको देश के सम्मान को नुकसान पहुचाने के आरोप में गिरफ्तार किया गया 2 साल तक उनके परिवार को पता नहीं चला कि वे कहाँ है बाद मे 2015 मे पता चला कि 2013 मे ही उनको प्रताड़ित कर मार दिया गया (Sarah et al 2021, 22)।

सोशल मीडिया सर्विलांस के दायरे मे निजता और राजनतिक चुनाव :सयुक्त राज्य अमेरिका

सोशल मीडिया के माध्यम से राज्य जहां एक तरफ सरकारी एजेंसियों का इस्तेमाल अपने विरोधियों पर गोपनीय तरीके से नजर रखता है। वही दूसरी तरफ बड़ी बड़ी संख्या मे तकनीकी मे विशेषज्ञ निजी क्षेत्र की आई टी कंपनिया और उससे जुड़े तकनीकी विशेषज् लोग आम जरूरतों के लिए काम आने वाले विभिन्न प्रकार के साफ्टवेयर, app और इंटरनेट वेबसाईट के माध्यम से लोगों के जीवन से जुड़ी सूचनाए एकत्र करते हैं और राजनैतिक दलों को चुनाओ मे पेशेवर तरीके से मदद करते हैं। Philip N. Howard(2006) के मुताबिक DataBank.com, Voting.com, Astroturf-Lobby.org और GrassrootsActivist.org अमेरिका के राजनैतिक चुनाओ मे काम करने वाली महत्वपूर्ण वेबसाईटे हैं जो राजनैतिक दलों को अपनी सेवाये उपलब्ध कराती हैं। ये वेबसाईटें आम लोगों को सलाह

देने और मदद करने के नाम पर उनसे उनके निजी जीवन से जुड़ी सूचनाए जैसे पता ,उम्र उनकी ,रुचि,पेशा और आमदनी आसानी से प्राप्त कर लेते है। इन आकड़ों के आधार पर लोगों के राजनैतिक झुकाव की जानकारी हासिल करते है तथा उसी के मुताबिक राजनैतिक दलों के चुनावी अभियान के लिए आडियो -विजुअल और अन्य सामग्री तैयार करते हैं ,अमेरिका मे इसका एक बड़ा बाजार है। Shoshana Zuboff(2019,230-33) के मुताबिक फेसबूक,अमेजन और गूगल मशीन इंटेलिजेंस के द्वारा सूचनाओ को रेवेन्यू मे तब्दील कर रहीं है , उनके मुताबिक सूचनाए मुफ़्त का कच्चा माल हैं जिसे प्रोसेस करके मुनाफा कमाया जा रहा है ,अकेले गूगल का 2016 मे आर्टफिशयल इंटेलिजेंस (AI) से प्राप्त रेविन्यू 644 मिलियन डालर था जिसके 2025 तक 36 बिलियन डालर होने की उम्मीद है।

तकनीकी का इस्तेमाल करके किसी अन्य के निजी जीवन से जुड़ी सूचना को प्राप्त करना निजता के अधिकारों का उलँघन है। अमेरिका मे Fourth Amendment के तहत व्यक्ति के घर को भी निजता के अधिकार मिले हुए हैं , बिना वारंट के पुलिस अधिकारी न तो घर के अंदर प्रवेश कर सकते हैं न ही घर के बाहर Thermal imaging device लगा सकते हैं क्योंकि इससे घर के भीतर की गतिविधि की निगरानी की जा सकती जो निजता के अधिकारों का उलँघन हैं (Ferguson 2026,21), लेकिन 21सदी मे आम जीवन मे अनेक ईलेक्ट्रॉनिक उपकरण हम अपने घर मे इस्तेमाल करते है जैसे स्मार्ट गूगल कैमरा ,स्मार्ट अमेजन स्पीकर "Alexa" ,dishwasher, स्मार्ट फ्रिज आदि जो हमारे जीवन की बेहद निजी सूचनाए किसी थर्ड पार्टी को भेज देते हैं। इस तरह से तकनीकी के इस दौर में हमारे घर मे भी हमारी निजता सुरक्षित नहीं है। Ferguson (2026,28) के मुताबिक अमेरिका मे हाउसिंग सोसाइटी मे कैमरा और Facial Recognition Device लगाने का चलन बढ़ रहा है , किराये के अपार्टमेंट मे मालिक द्वारा स्मार्ट कैमरा लगाए जाने का विरोध अमेरिका होता रहा है क्योंकि यह निजता का उलँघन है ,लेकिन इन सब के बावजूद पुलिस पोल कैमरा का इस्तेमाल करती है जो संदिग्ध लोगों के अलावा आम लोगों की भी निगरानी करता है। मनोविज्ञानी मानते है कि निजता का उलँघन व्यक्तित्व मे अस्थिरता और डर पैदा करता है।

निष्कर्ष

सोशल मीडिया को आम लोग और सत्ताधारी राज्य ने अपने -अपने उद्देश्य और सुविधाओ के अनुसार उपयोग कर रहें हैं। ,जहां एक तरफ आम लोगों ने राज्य को नियंत्रित करने के लिए राज्य के खिलाफ विरोध प्रदर्शन के आयोजन मे सोशल मीडिया का बेहतरीन इस्तेमाल किया है, अरबस्प्रिंग के दौरान मिस्र मे होसनी मुबारक के खिलाफ ,सीरिया मे बसर अल असद के खिलाफ और यूरोमैदान मे यूक्रेन के राष्ट्रपति विक्टर यानुकोविच के खिलाफ विरोध प्रदर्शन इसके उदाहरण है जहां आंदोलन को सफलता मिली सत्ताधारी दल सत्ता से बेदखल कर दिए गए। वही दूसरी तरफ राज्य ने उसी सोशल मीडिया का इस्तेमाल लोगों के ऊपर निगरानी रखने और उनकी पहचान कर उनके खिलाफ कारवाही की जिसमे सीरिया, मिस्र और चीन की सरकारों ने आम नागरिकों के अलावा पत्रकारों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओ को भी जेल मे डाल दिया खासकर अरब स्प्रिंग से अनेक देशों ने सबक लिया और सोशल मीडिया के माध्यम से निगरानी को और मजबूत किया चीन और सोवियत रूस इसके प्रमुख उदाहरण है जिनके अपने सर्च इंजन और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म हैं। परंपरागत मीडिया जैसे समाचारपत्रों पर प्रतिबंध लगाने के परंपरागत तरीके से अलग हटकर सरकारे सोशल मीडिया पर पोस्ट की गई विभिन्न सामग्री की निगरानी के माध्यम से अपने विरोधियों पर नजर रखती हैं ,सोशल मीडिया पर डाली गई पोस्ट की सरकारी निगरानी लोगों मे एक डर पैदा करती है और फिर वे सरकार के खिलाफ लिखने या बोलने मे सतर्कता बरतते है या फिर बंद कर देते हैं। जिसका अभिव्यक्ति की आजादी और लोकतंत्र पर नकारात्मक आसार पड़ता है इसके साथ ही निगरानी का भय उनके व्यक्तित्व को प्रभावित करता है ।लोकतान्त्रिक और अधिनायक वादी दोनों सरकारे सोशल मीडिया का इस्तेमाल सुरक्षा की दृष्टि से तथा अपने आलोचकों पर निगरानी रखने के लिए करती हैं जिसमे वे आईटी क्षेत्र की विशेषज्ञ कंपनियों और सुरक्षा एजेंसियों का इस्तेमाल करते है तथा ये कंपनिया निजी जीवन से जुड़े आकड़ों का विश्लेषण करके राजनैतिक दलों को चुनाओ मे बेंचते है। राज्य हमेशा इस बात को स्वीकार करते हैं कि वे राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से सोशल मीडिया पर निगरानी करते हैं ,जबकि वस्तु स्थिति ठीक उस दावे के उलट है ,

सोशल मीडिया द्वारा सर्विलांस का राजनतिक -आर्थिक पहलू सुरक्षात्मक पहलू से अधिक बड़ा है। तानाशाही सरकारो में सोशल मीडिया द्वारा निगरानी का भय अभिव्यक्ति की आजादी को अर्थहींन और अप्रासंगिक बना रहा है जिससे लोकतंत्र की जड़े कमजोर हो रही हैं।

References .

1. Gohdes A.R. (2014) Repression in the Digital Age: Communication Technology and the Politics of State Violence
2. Sarah D. A. Guruli N & Samaro.D(2021) Digital Domination: How the Syrian regime's mass digital surveillance violates human rights, UIC School of Law p1-25
3. Soldatov A.& Borogan I. (2015): The red web: the struggle between Russia's digital dictators and the new online revolutionaries: Published in the United States by Public Affairs press.
4. Soldatov A.& Borogan I.(2015):The Compatriots: The Brutal and Chaotic History of Russia s Exiles, Emigres and Agents Abroad
5. Shoshana Zuboff (2019): The Age of Surveillance Capitalism, Public Affairs
6. Hachette Book Group p 230-233
7. Ferguson A.G.(2026):Your Data Will Be Used Against You:Policing in the Age of Self-Surveillance, New York University Press,P 21,28
8. Kashyap, Alok Kumar."A Study of Self Help Group Lead Women Empowerment." The Opinion, Bi annual, Srijan Research Foundation Varanasi,U.P.,July-December 2024
9. Mishra, Pratiksha, and Alok Kumar Kashyap." The Impact of Self Help Group on Decision Making Power Among Rural Women." Journal of Socio-Educational & Cultural Research, Srijan Research Foundation Varanasi,U.P., January-March 2026
10. Gutsche, R. E.(2015)Media Control :News as an Institution of Power and Social Control, **Bloomsbury Academic** An imprint of Bloomsbury Publishing Inc
11. Paswan, A. (2016). Samkalin Bharat: Samajik, Arthik evam Rajnitik Vimarsh,VictoriousPublishers New Delhi. PP-1–338.
12. Paswan, A. (2024). SDG-16 and Access to Justice for Marginalized Dalit: A Study of PatepurVillage of Ghazipur District of Uttar Pradesh. International Journal of Research andInnovation in Social Science, 8(8), 2261-2269. *(PDF) ACCESSIBILITY OF JUSTICE FOR MARGINALIZED DALIT*. Available from: https://www.researchgate.net/publication/400385786_ACCESSIBILITY_OF_JUSTICE_FOR_MARGINALIZED_DALIT [accessed Aug 06 2026].

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

वैश्वीकरण का कृषक समाज की सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

आलोक कुमार यादव
शोध छात्र- समाजशास्त्र विभाग, लाल बहादुर शास्त्री स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पंडित दीनदयाल उपाध्याय नगर चंदौली
प्रो० अरुण पाण्डेय
समाजशास्त्र विभाग, लाल बहादुर शास्त्री स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पंडित दीनदयाल उपाध्याय नगर चंदौली

सारांश-

वैश्वीकरण एक जटिल आर्थिक राजनीतिक सांस्कृतिक और सामाजिक प्रक्रिया है जिसने कृषक समाज की सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। वैश्वीकरण के प्रभाव के परिणाम स्वरुप कृषक समाज के क्षेत्र में उत्पादन प्रणाली, तकनीकी विकास बाजार व्यवस्था, उपभोग के स्वरूप पारिवारिक संबंधों तथा सांस्कृतिक मूल्यों में महत्वपूर्ण परिवर्तन स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य वैश्वीकरण का कृषक समाज की सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना पर प्रभाव का एक विश्लेषणणात्मक अध्ययन करना है।

मुख्य शब्द : वैश्वीकरण कृषक समाज, सामाजिक संरचना, आर्थिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन।

प्रस्तावना-

मानव समाज एक गतिशील इकाई है जहां समय के साथ सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन होते रहते हैं। वैश्वीकरण 20 शताब्दी के उत्तरार्द्ध की एक ऐसी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें वैश्विक स्तर पर समाजो को एकीकृत किया है। भारत जैसे विकासशील और कृषि प्रधान देश में वैश्वीकरण।का प्रभाव केवल महानगरीय जीवन तक सीमित नहीं रहकर बल्कि इसने ग्रामीण आर्थिक और कृषक समाज को भी गहराई से प्रभावित किया है। भारत गांवो का देश है और कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था से संबंधित रहा है। भारत की 72% जनसंख्या गांव में निवास करती है जिसका मुख्य पेसा कृषि है। वर्तमान समय में देश के कुल सक्रिय श्रमशक्ति का लगभग 43% से 46% हिस्सा प्रत्यक्ष रूप से कृषि के साथ जुड़ा हुआ है। वर्तमान में भारत के राष्ट्रीय आय सकल घरेलू उत्पादन जीडीपी में कृषि और संबद्ध क्षेत्र का योगदान लगभग 16% है। हालांकि जीडीपी में योगदान कम होने के बावजूद यह क्षेत्र आज भी देश की लगभग 40% से 58% कार्यशील आबादी को रोजगार प्रदान कर रहा है। अतः स्पष्ट है कि भारत जैसा देश कृषि के समुचित विकास के बिना आर्थिक क्षेत्र में आगे नहीं बढ़ सकता है। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण पुनर्निर्माण को प्रधानता दी गई तथा कृषि के क्षेत्र में हरित क्रांति लाने का प्रयास किया गया तथा स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भूमि सुधारो के माध्यम से किराए पर भूमि जोतने वाले (Share-Croppers) और भूमिहीन श्रमिकों (Landless-labours) की स्थिति में परिवर्तन आया।

अध्ययन का उद्देश्य-

- कृषक समाज की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना का अध्ययन करना
- कृषक समाज पर वैश्वीकरण के प्रभाव का विश्लेषण करना।

शोध प्रविधि-

प्रस्तुत शोध पत्र हेतु विषय से संबंधित तथ्यों का संकलन एवं विश्लेषण द्वितीय स्रोतों के रूप में विभिन्न प्रकार की पत्रिकाओं, जनरल्स तथा पुस्तकों द्वारा किया गया है। इस शोध पत्र में वर्णनात्मक एवं विश्लेषणआत्मक पद्धति के माध्यम से अध्ययन किया गया है।

वैश्वीकरण की अवधारणा -

वैश्वीकरण एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसने संपूर्ण विश्व की सामाजिक आर्थिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संरचनाओं को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। इसके परिणाम स्वरुप विश्व के विभिन्न देशों के मध्य अन्तक्रिया वस्तुओं, पूंजी, तकनीकी, सूचना तथा विचारों का आदान-प्रदान तीव्र गति से बड़ा है। वैश्वीकरण के परिणाम स्वरुप विश्व एक वैश्वीक गाँव (Global village) के रूप में विकसित हुआ है, जहां संचार और परिवहन के आधुनिक संबंधों में भौगोलिक दूरियों को कम कर दिया है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया का प्रारंभ द्वितीय विश्व युद्ध के बाद हुआ तथा 20वीं शताब्दी के अंतिम दशकों में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी अंतर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन (W.T.O) अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (I.M.F) एवं विश्व बैंक जैसी संस्थाओं की भूमिका के कारण इसका विस्तार और अधिक हुआ लेकिन इसका आधुनिक स्वरूप 1980 के दशक से विकसित हुआ।

वैश्वीकरण की परिभाषाएं -

एंथोनी गिडेंस के अनुसार, "वैश्वीकरण विश्वव्यापी सामाजिक संबंधों का संघनीकरण है, जिसके माध्यम से दूर दराज की घटनाएं स्थानीय परिस्थितियों को प्रभावित करती हैं और स्थानीय घटनाएं वैश्विक प्रक्रियाओं से जुड़ जाती हैं।''

मंलकोल्म वेर्टस के अनुसार, " वैश्वीकरण एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसने भूगोल द्वारा सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्थाओं को दबाया जाता है जिससे लोग इस बात के लिए जागरूक होने लगते हैं कि उनका प्रश्च प्रवण हो रहा है।''

रोलैंड राबर्टसन के अनुसार, '' वैश्वीकरण विश्व के संकुचन तथा विश्व को एक समग्र इकाई के रूप में समझने की चेतना के तीव्र होने की प्रक्रिया है।''

व्याख्या- इन परिभाषाओं के अनुसार आधुनिक संचार परिवहन तथा सूचना प्रौद्योगिकी के विकास ने विश्व को एक वैश्विक समुदाय के रूप में परिवर्तित कर दिया है जिससे विभिन्न देशों और समाजों के बीच पारस्परिक संबंधों में वृद्धि हुई है।

भारत में वैश्वीकरण की शुरुआत:

ऐतिहासिक काल से ही भारत का व्यापार दुनिया से जुड़ा हुआ था।(प्राचीन रेशम मार्ग और औपनिवेशिक काल) लेकिन 1947 की आजादी के बाद भारत में संरक्षण वादी नीति अपनाई ताकि घरेलू उद्योगों को बढ़ावा दिया जा सके। 1990 के दशक की शुरुआत में भारत को गंभीर आर्थिक संकट और विदेशी मुद्रा भंडार की भारी कमी का सामना करना पड़ा जिसके परिणाम स्वरुप नई आर्थिक नीति 1991 को अपनाया गया। इस नीति के माध्यम से भारतीय अर्थव्यवस्था में उदारीकरण निजीकरण तथा वैश्विक नीतियों को अपनाया गया, जिसके परिणाम स्वरुप भारत के आर्थिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र वैश्विक स्तर पर अधिक एकीकृत हुआ।

वैश्वीकरण के आयाम

सामाजि क आयाम -

वैश्वीकरण एक ऐसी व्यापक सामाजिक प्रक्रिया है जिसने विश्व के सभी समाजों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित किया है.जिसने विश्व के सभी देशों के बीच परस्पर संपर्क तथा विचारों, मूल्यो जीवन शैली तथा सामाजिक संस्थाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। वर्तमान में संचार तथा सूचना प्रौद्योगिकी के विकास के कारण विभिन्न देश आपस में एक दूसरे के निकट आए हैं। जिससे सामाजिक

संबंधों में व्यापक परिवर्तन आया है वैश्वीकरण के परिणाम स्वरूप। सामाजिक मूल्य रीति-रिवाज एवं जीवन पद्धति में परिवर्तन आया है शिक्षा स्वास्थ्य संचार तथा परिवहन के क्षेत्र में हुई प्रगति ने लोगों के सामाजिक स्तर तथा जीवन निर्वाह में सुधार किया है |

आर्थिक आयाम:

आर्थिक वैश्वीकरण को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है। संपूर्ण विश्व को एक समग्र इकाई के रूप में तथा बाजार को इसके एक उपकरण के रूप में स्वीकार किया जाता है। एक वैश्वीकृत दुनिया में अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं। खुला उदार, मुक्त बाजार तथा मुक्त व्यापर तथा इसे अंतरराष्ट्रीय निवेश और तात्कालिक पूंजी के प्रवाहो द्वारा चिन्हित किया जाता है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था है श्रेष्ठ आर्थिक परिधियों में आ रही है और इनका अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय तथा वित्तीय बाजारों की दुनिया से एकीकरण हो रहा है जो कंप्यूटर के माध्यम से तत्काल संपन्न होता है।

संस्कृत आयाम:

संपूर्ण विश्व में बढ़ी हुई सांस्कृतिक अंर्तसम्बर्धता का घोतक है। लोगों के उतप्रवास, पर्यटन, वैश्विक अर्थव्यवस्था और राजनीतिक संस्थाओं के कारण दुनिया के विभिन्न भागों में सदृश्य जीवन पद्धति के रूप में इसे देखा जा सकता है। वैश्वीकरण क्षेत्रीय संस्कृति के लिए विकल्प उपलब्ध कराती है। मानव अधिकारों, जनतंत्र बाजार, अर्थव्यवस्था, उत्पादन का नया तरीका उपभोग हेतु नए उत्पादों तथा विश्राम की आदतों आदि के विचारों को क्षेत्रीय संस्कृत के नवीन दृष्टिकोण द्वारा उपस्थित किया जाता है। इससे नई संस्कृति की समक्ष राष्ट्रीयता ,दुनिया में 'स्व' एक विदेशी हेतु क्या है? एक नागरिक के लिए क्या है? लोगों की राजनीति भागीदारी क्या हो तथा सामाजिक जीवन के अन्य विविध पक्षो आदि का अभिभावक होता है। अतः कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण का संस्कृत आयाम केवल सांस्कृतिक आदान-प्रदान तक सीमित नहीं है बल्कि यह समाज के मूल्य मान्यताओं जीवन शैली और सांस्कृतिक पहचान को भी गहराई से प्रभावित करता है। इससे सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रभाव हैं, जिनका अध्ययन विशेष रूप से कृषक समाज के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

कृषक समाज:

वे ग्रामीण लोग जो जीवन निर्वाह के लिए अपनी भूमि को नियंत्रित कर खेती करते हैं और कृषि जिनके जीवन के परंपरागत तरीके का एक भाग होती है और जो कुलीन या शहरी लोगों को देखते हैं और उनसे प्रभावित होते हैं, जिनकी जीवन शैली उनके समान है, लेकिन कुछ अधिक सभ्य प्रकार का एक कृषक वह है जो कृषि को जीवन के तरीके के रूप में अपनाता है। पीढिओ से उनका परिवार खेती पर गुजारा कर रहा है। वह इससे नफा-नुकसान नहीं देखा। यदि कोई व्यक्ति कृषि खाद बीच और उससे होने वाली फसल में लगे श्रम को आर्थिक लाभ या हानि के रूप में देखता है तो हम उसे किसान कहेंगे कृषक नहीं।

नोर्वेक- " कृषक समाज एक बड़े स्तरीकृत समाज का वह उप समाज है जो या तो पूरी तरह से औद्योगिक या आंशिक रूप से औद्योगिक है।''

रेमण्डफर्थ के अनुसार, " लघु उत्पादकों का वह सामज जो केवल अपने निर्वाह के लिए कृषि करता है। उसे कृषक समाज कहा जा सकता है।''

अतः कृषक समाज से तात्पर्य ग्रामीण समाज से है जिसमें अधिकांश जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहती है। यह एक ऐसा समाज है जो सामान्यत दीर्घ समाज का हिस्सा है और एक राज्य और राष्ट्र के रूप में बड़े समाज की राजनीतिक इकाइयों से जुड़ा हुआ है। भौतिक संस्कृति, तकनीकी स्तर, सामाजिक संगठन, मूल्य और व्यक्तित्व प्रणाली के दृष्टिकोण से कृषक समाज तक स्थल समाज से भिन्न होता है।

कृषक समाज की विशेषताएं-

(1) कृषि पर निर्भरता- कृषक समाज का मुख्य आधार है तथा अधिकांश जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुख्य कार्य कृषि ही करती है तथा वह पूर्ण रूप से कृषि पर ही निर्भर रहते हैं।

(2) भूमि का महत्व- कृषकों के लिए भूमि उत्पादन का प्रमुख साधन है। साथ ही सामाजिक प्रतिष्ठा तथा आर्थिक स्थिति का भी आधार है।

(3) ग्रामीण निवास कृषक समाज मुख्यतः ग्रामीण क्षेत्रों में ही निवास करता है और उनका जीवन प्राकृतिक परिवेश से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा है।

(4) सरल जीवन शैली कृषक समाज के लोग सरल तथा सादा जीवन शैली को अपनाते हैं तथा संबंधों में आत्मीयता रखते हैं। उपरोक्त विशेषताएं कृषक समाज की विशिष्ट पहचान को स्पष्ट करती हैं तथा उन्हें अन्य समाज से भिन्न भी;

कृषक समाज पर वैश्वीकरण का प्रभाव-

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने कृषक समाज की सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना को प्रत्यक्ष तथा व्यापक रूप से प्रभावित किया है। विश्व के लोगों क्षेत्रो एवं देश की बढ़ती पारंपरिक निर्भरता के संदर्भ में उद्भूत वैश्वीकरण के इस विचार ने सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में परिवर्तन के नए युग की शुरुआत की है। इन प्रभावों को निम्न रूप से समझा जा सकता है।

सामाजिक प्रभाव:

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के परिणाम स्वरुप कृषक समाज में शिक्षा स्वास्थ्य जागरूकता संचार का विस्तार हुआ है। संयुक्त परिवार व्यवस्था के स्थान पर अब एकाकी परिवार की प्रवृत्ति बढ़ी है तथा जातिगत व्यवहारों तथा संबंधों में परिवर्तन देखने को मिला है। ग्रामीण समाज में अब महिलाओं की भागीदारी बढी है तथा सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि हुई हैं।

आर्थिक प्रभाव:

वैश्वीकरण के परिणाम स्वरुप कृषि उत्पादन को अतीत की। तुलना में बहुत तेजी से बढ़ाने की अनुमति दी है। कृषि उत्पादन विपणन तथा तकनीकी विकास को प्रभावित किया है तथा कृषि कार्य में उन्नत किस्म के कृषि यंत्रों का प्रयोग किया जाने लगा है तथा उन्नत बीजों तथा रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से उत्पादन क्षमता में भी बढ़ोतरी हुई है। किसानों को राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय बाजारों से जुड़ने का अवसर भी प्राप्त हुआ है तथा साथ ही लागत वृद्धि बाजार मूल्य में आस्थिरता तथा बहुराष्ट्रीय कंपनियों पर बढ़ती निर्भरता जैसी चुनौतियां भी सामने आई हैं।

सांस्कृतिक प्रभाव:

वैश्वीकरण के कारण कृषक समाज की जीवन शैली, सांस्कृतिक मूल्य और रहन-सहन खान -पान पहनावे में परिवर्तन आया है। संचार व्यवस्था में कृषक समाज में नई संस्कृत प्रवृत्तियों का विकास हुआ है तथा उनके रीति-रिवाजो परम्पराओ तथा लोक संस्कृति पर भी प्रभाव पड़ा है। इस प्रकार वैश्वीकरण में कृषक समाज में सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तन को उत्पन्न किए हैं, जहां एक और आर्थिक विकास, सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास तथा अवसरों को बढ़ावा दिया है। वहीं दूसरी और सांस्कृतिक मूल्यों, पारंपरिक, सामाजिक संरचना तथा कृषको के समक्ष नई चुनौतियां भी उत्पन्न की हैं।

निष्कर्ष -

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि वैश्वीकरण ने कृषक समाज की सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक संरचना को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। एक और आधुनिक तकनीकी संचार साधनों ने आधुनिक कृषि तथा वैश्विक बाजार के विस्तार में कृषकों के लिए अवसर उपलब्ध कराए हैं। वहीं दूसरी और बढ़ती उत्पादन लागत तथा बाजार की अनिश्चितता तथा पारंपरिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यो में परिवर्तन जैसी समस्या भी सामने आई है। सामाजिक स्तर पर शिक्षा जागरूकता एवं सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि भी हुई है तथा आर्थिक स्तर पर कृषि के व्यवसायीकरण और आधुनिक तकनीकी के प्रयोग को बढ़ावा भी मिला है। सांस्कृतिक स्तर पर जीवन शैली उपभोग की प्रवृत्तियां तथा पारंपरिक मान्यताओं में परिवर्तन भी देखने को मिला है जिसके कारण

पारंपरिक सांस्कृतिक स्वरूप पर भी प्रभाव पड़ा है। अतः यह कहा जा सकता है कि वैश्वीकरण ने कृषक समाज को विकास एवं परिवर्तन की नई दिशाएं प्रदान की है तथा इसके साथ ही चुनौतियां भी उत्पन्न हुई हैं। इसीलिए आवश्यक है कि ऐसी नीतियों का निर्माण किया जाए एवं ऐसे कार्यक्रम विकसित किए जाएं जो कृषि के क्षेत्र की स्थिरता' किसानों के आर्थिक हितों तथा कृषक समाज के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण को सुनिश्चित करते हुए समावेशी एवं सतत विकास को प्रोत्साहित कर सके।

संदर्भ सूची-

1. Desai, A.R. (2005). Tonbinis Gaging Rural Sociology in India Popular Prakashan, Mumbai.
2. Srinivas, M.N. (1966). Social Change in Modern India. University of California Press.
3. Redfield, R. (1956), Peasant Society and culture. University of Chicago Press.
4. Giddens, A. (2002). Runaway World How Globalisation is Reshaping our Live. ProfileBooks, Londan.
5. Waters, M. (2001). Globalization, Routledge London.
6. Goverment of india (2029). Economic Survey of India. Ministry of Finance, government of india.
7. World Bank. (2008). World Development. Washington, D.C.
8. Robertsan, R. (1992). Globalization: Social Theory and Global Culture. Sage publications.
9. Shiva, V. (2000). Stolen Harvest! The Hijacking of the Global Food Supply South End Press.
10. Dube, S. C. (1976). India's Changing Villages. Routledge & Kegan Paul.
11. https://agricoop.nic.in (राष्ट्रीय किसान नीति 2007)

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

ग्रामीण महिलाओं के सशक्तीकरण में शासकीय योजनाओं की प्रभावशीलता का मूल्याकंन

डॉ0 अरविन्द कुमार राजपूत
असि0 प्रो0 समाजशास्त्र
श्री अग्रसेन महाविद्यालय, मऊरानीपुर (झॉसी)

सारांश

आजादी के 75 वर्षो में महिलाओं को सशक्त बनाने और उनकी दशा और दिशा बदलने में शासन की योजनाओं की भूमिका निसंदेह अत्यंत उपयोगी रही है हम यह भी विश्वास के साथ कह सकते हैं कि महिलाओं ने बहुत तरक्की की है। आज महिलाएं हर क्षेत्र में अपना एक विशेष स्थान बना रही है। राज्य और केन्द्र सरकार दोनों के द्वारा महिलाओं को आर्थिक मजबूती प्रदान करने अनेक योजनाएं चलाई जा रही है जिससे शहरी महिलाओं के साथ ग्रामीण महिलाएं भी मजबूत बन सके और इन योजनाओं से महिलाओं को मिलने वाले लाभ का प्रतिशत मुश्किल से बीस फीसदी है। उपरोक्त योजनाएं भी महिलाओं के न केवल कल्याण बल्कि उन्हें आर्थिक उन्नति के साथ मानसिक और नैतिक मजबूती देती है। शासन की मंशा तब पूर्ण समझी जायेगी जब इन योजनाओं से अधिसंख्य महिलाओं को फायदा मिले।

प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों का स्थान महत्वपूर्ण रहा है, प्रत्येक राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं की अग्रणी भूमिका रही है, क्योकि समाज के सबसे छोटी इकाई परिवार की मेरूदण्ड महिलाएं ही होती है चूंकि परिवार सामाजिक जीवन की सर्वोत्ताम पाठशाला है, इसलिए महिलाओं के विकास के बगैर समाज के विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है और समाज के विकास से ही राष्ट्र का विकास सम्भव है। इस संदर्भ में भारत के प्रथम प्रधानमंत्री स्व0 पं0 जवाहर लाल नेहरू का कहना है कि ''लोगों में जागृति लाने के लिए पहले स्त्रियों को जागृत करना होगा स्त्रियों के आगे बढ़ने से परिवार आगे बढ़ेगा, गांव आगे बढ़ेगा, राष्ट्र भी आगे बढ़ेगा''। विभिन्न काल में भारतवर्ष में स्त्रियों की स्थिति भिन्न–भिन्न रही है वैदिक काल में प्रारम्भ में स्त्रियों का स्तर बहुत ऊँचा था। क्योकि उन्हें देवी तुल्य उपाधि दिया गया था, स्त्री परिवार में अपने पति के साथ समान अधिकार एवं उत्तरदायित्वों की उत्ताराधिकारिणी थी। वह अपने पति का अभिन्न अंग मानी जाती थी। और प्रत्येक धार्मिक कार्य, यज्ञ अनुष्ठान आदि में उसकी उपस्थिति अनिवार्य होती थी लेकिन स्त्रियों की दशाओं में युगों के अनुरूप परिवर्तन होते रहें। यही कारण है कि वैदिक युग से लेकर पूर्व मध्ययुग तक उनकी स्थिति में अनेक उतार–चढ़ाव आते रहें और उनके अधिकारों में तद्नुरूप परिवर्तन भी होते रहें, जिससे उनके ऊपर पुरुषों का एकाधिकार मान लिया गया जिसके कारण स्त्रियों की दशा निरंतर दैनीय होती गयी और उन्हें अनेक बन्धनों के घेरे में रखा गया, जिससे उनका व्यक्तित्व सिमट कर रह गया

और उनका विकास अवरूध्द हो गया। रामायण काल में राम की पत्नी सीता के ऊपर एक धोबी द्वारा आरोप लगाये जाने पर राम द्वारा उनका परित्याग कर देना तथा उन्हें पवित्रता को प्रमाणित करने के लिए अग्नि परीक्षा से गुजरना पड़ा। द्रौपदी को पाण्डवों द्वारा जुये में हारना तथा उनके पति पाण्डवों की उपस्थिति में द्रौपदी का चीरहरण उस काल में महिलाओं के प्रति समाज के संकीर्ण दृष्टिकोण को दर्शाता है।

मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना के पश्चात्य स्त्रियों की स्थिति जितनी तीव्र गति से पतन की ओर अग्रसर हुई वह हमारे सामाजिक इतिहास में कलंक के रूप में सदैव याद रहेगा। भारतीय समाज पर मुसलमानों का प्रभाव बढ़ने की वजह से हमारी संस्कृति की रक्षा करना जरूरी हो गया था। इसलिए संस्कृति की रक्षा स्त्रियों के सतीत्व तथा रक्त की शुध्दता बनाए रखने के लिए स्त्रियों के सम्बन्ध में नियमों का विशेष महत्व है, चेतना शून्य हो जाने पर समाज एवं संस्कृति आदि स्वतरू ही समाप्त हो जायेंगे। इस युग में रक्त की पवित्रता की संकीर्णता का इतना विकास हुआ कि 5 से 6 वर्ष की अल्प आयु में ही बालिकाओं के विवाह होने लगे जिसके फलस्वरूप स्त्रियों की शिक्षा एवं उनके सामाजिक स्तर में तेजी से गिरावट आयी। पर्दाप्रथा का विकास तो इस सीमा तक हुआ कि परिवार के अन्य सदस्यों की बात तो दूर रहे पति स्वयं भी किसी अन्य व्यक्ति के सामने अपनी पत्नी का मुँह नहीं देख सकता था। पति की मृत्यु के बाद पत्नी का पति के साथ सती हो जाना पतिव्रता–धर्म की सर्वोच्च परीक्षा मानी जाने लगी। इस प्रथा को धार्मिक आवरण प्रदान कर बढ़ावा दिया गया। सतियों की पूजा की जाने लगी। पहली पत्नी के होते हुए भी विवाह कर लेना, एक से अधिक पत्नियां रखना पुरुषों के लिए सामाजिक प्रतिष्ठा बन गयी। इस प्रकार स्त्रियां अपने अस्तित्व के लिए पूर्णतया पुरुषों पर निर्भर हो गयी।

अंग्रेजी शासन काल में आगमन के साथ ही नवीन सामाजिक युग का प्रारम्भ हुआ। धर्म प्रचारक ईसाई संस्थाओं ने हिन्दु सामाजिक ढांचे में व्याप्त कुरीतियों और अभावों को प्रकाश में लाकर समाज में क्रांति लाने का प्रयास किया उस काल में बाल विवाह के ऊपर प्रतिबन्ध लगाने, विधवा पुर्नविवाह प्रारम्भ करने के लिए तथा सती प्रथा को समाप्त करने के लिए विभिन्न भारतीय समाज सुधारकों के प्रयास के परिणाम स्वरूप अंग्रेजी शासको ने इन समस्याओं के ऊपर ध्यान दिया तथा इसके निराकरण पर भी ध्यान दिया गया एवं इस सम्बन्ध में अनेक विधान बनाये गये जिसके अन्तर्गत विधवाओं के पुनर्विवाह उनकी शिक्षा, पर्दाप्रथा, बाल विवाह, सम्पत्ति पर उनके अधिकार तथा उन्हें मताधिकार के प्रयोग हेतु विभिन्न संवैधानिक अधिकारों को प्रदान करने का प्रयास किया गया। महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने, उनको संरक्षण प्रदान करने उनके हित और कल्याण में वृध्दि करने के उद्देश्य से अनेक अधिनियम पारित कर लागू किये गये जिनमें हिन्दू विधवा विवाह अधिनियम 1861, बाल विवाह प्रतिबन्ध अधिनियम 1929, हिन्दू स्त्री सम्पत्ति अधिकार अधिनियम 1937, महिलाओं और बालिकाओं में उनके नैतिक शोषण एवं अनैतिक व्यापार में लिप्त रहने पर प्रतिबन्ध सम्बन्धित अधिनियम 1956, विवाह से सम्बन्धित विशेष हिन्दू विवाह अधिनियम 1954, 1955, महिलाओं के प्रति अभद्र व्यवहार निषेध अधिनियम 1986 आदि के द्वारा महिलाओं के कल्याण और हितों को सुरक्षित करने के साथ ही साथ भारतीय संविधान में बिना किसी भेदभाव के सभी भारतीय नागरिकों के लिए जिनमें महिलाएं भी सम्मिलित हैं, अनुच्छेद 14, 15, 16 के अन्तर्गत इस बात का प्रावधान किया गया है कि महिलाओं को समानता तथा कानून द्वारा समान रूप से सुरक्षा प्रदान करने तथा सरकारी सेवाओं के सम्बन्ध में समान अवसर प्रदान किया गया है।

भारत एक विशाल देश है जिसमें सन् 2001 की जनगणना के अनुसार महिलाओं की संख्या 40.71 करोड़ है जो देश कुल आबादी (84.63 करोड़) का 48.1 प्रतिशत है। स्वतंत्रता के बाद से ही महिलाओं की उन्नति, विकास, योजनओं का केन्द्र बिन्दु रही। यही कारण है कि भारतवर्ष में महिलाओं

के कल्याण एवं विकास के लिए उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, परिवार, कल्याण, श्रम आदि से सम्बन्धित नीतियों का निर्धारण किया गया है तथा उससे सम्बन्धित कार्यक्रम संचालित किये गये। जिसमें मुख्य रूप से महिलाओं के विकास एवं कल्याण के सम्बन्ध में केवल राष्ट्रीय स्तर पर नहीं अपितु अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर भी विचार किया गया और इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर भी विचार किया गया और इस सम्बन्ध में राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन तथा विभिन्न प्रकार के कार्यक्रमों को बनाकर संचालित किया गया। यथा इन्दिरा महिला योजना, बालिका अधिकारिता परियोजना, बालिका समृध्दि योजना, राष्ट्रीय महिला आयोग, राष्ट्रीय महिला कोष, राष्ट्रीय जनसहयोग एवं बाल विकास संस्थान, महिला समृध्दि योजना, समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम, विधवा अनुदान कार्यक्रम, वृध्दा अनुदान कार्यक्रम, निराश्रित महिला कर्मशाला, कार्यरत महिला छात्रावास, किशोर बालिका स्कीम, राष्ट्रीय महिला संसाधन केन्द्र, महिलाओं के मामले में राष्ट्र मण्डल सदस्यों की गोष्ठी, विश्व खाद्य कार्यक्रम एवं योजना, बाल सेविका प्रशिक्षण कार्यक्रम, राष्ट्रीय महिला अधिकार आयुक्त, ग्रामीण महिलाओं के विकास एवं सशक्तिकरण योजना, महिलाओं के रोजगार एवं प्रशिक्षण हेतु विशेष प्रोत्साहन कार्यक्रम महिलाओं के लिए प्रशिक्षण सह रोजगार समर्थन कार्यक्रम, महिलाओं एवं बालिकाओं के लिए अल्प आवास गृह, कामकाजी महिलाओं और बीमार माताओं के बच्चों हेतु शिशु शालाएं, महिला लाभोन्नमुखी स्कीम, आवर्ती कोश, ऋण संवर्धन स्कीम के साथ साथ विभिन्न संस्थाओं जैसे नोडल एजेंसी, केयर सार्क, यूनिसेफ, विश्व बैंक समेकित बाल विकास कार्यक्रम विधवा पेंशन, वृध्दा पेंशन, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना, सुकन्या समृद्धि योजना आदि के द्वारा भी कार्यक्रम चलाए जा रहें है।

उपरोक्त सभी कार्यक्रमों में से निम्नलिखित पांच कार्यक्रमों को अच्छादित किया है, जो इस प्रकार हैं, समेकित बाल विकास कार्यक्रम विधवा पेंशन, वृध्दा पेंशन, कन्या सुमंगला योजना महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना।

1– **समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम** – समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम के अन्तर्गत शोधकत्ताा ने अपने अध्ययन विषय के अन्तर्गत गर्भवती एवं धात्री महिलाओं को न्यादर्श रूप में चयनित किया है। समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम की शुरूआत सन् 1975 में की। जिसके अन्तर्गत शिशुवती और गर्भवती महिलाओं को पूरक पोषाहार, स्वास्थ्य जांच, टीकाकारण, स्वास्थ्य सम्बन्धित शिक्षा शामिल है ताकि जन्म लेने वाले बच्चों का शारीरिक मानसिक विकास अवरूद्ध न हो तथा गर्भवती एवं धात्री महिलाओं को कुपोषण तथा अन्य बीमारियों से बचाया जा सके। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रत्येक आंगनबाड़ी केन्द्र पर आठ गर्भवती व आठ धात्री माताओं का चयन किया जाता है जो गरीबी रेखा के नीचे हो, प्रत्येक आंगनबाड़ी केन्द्र पर गर्भवती व नवजात शिशुओं को स्तनपान कराने वाली माताओं का, नियमित अन्तराल पर, महिला स्वास्थ्य निरीक्षिका तथा सहायक परिचारिकाएं स्वास्थ्य परीक्षण करती है। वे दिन प्रतिदिन के होने वाले साधारण रोगों का निदान भी करती है तथा आवश्यकतानुसार सामान्य औषधियां भी देती है। साथ ही साथ सभी गर्भवती महिलाओं को टिट्नेस का टीका लगाया जाता है।

गर्भवती व शिशुवती महिलाओं के लिए आंगनवाड़ी केन्द्रों पर पोषाहार एवं स्वास्थ्य के संदर्भ में अनौपचारिक रूप से प्रशिक्षण भी दिया जाता है। यह प्रशिक्षण 15–45 वर्ष की अवस्था की स्तनपान कराने वाली तथा गर्भवती माताओं को दिया जाता है तथा गर्भवती व शिशुवती माताओं का साप्ताहिक वजन लिया जाता है तथा इन गर्भवती व धात्री माताओं को पूरे सप्ताह के प्रत्येक शनिवार को पोषाहार जो पंजिरी के रूप में होता है इन्हें दिया जाता है। गर्भवती महिलाओं को सप्ताह भर का आयरन, फोलिक एसिड, डिवार्मिंग की दवा आवश्यकतानुसार दी जाती है।

2– विधवा पेंशन– भारतवर्ष में प्रचीनकाल से ही विधवाओं की समाज में दैनीय स्थिति रही है। विधवाओं को समाज के अन्तर्गत उपेक्षा और तिरष्कार की दृष्टि से देखा जाता था, परिवार में ही उन्हें विभिन्न कारणों से उपेक्षित किया जाता था तथा उनके ऊपर अपने सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक निर्योग्ताएं थोप दी जाती थी जिसके कारण अधिकांश विधवाओं को आर्थिक विपन्नता एवं निराश्रितता की स्थिति में जीवन यापन करना पड़ता है। विधवा महिलाओं की इन समस्याओं को दूर करने हेतु या इन्हे कुछ राहत प्रदान करने के लिए विधवा पेंशन कार्यक्रम चलाया गया। जिसके अन्तर्गत किसी भी आयु की विधवा की जिनकी आयु 60 वर्ष कम हो, जो गरीबी रेखा के नीचे एवं निराश्रित हो उन्हें विधवा पेंशन स्कीम के अन्तर्गत रखा जाता है। विधवा पेंशन कार्यक्रम के अन्तर्गत वही विधवा महिलाएं आवेदन कर सकती है जो गरीबी रेखा के नीचे हो, निराश्रित हो तथा ग्राम प्रधान से संस्तुति प्राप्त कर ली हो अर्थात् गरीबी रेखा सम्बन्धित प्रमाण पत्र तथा अपनी निराश्रितता सम्बन्धि प्रमाण पत्र दे दी हो। प्रोबेशन आफिसर द्वारा भी संस्तुति प्राप्त हो जाय, इन सारी प्रक्रियाओं को पूरा करने के पश्चात् उन्हें बैंक में अपना खाता खोलना पड़ता है जिसके माध्यम से उन्हें पेंशन की राशि प्रदान की जाती है, यह राशि 1500 रूपये प्रतिमाह के हिसाब से हर 3 माह पर दी जाती है, वार्षिक राशि कुल 4500 रूपयें होती है।

3– वृद्धावस्था पेंशन – भारतीय संविधान की धारा 41 में उल्लिखित राज्य के नीति निर्देशक सिध्दान्तों के अन्तर्गत केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने वृध्दों की सहायता की दृष्टि से वृध्दावस्था पेंशन योजना 1957 में प्रारम्भ हुआ, इस योजना को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने वाली योजनाओं में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। भारतवर्ष में विभिन्नकाल में इनकी आयु में परिवर्तन होता, रहा वर्तमान समय में 60 वर्ष से ऊपर के आयु के वृध्दों को इस योजना का लाभ प्राप्त कराने के लिए आच्छादित किया गया है। शोधकत्ताा र्का अध्ययन विषय महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में है। अतरू शोधकत्ताा र्ने वृध्दावस्था पेंशन के अन्तर्गत केवल महिलाओं को ही अध्ययन हेतु न्यादर्श के रूप में चयन किया गया है। वृध्दावस्था पेंशन निराश्रित एवं गरीबी रेखा के नीचे के 60 वर्ष की आयु पूरी करने वाली महिलाओं के लिए है, इसके लिए प्रार्थना पत्र ग्राम पंचायत, तहसीलदार अथवा नगर महापालिकाओं से प्राप्त किया जाता है तथा उसकी आयु, स्वास्थ्य, आय, निवास, नागरिकता एवं अन्य शर्तों की समुचित जांच करके प्रदेश के श्रम आयुक्त को अपनी संस्तुति पेश करते है। इसके अन्तर्गत वृध्दा को बैंक में अपना खाता खुलवाना होता है, जिसके माध्यम से उन्हें वह राशि प्राप्त होती है। वृध्दावस्था पेंशन 1000 रूपये प्रति माह के हिसाब से हर 3 माह पर दिया जाता है। यह सलाना राशि 3000 रूपयें होती है।

4. सुकन्या समृद्धि योजना – केन्द्रीय शासन की यह योजना बालिकाओं की विवाह और उच्च शिक्षा में मदद करने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार ने जनवरी 2022 में शुरू की है। इस योजना में बालिका के माता–पिता किसी भी राष्ट्रीय बैंक या पोस्ट ऑफिस में 250 रूपए से खाता खुलवा सकते हैं और यह बालिका वर्ष के होने तक किया जा सकता है और इस राशि का इस्तेमाल बालिका की शादी और शिक्षा में किया जा सकता है। इसमें केन्द्र सरकार 50 प्रतिशत योगदान देती है।

5. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम– देश के ग्रामीण क्षेत्रों में परिवारों की आजीविका की सुरक्षा को प्रत्येक ऐसे परिवारों को जिसके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक कार्य करने के लिये स्वेच्छा से आगे आते है, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में कम से कम सौ दिनों का गारण्टी मजदूरी नियोजन उपलब्ध कराकर रोजगार दिलाने सम्बन्धी अधिनियम। यह अधिनियम 2 फरवरी सन् 2006 को लागू हुआ था तथा इसका कार्यान्वयन कई चरण में किया गया था। प्रथम चरण में इसे देश के सर्वाधिक 200 पिछड़े जिलों में लागू किया गया था। सन् 2007–2008 में इसके दूसरे चरण में इसे देश के 130 और जिलों में लागू किया गया। उल्लेखनीय है कि जनपद महोबा को इस योजना के दूसरे चरण में शामिल किया गया है। 01 अप्रैल 2008 से शुरू इसके तीसरे चरण में इसे भारत के बाकी बचे सभी जिलों में अधिसूचित किया गया।

वर्तमान में महात्मा गांधी नरेगा के प्रभावी मजदूरी दर, योजना के लागू होने के पश्चात् से (2 फरवरी 2006) अब तक (2013–14) सात बार संशोधित किया जा चुका है। 1 अप्रैल 2013 में महात्मा गांधी नरेगा में मिलने वाली मजदूरी दर को उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (कृषि श्रमिक) से जोड़ दिया गया है। अर्थात महात्मा गांधी नरेगा के अन्तर्गत मिलने वाली मजदूरी उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (कृषि श्रमिक) के आधार पर दी जायेगी। उल्लेखनीय है कि महात्मा गांधी नरेगा के अन्तर्गत योजना के लागू होने से (2006–07) से अब तक (2013–14) में लगभग दो गुनी हो गयी है।

'विकसित भारत – जी राम जी' (VB–G RAM G) अधिनियम 1 जुलाई 2026 से पूरे देश में लागू कर दिया गया है. यह योजना मनरेगा (MGNREGA) का नया और उन्नत स्वरूप है, जिसके तहत ग्रामीण परिवारों को साल में 100 की रोजगार की गारंटी दी जा रही है. बजाय 125 दिनों रोजगार की गारंटी दी जा रही है।

दैनिक मजदूरी में बढ़ोतरीः न्यूनतम मजदूरी बढ़ाकर ₹300 प्रतिदिन कर दी गई है। इसके अलावा सभी राज्यों के लिए औसत दिहाड़ी बढ़ाकर लगभग ₹327.4 कर दी गई है।

तकनीक का उपयोगः कार्यस्थलों पर पारदर्शिता और निगरानी के लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI), GPS और बायोमेट्रिक्स का उपयोग अनिवार्य किया गया है।

महिलाएँ सृष्टि का अभूतपूर्व तोहफा एवं बहुमूल्य संसाधन है। महिला के बिना सृष्टि की कल्पना भी नगण्य है। महिला न हो तो सृष्टि का निर्माण संभव नही है इसलिए नारी को सशक्त व जागरूक बनाकर ही समाज को सशक्त बनाया जा सकता है। सशक्त समाज से ही देश सशक्त बन सकता है सशक्तिकरण एक प्रकिया है जिसके माध्यम से जागरूकता, कार्यशीलता, बेहतर नियंत्रण के लिए प्रयास द्वारा व्यक्ति अपने विषय में निर्णय लेने के लिए समर्थ होता है इस दृष्टि से देखे तो नारी का सशक्तिकरण एक सर्वांगीण व बहुआयामी दृष्टिकोण है। यह राष्ट्र निर्माण की मुख्यधारा में महिलाओं की पर्याप्त व सक्रिय भागीदारी में विश्वास रखता है। एक राष्ट्र का सर्वांगीण व समरसता पूर्ण विकास तभी संभव है जब महिलाओं को समाज में उनका यथोचित स्थान व पद दियें जाए। उन्हे पुरूषों के साथ–साथ विकास की सहभागी माना जाए। सशक्तिकरण के अन्तर्गत महिलाएँ अपने आर्थिक स्वालंबन, राजनीतिक भागीदारी व सामाजिक विकास के लिए आवश्यक विभिन्न कारकों पर पहुँच व नियंत्रण प्राप्त करती है। अपनी शक्तियों व सम्भावनाओं, क्षमताओं व योग्यताओं तथा अधिकारों व जिम्मेदारों के प्रति जागरूक होती है। भारतीय समाज मे प्राचीनकाल से ही नारी को पुरूष के समान अधिकार प्रदान कियें गए है। उसे अपने जीवन की गरिमा को सुरक्षित रखने और सम्मानित जीवन जीने का पूर्ण अधिकार प्रदान किया गया है। यहाँ तक की शिक्षा और ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में भी नारी को भी अपनी प्रतिभा दिखाने और मुखरित करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की गई है। महाभारत काल के बाद नारी की स्थिति में गिरावट आई। उससे शिक्षा का मौलिक अधिकार छीन लिया गया। धीरे–धीरे नारी की स्थिति दयनीय एवं चिंताजनक होती गई। वर्तमान संदर्भमें देखे तो समय के साथ– साथ महिलाओं की परिस्थितियों में व्यापक बदलाव आ रहा है। समय करवट ले रहा है। वह हर क्षेत्र में अपनी एक अनोखी पहचान बना रही है। पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर रही है, यह आधुनिक युग की नारी का स्वरूप है। नारी समाज की प्रगति को आगे बढाने मे सहायक रही है। समाज का पूर्ण विकास तभी संभव है जब पुरुष और नारी का समान विकास हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. मीनाली निशांत सिंह, आधुनिकता एवं महिला उत्पीड़न
2. डॉ0 वीरेन्द्र सिंह यादव, इक्कीसवी सदी का महिला सशक्तिकरण : मिथक एवं यथार्थ
3. डॉ0 निशांत सिंह, भारतीय महिलाएँ एक सामाजिक अध्ययन
4. स्त्री विमर्श : साहित्यिक एवं व्यवहारिक सन्दर्भ – डॉ0 करूणा उभरे
5. प्रो. कमला प्रसाद, स्त्री : मुक्ति का सपना
6. आज का भारत – रजनी पामदत्त
7. प्रो0 अमिता सिंह, लिंग और समाज
8. सीमोन द बोउवार : द सेकेण्ड सेक्स (अनु. प्रभा खेतान स्त्री उपेक्षित) प्रकाशन हिन्दी पॉकेट बुक्स नई दिल्ली।
9. https://sarkaryojana.in/mahilao-ke-liye-sarkari-yojanaye
10 . https://sarkaryojana.in/pm-free-yojana

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

महिलाओं से बदलता सोनभद्र : NRLM से आत्मनिर्भरता

किरन कुमारी मौर्या
शोध छात्रा–समाजशास्त्र विभाग
डॉ० राममनोहर लोहिया पी०जी० कालेज
भैरव तालाब, वाराणसी
प्रो० बृजेश कुमार जायसवाल
समाजशास्त्र विभाग
डॉ० राममनोहर लोहिया पी०जी० कालेज
भैरव तालाब, वाराणसी

शोध सारांश :–

भारत की 65% आबादी गांवों में रहती है। भारत में ग्रामीण गरीबी बहुआयामी है अर्थात् यहां संसाधनों की कमी है। यहां अधिकतर व्यक्ति ऐसे हैं जिनके पास सीमित कौशल व सीमित संसाधन हैं। गरीबी हटाने और सतत विकास लक्ष्य (SDG-5) के 5वें लक्ष्य को पाने के लिए 3 जून 2011 को राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) की शुरूआत हुई। इस मिशन का मूलमंत्र है– "गरीब महिलाओं को संगठित करके आत्मनिर्भर बनाना।" NRLM ने स्वयं सहायता समूहों (SHGs) के माध्यम से महिलाओं को वित्तीय संसाधन, कौशल और सामुदायिक मंच दिया है जिसके परिणाम स्वरूप महिलाओं की आय 2–3 गुना बढ़ी है जिससे उनकी निर्णय क्षमता विकसित हुई व सामाजिक सम्मान मिला। इस प्रकार NRLM सिर्फ लक्ष्यपूर्ति का साधन नहीं बल्कि एक आंदोलन है।

मुख्य बिन्दु :– NRLM, SHG, महिला सशक्तीकरण, उद्यमिता, ग्रामीण विकास, आकांक्षी जिला।

प्रस्तावना :–

"जब महिला आगे बढ़ती है, तो परिवार, समाज और देश सब आगे बढ़ते हैं" यही दृष्टिकोण NRLM की आत्मा है। वर्तमान समय में ग्रामीण विकास मंत्रालय की दीनदयाल अंत्योदय योजना– राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) ने "संगठन से समृद्धि– किसी भी ग्रामीण महिला को पीछे न छोड़ें" नामक एक राष्ट्रीय अभियान शुरू किया है, जिसका उद्देश्य बड़ी संख्या में महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों (SHGs) में संगठित करना है।

NRLM की शुरूआत भारत सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा जून 2011 में की गई थी। इस योजना को पूर्ववर्ती स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (SGSY) का पुनर्गठन करके बनाया गया था। वर्ष 2015 में इसका नाम बदलकर दीनदयाल अंत्योदय योजना– राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) कर दिया गया। NRLM का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी को कम करना और महिलाओं को स्वयं सहायता समूहों (SHGs) से जोड़कर आत्मनिर्भर बनाना है। यह योजना केंद्र द्वारा संचालित है जिसे केंद्र व राज्य सरकारें मिलकर फंड देती हैं तथा विश्वबैंक का भी आंशिक समर्थन प्राप्त है। NRLM का क्रियान्वयन देश के सभी ग्रामीण गरीब परिवारों को चरणबद्ध तरीके से संगठित करने के लिए चलाई जा रही हैं।

NRLM के तीन मुख्य उद्देश्य हैं–

1. जोखिम कम करना।

2. रोजगार देना।
3. उद्यम शुरू करवाना।

DAY-NRLM के लिए बजट में प्रावधान :–

2024–25 में 37,500 करोड़ तथा 2025–26 में 41,250 करोड़ है जो 2024–25 की तुलना में 10% वृद्धि हुआ है।

NRLM से महिला सशक्तीकरण के 4 प्रमुख प्रभाव :–

1. आर्थिक सशक्तीकरण :–

NRLM से जुड़ने से पहले महिलाएं महाजन से 5% महीना ब्याज पर पैसा लेती थी अब स्वयं सहायता समूह से 7% सालाना ब्याज पर लोन मिलता है। वर्ष 2023 में NRLM से जुड़ी महिलाओं की आय औसतन 2.8 गुना बढ़ी है। ये महिलाएं बैंक सखी, पशुसखी, कृषि सखी, ड्रोन दीदी, लखपतिदीदी जैसी योजनाओं से जुड़कर अब स्वयं के रोजगार के साथ दूसरों को भी रोजगार प्रदान कर रही हैं।

2. सामाजिक सशक्तीकरण :–

स्वयं सहायता समूह की बैठकों के माध्यम से अब स्वास्थ्य, सफाई, शिक्षा, पोषण, नई नीतियों, नियमों पर खुलकर बात करती है। बाल–विवाह, मद्यपान, महामारीयों पर चर्चा कर सामाजिक समस्याओं को दूर करने का प्रयास करती हैं।

3. राजनीतिक सशक्तीकरण :–

2022 के आंकड़े बताते हैं कि NRLM की 1.2 लाख महिलाएं पंचायत प्रतिनिधि के रूप में चुनी जा चुकी हैं।

4. डिजिटल सशक्तीकरण :–

वर्तमान समय आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) व डिजिटल टेक्नोलॉजी का युग है, लेन–देन, क्रय–विक्रय ऑनलाइन माध्यम से हो रहा है। e-SHRAM और GeM पोर्टल पर स्वयं सहायता समूह के उत्पाद बेचे जा रहे हैं।

कुछ प्रमुख अध्ययन –

(1) NITI Aayog (2023) – 13 राज्यों के सर्वे में आय रु 3200 से रु 9100 हुई। 72% महिलाएं अब स्वयं बैंक जाती हैं।

(2) Giri Institute Lucknow (2023) – सोनभद्र में वन धन SHG में आदिवासी महिलाओं की आय 150% बढ़ी है।

(3) UNDP (2023) – NRLM को SDG-5 Gender Equality की Best Practice घोषित किया।

(4) दुर्गेश सिंह (2026) ने "राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के माध्यम से हाशिए पर पड़ी महिलाओं का सामाजिक आर्थिक विकास : पूर्वी उत्तर–प्रदेश का अध्ययन" शीर्षक में बताया कि NRLM विशेष रूप से सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में जहां पर्याप्त संरचनात्मक बाधाएं हैं गरीबी व हाशिए पर खड़ी महिलाओं के लिए वरदान है।

(5) अरुणिमा अग्रवाल (2025) ने अपने अध्ययन "मध्य प्रदेश के सागर जिले के विशेष संदर्भ में दीनदयाल अंत्योदय योजना का मूल्यांकन" में पाया कि DAY-NRLM जो आर्थिक समावेशी कौशल विकास और स्वरोजगार के अवसरों के माध्यम से ग्रामीण समुदायों विशेष रूप से महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए समर्पित हैं।

(6) जीवांतिका मौर्य (2025) ने अपने शोध अध्ययन "उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अन्तर्गत ग्रामीण महिलाओं के सशक्तीकरण का एक अध्ययन" में निष्कर्ष दिया कि NRLM स्वयं सहायता समूहों द्वारा आर्थिक स्वतंत्रता, आत्मविश्वास और सहयोगात्मक कार्यो को प्रोत्साहित करके ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(7) सरिता पाटिल (2025) ने अपने शोध "राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन और महिला विकास गोण्डा में सामाजिक कार्य का एक भावी अध्ययन" में पाया कि NRLM ने प्रशिक्षण के माध्यम से वित्तीय संसाधनों तक पहुंच का अवसर प्रदान किया है जिससे वे अपना खुद का व्यवसाय शुरू कर आर्थिक रूप से स्वतंत्र हुई हैं।

राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन – सोनभद्र के संदर्भ में –

2018 में NITI Aayog ने सोनभद्र को देश के 112 आकांक्षी जिलों में शामिल किया इसका मकसद था – शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, कृषि और वित्तीय समावेशन में तेजी से सुधार करना। सोनभद्र में SC व ST जनसंख्या 50 प्रतिशत होने के साथ–साथ पहाड़ी और जंगली क्षेत्र होने से कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि में पिछड़ापन बना हुआ है। इस क्षेत्र के पिछड़ेपन का एक अन्य मुख्य कारण यहां रोजगार के साधन का न होना है। युवा तथा वयस्क रोजगार की तलाश में बहुसंख्या में दूसरे राज्यों में निकल जाते हैं और महिलाएं आश्रितता के रूप बेरोजगार बन गृहणी के रूप में रहती है। वर्तमान में आकांक्षी जिला सोनभद्र में बदलाव आने शुरू हो गए हैं। इस बदलाव का सबसे बड़ा कारण दीनदयाल अंत्योदय योजना – राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (DAY-NRLM) है। सोनभद्र में NRLM ने ग्रामीण गरीब महिलाओं को 'लाभार्थी से उद्यमी' बना दिया।

सोनभद्र में NRLM का शुभारंभ 1 जुलाई 2013 से किया गया है, जिसके अन्तर्गत अनन्यतः (Exclusively) महिला स्वयं सहायता समूह का गठन, पुनर्गठन का कार्य एवं लाभान्वीकरण कराया जाता है। प्रत्येक महिला स्वयं सहायता समूह में कम से कम 70% सदस्य SECC सूची/PIP प्रक्रिया के तहत चिन्हित परिवारों को जोड़कर समूह बनाया जाता है। जनपद सोनभद्र के समस्त विकास खण्ड को इंटेंसिव विकास खण्ड के रूप में चयनित किया गया हैं।

- **समूह गठन –** ICRP एवं मिशन के स्टाफ के द्वारा ग्राम स्तर पर ड्राईव के माध्यम से SECC सूची में शामिल परिवारों/PIP प्रक्रिया के तहत चिन्हित परिवारों में से एक परिवार से एक सदस्य को जोड़ते हुए 10 से 20 सदस्य को शामिल कर समूह गठन किया जाता हैं।
- **रिवॉल्विंग फण्ड (RF) –** समूह गठन के 3 माह उपरान्त पंच सूत्र का पालन करने वाले समूहों को धनराशि रू० 3000 प्रति समूह की दर से रिवॉल्विंग फण्ड दिया जाता हैं। इस धनराशि का उपयोग कर समूह की सदस्य आपस में आंतरिक लेन–देन के माध्यम से अपनी आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। यह धनराशि समूह सदस्यों को पुनः समूह में वापस करना होता हैं।
- **कम्युनिटी इन्वेस्टमेन्ट फण्ड (CIF) –** समूह गठन के 6 माह उपरान्त रिवॉल्विंग फण्ड प्राप्त समूहों को माइक्रो क्रेडिट प्लान बनाकर सक्रिय स्वयं सहायता समूहों को कम्युनिटी इन्वेस्टमेन्ट फण्ड (CIF) धनराशि रू० 15000 प्रति समूह की दर से ग्राम संगठन/समूह के खाते में दिया जाता हैं। इस धनराशि का प्रयोग समूह की सदस्य अपनी आजीविका संवर्धन के लिए आप सृजक गतिविधियों को बढ़ाने हेतु उपयोग करती हैं।
- **कैस क्रेडिट लिंकेज (CCL) –** स्वयं सहायता समूह की महिलाओं को बैंक से समन्वय कर कम ब्याज दर पर 20 लाख रुपये तक सी० सी० लिमिट क्रैण दिलाकर उन्हें रोजगार से जोड़ा जाता हैं।
- **ग्राम संगठन (VO) –** समूह गठन के 6 माह उपरांत प्रत्येक गांव में 05 से 12 स्वयं सहायता समूह को मिलाकर ग्राम संगठन का गठन किया जाता हैं।
- **वी०ओ० स्टार्टअप (VO-Startup) –** ग्राम संगठन का खाता खुलने के उपरान्त रु० 75000 प्रति ग्राम संगठन के कार्यालय स्थापना एवं अन्य व्यय के लिए दिया जाता हैं।
- **क्लस्टर लेवल फेडरेशन (CLF) –** प्रत्येक विकास खण्ड में 04 क्लस्टर है। प्रत्येक क्लस्टर में 01 क्लस्टर लेवल फेडरेशन (संकुल स्तरीय संघ) का गठन किया गया है।
- **क्लस्टर लेवल फेडरेशन (CLF Startup) –** यह धनराशि क्लस्टर लेवल फेडरेसन का खाता खुलने के उपरान्त, रू0 350000.00 प्रति सी.एल.एफ. कार्यालय स्थापना एवं अन्य व्यय के लिए दिया जाता है।
- **आजीविका निवेश निधि (LH-Fund) –** प्रत्येक ग्राम संगठन को समूह सदस्यों की आजीविका को बढ़ाने के लिए रू0 200000.00 प्रति ग्राम संगठन कि दर से दिया जाता है।
- **टेक होम राशन (THR) –** जनपद में 07 टी0एच0आर0 प्लांट की स्थापना मिशन के द्वारा कराया गया है, जहां पर महिलाओं के द्वारा पोषाहार बनाकर जनपद के आंगनवाड़ी केन्द्रों पर वितरित किया जाता है।

State	District	Cadre Vertical	Cadres
Uttar Pradesh	Sonabhadra	Financial Inclusion	1023
Uttar Pradesh	Sonabhadra	Institution Building	1439
Uttar Pradesh	Sonabhadra	Livelihoods- Farm	611
Uttar Pradesh	Sonabhadra	Livelihoods- Non Farm	2437
Uttar Pradesh	Sonabhadra	Professionals in CBO	250
Uttar Pradesh	Sonabhadra	SISD-FNHW	86
Uttar Pradesh	Sonabhadra	SISD-Gender	114
Total			**5960**

स्रोत–NRLM वेबसाइट

S.No.	Block	Total (Active) - SHG	Total (Active) - Member	Approved (By BPM) - SHG	Approved (By BPM) - Member	Migrated and LokOS Profiles - Pending (With BPM) - SHG	Migrated and LokOS Profiles - Pending (With BPM) - Member	Migrated and LokOS Profiles - Rejected (By BPM) - SHG	Migrated and LokOS Profiles - Rejected (By BPM) - Member	Balance (With BK and Unmapped) - SHG	Balance (With BK and Unmapped) - Member
	Total	**16,110**	**1,80,007**	**10,373**	**1,06,395**	**74**	**628**	**429**	**19,752**	**5,234**	**53,232**
1	BABHANI	1,292	13,940	935	9,491	5	56	35	1,031	317	3,362
2	CHATARA	1,293	13,432	1,045	9,940	4	20	11	587	233	2,885
3	CHOPAN	1,819	20,384	1,221	12,884	1	0	29	993	568	6,507
4	DUDDHI	1,661	19,550	900	9,533	25	243	45	2,917	691	6,857
5	GHORAWAL	1,915	20,608	1,192	13,369	4	34	34	1,633	685	5,572
6	KARMA	1,338	14,406	1,081	10,910	1	10	8	1,206	248	2,280
7	KONE	1,542	19,266	632	5,623	2	3	192	6,978	716	6,662
8	MYORPUR	2,211	24,946	1,130	12,005	17	127	38	1,865	1,026	10,949
9	NAGAWA	1,293	14,402	991	10,374	3	33	5	1,189	294	2,806
10	ROBERTSGANJ	1,746	19,073	1,246	12,266	12	102	32	1,353	456	5,352

सोनभद्र में कुल 10 ब्लॉक हैः– राबर्ट्सगंज, घोरावल, चोपन, बभनी, दुद्धी, नगवां, म्योरपुर, चतरा, कोन, करमा। जिनमें बभनी, म्योरपुर, दुद्धी, कोन 4 ब्लॉक नक्सल प्रभावित हैं। बभनी, म्योरपुर, दुद्धी में ST आबादी अधिक है। यहां NRLM द्वारा वन धन केन्द्र और लखपति दीदी योजना पर सबसे ज्यादा काम हो रहा हैं। जिले में NRLM की महिलाएं मुर्गी पालन, ड्रैगन फ्रूट की खेती, मछली पालन, बकरी पालन, पशुपालन, बांस की टोकरी व बांस के मुरब्बे, झालर, हरे के चूर्ण बनाना, मिलेट्स (श्री अन्न) से हर्बल बिस्कुट बनाना, हर्बल साबुन, हस्तशिल्प वस्तुए, आंवले की लड्डू, बकरी के दूध से साबुन बनाना, शहद, मिंट फूड, मशरूम व फूल की खेती को करने को बढ़ावा दिया जा रहा हैं।

जिले में ज्यादातर आबादी जंगल व कृषि के बारिश पर निर्भर है। यहाँ बिचौलियों द्वारा शोषण अधिक होता है। NRLM के वन धन योजना के अंतर्गत 124 वन धन केन्द्र की स्थापना की गई। दुद्धी में जय अम्बे आजीविका स्वयं सहायता समूह द्वारा महुआ की लड्डू और चिरौंजी से बर्फी बनाकर सालाना 18 लाख कमाती है। राबर्ट्सगंज ब्लॉक में संजु कुशवाहा के नेतृत्व में बजरंगबली आजीविका स्वयं सहायता समूह ने बकरी के दूध से साबुन निर्माण कर अच्छा मुनाफा पाया है। राबर्ट्सगंज ब्लॉक के मानपुर की सावित्री प्रजापति ने अण्डे

का उत्पादन कर आजीविका अर्जित किया हैं। बभनी और घोरावल में 2000 से अधिक स्वयं सहायता समूह की महिलाएं बकरी–मुर्गी पालन में लगी है जिनकी आय 6 हजार से बढ़कर 15 हजार महीना हुआ हैं। डिजिटल सखी के रूप में 600 महिलाएं गांव में UPI आधार पेमेंट सिख रही है, म्योरपुर की स्वयं सहायता समूह में 3 महीने में 22 बाल विवाह रुकवाकर समाज में बुराइयों को दुर करने का कार्य किया है। घरेलू हिंसा के खिलाफ भी आवाज उठाने वाला स्वयं सहायता समूह मंच बन रहा हैं। राजनीतिक दृष्टिकोण से सोनभद्र में 18 ग्राम प्रधान, 65 बीडीसी और 4 जिला पंचायत सदस्य स्वयं सहायता समूह से निकली हैं। 2019 में म्योरपुर ब्लॉक की स्वयं सहायता समूह की 12 आदिवासी महिलाओं ने 100–100 रुपये की बचत शुरू की। NRLM से 10 लाख का लोन लेकर फूड प्रोसेसिंग युनिट लगाई जिनका टर्नओवर 14 लाख है। हर प्रत्येक महिला की आय 1.1 लाख वार्षिक है। म्योरपुर ब्लॉक में जहाँ पहले महिलाएं तेन्दु पत्ता 40 रु में बेचती थी वही समूह से जुड़कर उनके उत्पाद बनाकर 120 रुपये में बिना बिचौलियों के हस्तक्षेप के स्वयं बेचती है और आजीविका कमाती हैं। आर्थिक संदर्भ से देखा जाए तो सोनभद्र जिले में 2018 में बैंक से 35% महिलाएं जुड़ी थी वही वर्तमान में 92% जुड़ गई है। औसतन स्वयं सहायता समूह परिवार की आय 4500 से बढ़कर 1.1 लाख हो गई है अब तक 2840 महिलाएं लखपति दीदी योजना से लाभांवित हुई है।

सोनभद्र में NRLM की समस्याएं :–

सोनभद्र एक पहाड़ी क्षेत्र हैं जो वास्तव में चुनौतियों से भरा हुआ होता हैं। कहीं सीढ़ीनुमा खेत, कहीं पथरीली तो कहीं अनुपजाऊ जमीन, कहीं जंगल तो कहीं पानी की कमी इन भौगोलिक समस्याओं के साथ अन्य समस्याएं हैं–

- सोनभद्र का 60% हिस्सा पहाड़ी व जंगली है जो भौगोलिक व सुरक्षा संबंधी समस्याओं से घिरा है। कुछ क्षेत्र दुर्गम तो कहीं नेटवर्क व रास्ते नहीं है। आदिवासी व नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में कच्चे रास्तों से योजनाओ व अधिकारियों की पहुंच से दूर रहती है। यहाँ रोजगार की तलाश में युवा जनसंख्या प्रवासी हो जाते हैं।
- पितृसत्तात्मक सोच महिलाओं को घर की चारदिवारी से बाहर निकलने में बाधक हैं। महिलाएं स्वयं सहायता समूह में पैसे जमा करने नहीं जाती, घर के किसी सदस्य द्वारा पैसे जमा किया जाता हैं। साथ ही बैंक सखी द्वारा निकाले पैसों भी पुरुष ही ले जाते है। घर की जिम्मेदारियों के चलते महिलाएं समूह की बैठकों, बही खातों को बनाने व ट्रेनिंगों में भाग नही ले पाती। आपसी मनमुटाव व समय पर किस्त न जमा करपाना भी समस्याएं है।
- NRLM से जुड़ी 50% महिलाएं अशिक्षित है या कम शिक्षित है। वर्तमान में डिजिटल साक्षरता की अनिवार्यता बन गई है क्योंकि स्मार्टफोन, OTP, ऑनलाइन पेमेंट, ऑनलाइन कार्यक्रमों के साथ–साथ फ्रॉड की जानकारी भी आवश्यक है। DBT, BHIM, AePS ऐप्स की जानकारी के साथ वैल्यू एडिशन, पैकेजिंग, ब्रांडिंग, FSSAI लाइसेंस की पूर्ण जानकारी नहीं है।
- उत्पादों के ब्रांड ब्राण्ड न होने से बाजार एवं विपणन की समस्या होती हैं, मंडी भाव नहीं मिलता। GeM Portal, Amazon Saheli पर लिस्टिंग की समस्या है तथा अन्य जिलों की अपेक्षा ट्रांसपोर्ट लागत अधिक होती है जो एक समस्या है।
- NRLM के अधिकारियों की संख्या कम होने से कार्यक्र क्रियान्वयन पूर्ण रूपेण नही हो पा रहा है। साथ ही NRLM का कृषि विभाग, वन विभाग, बाल विकास एवं पुष्टाहार विभाग से समन्वय नही होने से योजनाएं सुचारू रूप से नही चलती हैं। योजनाएं शुरू तो हो जाती है किन्तु जल्द बन्द हो जाती हैं।

निष्कर्ष :–

विभिन्न समस्याओं के बावजूद आकांक्षी जिले के रूप मे सोनभद्र में NRLM योजना नहीं बल्कि सम्मान और आत्मनिर्भरता की एक नई कहानी हैं। चुनौतियों से भरे लोगों के जीवन को आर्थिक विकास की ओर ले जाने का सार्थक प्रयास हैं। बैंक लिंकेज, प्रशिक्षण और बाजार से जुड़ाव के कारण NRLM से जुड़ी महिलाओं की आय बिना जुड़ी महिलाओं की आय से ज्यादा हो गई है। NRLM केवल गरीबी उन्मूलन योजना नहीं है बल्कि यह ग्रामीण महिलाओं के जीवन मे गुणात्मक परिवर्तन का आन्दोलन है। इसने महिलाओं को लाभार्थी से उद्यमी, अनुयायी से नेता और आश्रित से आत्मनिर्भर बनने की ओर अग्रसर किया हैं।

सुझाव :–

सोनभद्र जिला आदिवासी बाहुल्य के साथ अति पिछड़ा जिला हैं। यहां NRLM द्वारा महिलाओं की प्रस्थिति उच्च करने के प्रयास किये जा रहे हैं। इस शोध विश्लेषण के सुझाव निम्नलिखित है–

1. सोनभद्र में NRLM द्वारा चल रही योजनाओं जैसे लखपति दीदी, बैंक सखी, वनधन योजना, कृषि सखी, दीदी हाट योजना को उचित ट्रेनिंग के साथ उनके पूर्णरुपेण क्रियान्वयन पर जोर दिया जाए।
2. सरकार द्वारा NRLM के समूह की महिलाओं के सभी उत्पाद को ब्राण्ड व बाजार उपलब्ध कराया जाए।
3. महिलाओं को उचित गुणवत्ता युक्त सस्ते दाम वाली तथा सोलर से चलने वाली मशीने उपलब्ध कराई जाए।
4. महिलाओं को स्थानीय उपलब्धता वाली जैविक उत्पाद के उत्पादन व विपणन के लिए प्रोत्साहित किया जाए।

संदर्भ सूची

- योजना, अगस्त (2023)
- कुरुक्षेत्र योजना, मई (2022)
- योजना, अक्टूबर (2021)
- कुरुक्षेत्र, अगस्त (2022)
- कुरुक्षेत्र, दिसम्बर (2025)
- नीति आयोग रिपोर्ट (2023)
- गिरी इंस्टीट्यूट लखनऊ रिपोर्ट (2023)
- UNDP रिपोर्ट (2023)
- सिंह, दुर्गेश (2026) 'राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के माध्यम से हाशिए पर पड़ी महिलाओं का सामाजिक आर्थिक विकासः पूर्वी उत्तर–प्रदेश का अध्ययन'
- अग्रवाल, अरुणिमा (2025) 'मध्य प्रदेश के सागर जिले के विशेष संदर्भ में दीनदयाल अंत्योदय योजना का मूल्यांकन'
- मौर्य, जीवंतिका (2025) 'उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जिले में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन के अंतर्गत ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण का एक अध्ययन'
- पाटिल, सरिता (2025) 'राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन और महिला विकास गोवा में सामाजिक कार्य का एक भावी अध्ययन'
- http//nrlm.gov.in
- Meta AI

Journal of Socio-Educational & Cultural Research
International Journal of Arts & Social Sciences
Published by Srijan Research Foundation, Varanasi India
Vol.12, N. 25, June 2026
www.jsecrjournal.in

प्रेमचन्द का कथा साहित्य : स्त्री पराधीनता के चित्र

डॉ0 संदीप कुमार कश्यप
एम. ए., पी.–एच.डी. हिन्दी

सारांश

प्रेमचन्द भारत की स्वाधीनता आन्दोलन के लेखक हैं। उनका कथा साहित्य उस समय लिखा जा रहा था जिस समय हिन्दुस्तान की आजादी के लिए आन्दोलन हो रहे थे। अंग्रेजों की सत्ता के अधीन देशी राजे थे, सामन्त और जमींदार थे जिनके द्वारा किसान शोषित हो रहे थे। किसानों के शोषण में स्त्रियाँ भी थीं। ये नारियाँ या तो मध्य वर्ग की थीं अर्थात् दलित वर्ग की थीं। प्रेमचन्द के रचनात्मक सरोकारों में किसानों की ही भाँति नारियाँ भी अपने समग्र जीवन संदर्भों के साथ उनके रचनाकाल के प्रारंभिक दौर से ही मुख्य भूमिका में रही हैं। किसानों के साथ स्त्री और दलित वर्ग के लोग भी अपने जीवन के तमाम सामाजिक–आर्थिक संदर्भों के साथ प्रेमचन्द के उपन्यासों और कहानियों में उपस्थित हैं। ये सभी पात्र भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के बड़े और महान् लोगों के साथ जुड़कर सामने आए हैं। नवजागरण के मनीषियों ने स्त्री की दुर्गति को अपने घर और परिवार में देखा था। उसी का बढ़ा हुआ रूप जब उन्होंने समाज और बाहरी जीवन में देखा, तो स्त्री–जीवन में सुधार का नारा बुलन्द किया। भारतीय जागरण के नायकों ने सती–प्रथा, बाल–विवाह आदि का विरोध किया और विधवा विवाह का समर्थन किया। प्रेमचन्द्र ने स्त्रियों की समस्याओं को किसी वर्ग विशेष तक ही सीमित नहीं रखा।

बीज शब्द : सामाजिक–आर्थिक, नवजागरण, दलित वर्ग, पराधीनता, पराकाष्ठा, आर्थिक।

प्रेमचन्द ने अपने कथासाहित्य में स्त्रियों की मार्मिक दशा का चित्रण किया है। उनके उपन्यास हो या उनकी कहानियाँ इन सबमें स्त्री का पराधीन रूप चित्रित हुआ है। गोदान प्रेमचन्द्र का महाकाव्यात्मक उपन्यास है जिसमें धनिया, झुनिया, सीलिया, मिस मालती, गोविन्दी, रूपा और सोना तथा दुलारी सधुआइन आदि नारी–चरित्र चित्रित हुए है। होरी की पत्नी धनिया है जो एक किसामिन के रूप में चित्रित है। किसान होते हुए भी धनिया आर्थिक कारणों से पराधीन है। गाय के जहर से मरने पर पुलिस आती है तो होरी रूपया देकर उसे शान्त करना चाहता है। धनिया इसका विरोध करती है, क्योंकि इसके लिए होरी कहीं से रूपये कर्ज लेने का प्रयास करता है। यहाँ धनिया आर्थिक कारणों से कष्ट में होकर भी पुलिस से उलझ जाती है और कहती है कि दारोगा घर की तलाशी लेना चाहे तो ले सकता है। धनिया की आर्थिक दशा का चित्र उस समय उभरकर सामने आता है जिस समय वह अपनी कमाई की सारी पूँजी बीस आने पैसे पंडित के हाथ में रखकर होरी का गोदान करने को कहती है– ''महाराज, घर में न गाय है, न बछिया, न पैसा। यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है। और पछाड़ खा कर गिर पड़ी।''[i] यह धनिया की आर्थिक दशा का विभत्स रूप है और नारी की आर्थिक पराधीनता की पराकाष्ठा है। नारी पराधीन है जब वह जानवर की तरह किसी भी पुरुष के हाथ बाँध दी जाती है। निर्मला उपन्यास में दहेज प्रथा के कारण निर्मला अधेड़ तोताराम के साथ ब्याह दी जाती है जबकि तोताराम तीन बेटों का बाप है। यह निर्मला की पराधीनता है जो सामाजिक कुप्रथा और बुरे रीति–रिवाज के कारण समाज में पनपता है। नारी की पराधीनता का ज्वलन्त रूप निर्मला उपन्यास के अंत

में देखने को मिलता है– ''तीन दिनों तक निर्मला की आँखों से आँसुओं की धारा बहती रही। वह न किसी से बोलती थी, न किसी की ओर देखती थी और न किसी की कुछ सुनती थी। बस, रोए चली जाती थी। उस वेदना का कौन अनुमान कर सकता है? चौथे दिन संध्या समय वह विपत्ति–कथा समाप्त हो गई।..... मुहल्ले के लोग जमा हो गये। लाश बाहर निकाली गई। कौन दाह करेगा, यह प्रश्न उठा। लोग चिन्ता में थे कि सहसा एक बूढ़ा पथिक एक बकुचा लटकाए आकर खड़ा हो गया। यह मुंशी तोताराम थे।''[ii] निर्मला की वेदना सारे स्त्री–समाज की वेदना है जो सारे देश में दहेज–प्रथा और बेमेल विवाह के कारण देखने को मिलता है। स्त्री पराधीनता का स्वरूप 'सेवासदन' उपन्यास में भी देखने को मिलता है। निर्मला की तरह सेवासदन उपन्यास की सुमन भी दहेज–प्रथा और बेमेल विवाह के कारण बाद में चलकर वेश्या–जीवन की ओर उन्मुख होती है। सुमन वेश्या बनकर भी अपने अंतिम दिनों में, पीड़ित स्त्री जाति का उद्धार करने के लिए सेवा का मार्ग ग्रहण कर सेवासदन का संचालन करती है। यह नारी जाति की पराधीनता का वह चित्र है जहाँ पीड़ित नारी की दशा के सुधार का कार्य भी होता है। सुमन द्वारा संचालित सेवासदन की व्यवस्था देखकर ''सुभद्रा ने हँस कर कहा– बाईजी, मुझे लज्जित न करो। मैंने तो जो कुछ देखा है, उसी से चकित हो रही हूँ, तुम्हें सलाह क्या दूँगी? बस इतना ही कह सरती हूँ कि ऐसा अच्छा प्रबंध विधवा–आश्रम का भी नहीं है।''[iii]

प्रेमचन्द्र के अन्य उपन्यासों में स्त्री पराधीनता के चित्र मिलते हैं। रंगभूमि में स्त्री–पुरुष के प्रेम की पराधीनता का चित्रण मिलता है जहाँ धर्म बाधक बनता है। कुँवर भरतसिंह और रानी जाह्नवी के पुत्र विनय का प्रेमप्रसंग जॉन सेवक की पुत्री सोफिया से चलता है जिसमें धर्म बाधक बनता है। यहाँ धर्म को स्त्री–पुरुष के प्रेम में बाधक दिखाते हुए भी लेखक ने अंत में दिखाया है कि दोनों की प्रेम वासना पर आधारित नहीं है। साथ ही रानी जाह्नवी धर्म के आधार पर बाधक बनती हैं, फिर भी जब उन्हें पता चलता है कि दोनों का प्रेम विनय के स्वदेशानुराग में बाधक नहीं है तो रानी गैरधर्म के प्रेम को मान्यता देती है। प्रेमचन्द ने अपने प्रारंभ में लिखे प्रतिज्ञा नामक उपन्यास में विधवा–विवाह की समस्या को उठाया है और उसका समाधान भी दिया है। अमरनाथ के भाषण को सुनकर बाबू अमृतराय जो प्रेमा से प्रेम करते थे, अपने मन को बदल देते हैं और विधवा–विवाह हेतु तैयार हो जाते हैं। अगरनाथ कहते हैं– ''आप लोगों में कितने महाशय ऐसे हैं, जो वैधव्य की भँवर में पड़ी हुई अबलाओं के साथ अपने कर्तव्य का पालन करने का साहस रखते हैं? कृपया वे हाथ उठाए रहें। अरे यह क्या? ..... वह देखिए, एक हाथ अभी तक उठा हुआ है। वही एक हाथ युवक मंडली के ताज की रक्षा कर रहा है। सबकी आँखें उसी तरफ फिर गई। अरे यह तो बाबू अमृत राय हैं।''[iv] यह विधवा नारियों की पराधीनता का स्वरूप है जिसे अमरनाथ जैसे समाज के लोग उजागर कर समाधान करने का प्रयास करते हैं। यों अमृत राय और प्रेमा दोनों एक–दूसरे से प्रेम करते थे, किंतु उस प्रेम को भी भुलाकर अमृतराय विधवा विवाह की ओर उन्मुख होते हैं। एक ओर यह विधवा नारी की समस्या का समाधान है तो दूसरी ओर प्रेम करने वाली प्रेमा की परवशता की ओर भी ध्यान देना चाहिए। यह प्रेम करने वाली स्त्री की पराधीनता का भी चित्र हो सकता है। प्रेमाश्रम नामक उपन्यास में लेखक ने श्रद्धा नामक नारी की समस्या को उठाया है। प्रारंभ में मुद्रा का अपने पति प्रेमशंकर से मनमुटाव होता है, किंतु बाद में वह अपने पति की सेवा में लग जाती है। यह भारतीय नारी की पराधीन दशा का रूप है जो प्रारंभ में पति से दूर रहती है परन्तु बाद में स्वयं श्रद्धा का रूप बनकर पति से अनुराग करने लगती है। इसी तरह 'वरदान' उपन्यास में भी नारी की पराधीनता के चित्र सामने आते हैं। विरजन नामक नारी की विवाह एक आवारा और अशिक्षित युवक कमलाचरण से होता है। अपने व्यवलर के कारण कमलाचरण ट्रेन से कटकर मर जाता है और विरजन विधवा हो जाती है। इस उपन्यास में विरजन जैसी नारी की विवशता का चित्र चित्रित हुआ है यहाँ नारी की

पराधीनता का ऐसा चित्र प्रेमचन्द ने उकेरा है जिसमें उसके सास–ससुर भी मृत्यु को प्राप्त होकर उसे अकेला कर देते हैं।

प्रेमचन्द के उपन्यासों में स्त्री चरित्रों की परवशता का उत्कृष्ट स्वरूप गोदान उपन्यास में देखने को मिलता है। पराधीन स्त्रियों के चित्र सेवासदन उपन्यास में सुमन, वरदान उपन्यास में विरजन, प्रेमाश्रम उपन्यास में श्रद्धा, निर्मला उपन्यास में स्वयं निर्मला आदि नारियों के चरित्रांकन में उपलब्ध होते हैं। किंतु गोदान में नारी की पराधीनता की विविधता मिलती है। आर्थिक कारणों से होरी की पत्नी धनिया की पराधीनता सामने आती है, तो प्रेम प्रसंग को लेकर गोबर को प्रेमिका झुनिया जब हार–थककर होरी के घर के सामने आकर बैठ जाती है। होरी के पूछने पर धनिया जो उत्तर–प्रति उत्तर करती है वह स्त्री की पराधीनता का जलता हुआ सामाजिक–आग का गोला है– होरी के कहने पर– ''गोबर को भेज कर मुझे क्यों नहीं बुला लिया?

धनिया ने कोई उत्तर न दिया। मड़ैया में आकर पुआल पर बैठती हुई बोली– गोबर ने तो मुँह में कालिख लगा दी, उसकी करनी क्या पूछते हो। जिस बात को डरती थी, वह होकर रही।

''क्या हुआ क्या? किसी से मारपीट कर बैठा?

'अब मैं क्या जानूँ, क्या कर बैठा, चलकर पूछो उसी राँड़से'

'किस राँड से? क्या कहती है तू? बौर तो नहीं गई?'

'हाँ, बौरा क्यों न जाऊँगी! बात ही ऐसी हुई है कि छाती दुगुनी हो जाए!'

होरी के मन में प्रकाश की एक लंबी रेखा ने प्रवेश किया।

'साफ साफ क्यों नहीं कहती। किस रॉड़ को कह रही है?'

'उसी झुनिया को, और किस को!'

'तो झुनिया क्या यहाँ आई है?'

'और कहाँ जाती, पूछता कौन?'

'गोबर क्या घर में नहीं है?'

गोबर का कहीं पता नहीं। जाने कहाँ भाग गया। इसे पाँच महीने का पेट हैं।''[v]

यह नारी की पराधीनता का वह स्वरूप है जो भारतीय सामाजिक जीवन में सर्वाधिक नीच कर्म माना जाता है। झुनिया का बिना शादी के ही गर्भवती हो जाना सामान्य बात नहीं थी। वह बेसहारा होकर होरी के घर अर्थात् अपने अविवाहित पति गोबर के घर आती है जहाँ धनिया का सहारा मिलता है। यहाँ झुनिया की बेबसी का चित्र स्पष्ट है तो उसके साथ ही धनिया की भी चिन्ता नारी–पराधीनता के रूप को दर्शाती है। धनिया होरी से कहती है– ''मुझे तो इस कलमुँही झुनिया की चिंता है कि इसे क्या करूँ? अपने घर में तो छनभर भी न रहने दूँगी।..... पेट न रहता तो अभी बात न खुलती।''[अप] प्रेमचन्द की नारी–जाति की पराधीनता की यह झाँकी अद्‌भुत है। गाँव के युवक–युवतियों की ताक–झाँक कब गम्भीर मोड़ ले लेगी, उसे लेखक ने बाखूबी गोदान उपन्यास में दिखाया है। झुनिया इस कारण बेबस है तो गोबर के कारण धनिया बेबस है। सामाजिक इज्जत की बात सोचकर धनिया और भी परेशान हो जाती है। लोगों का ताना मारने का भय भी धनिया को परेशान करता है। यह सामाजिक जीवन की ऐसी स्थिति होती है जिसमें विशेषकर स्त्रियों का जीवन दूभर हो जाता है।

प्रेमचन्द की कहानियों में उपन्यासों की तरह ही स्त्री जाति की पराधीनता के चित्र मिलते हैं। विभिन्न वर्गों से आई हुई नारियाँ अपने कार्यों अथवा अपनी आर्थिक दशाओं के कारण परवश दिखाई पड़ती हैं। 'ठाकुर का कुआँ' नामक में गंगी की बेबसी दलित वर्ग की नारी होने के कारण है। वह हरिजन बस्ती की है, इसलिए ठाकुर के कुएँ से पानी नहीं भर सकती। उसका पति जोखू बीमार है, पानी के लिए परेशान है। उसके पास जो पानी है वह बदबू दे रहा है। गंगी अंधेरे में रात में ठाकुर के कुएँ में पानी भरने जाते जाती है। ठाकुर के

दरवाजा उसी समय खुल जाता है और गंगी का घड़ा हाथ से छूट जाता है धड़ाम से ध्वनि होती है और गंगी भाग खड़ी होती है। स्त्री जाति की यह पराधीनता आर्थिक तो है ही, साथ ही दलित वर्ग की नारी होने के कारण भी उसकी पराधीनता सामने आती है। 'बूंढ़ी काकी' नामक कहानी में एक विधवा और बुढ़ी नारी की बेबसी का चित्रण हुआ है। निःसंतान काकी अपनी सारी जमीन अपने भतीजे को लिख देती है। किंतु भतीजा का परिवार काकी का ध्यान नहीं रखता है। डॉ0 शिवकुमार मिश्र में लिखा है– ''प्रेमचन्द ने केन्द्रीय संवेदना के रूप में इस कहानी में वृद्धत्व को रेखांकित किया है। इस सामान्य धारणा के विपरीत कि एक परिवारों की तुलना में बुढ़ापा संयुक्त परिवारों में अधिक सुरक्षित है, प्रेमचन्द इस समस्या को आज के मनुष्य की लाभ–लोभ प्रेरित मानसिकता से जोड़ते हैं और यह बताना चाहते हैं कि आज के आदमी की लाभ–लोभ प्रेणित मानसिकता और स्वार्थ के चलते किस प्रकार मानवीय सामाजिक नाते–रिश्ते ही नहीं क्षत–विक्षत हुए हैं, पारिवारिक नाते–रिश्ते और रक्त–संबंध तक उसकी लपेट में नहीं बचे हैं।''[vii] बूढ़ी निःसंतान विधवा नारी की दशा का जो चित्र लेखक ने खींचा है वह अद्‌भुत है। अपने भतीजे बुद्धिराम और उसकी पत्नी रूपा के व्यवहार से काकी खिन्न तो होती हैं, किन्तु काकी की पराधीनता का चरम रूप उस समय देखने को मिलता है जिस समय वे जूठे पत्तलों पर खाने के लिए टूट पड़ती हैं– ''दीन, क्षुधातुर हतज्ञान बुढ़िया पत्तलों से पूड़ियों के टुकड़े चुन–चुन कर भक्षण करने लगी। ओह दही कितना स्वादिष्ट था, कचौड़ियाँ कितनी सलोनी, खस्ता कितने सुकोमल। काकी बुद्धिहीन होते हुए भी उतना जानती थी कि मैं वह काम कर रही हूँ, जो मुझे कदापि न करना चाहिए। मैं दूसरों की जुठी पत्तल चाट रही हूँ।''[viii] वृद्ध नारी की यह दुर्दशा समाज की कुत्सित मानसिकता का परिणाम है। लोग तत्काल मिलने वाले लाभ–हानि पर ही ध्यान देते हैं, और, जिसके कारण लाभ हो रहा है उसपर ध्यान नहीं देते हैं। यह समाज की अंधी और विवेकीन मानसिकता का द्योतक है।

कफन नामक कहानी में दलित वर्ग की नारी की दुर्दशा के माध्यम से स्त्री की विवशता का उल्लेख किया गया है। माधव की जवान बीबी बुधिया प्रसव वेदना से तड़प रही है, रह–रहकर उसके मुख से दिल हिलाने वाली आवाज निकलती थी जिसे सुनकर घीसू और माधव, कलेजा थाम लेते थे। जाड़े की रात थी और सारा गाँव अंधेरे में डूबा हुआ था। इधर बुधिया के दर्द को बाँधने वाला कोई नहीं था, उनका अपना पति अथवा ससुर भी उसके लिए कुछ भी नहीं कर पा रहा था। यह दलित नारी की पराधीनता का, दीनता का, असहाय अवस्था का स्वरूप या जिसे प्रेमचन्द ने चित्रित किया है।''[घग] नारी की परवशता का बड़ा ही सटीक चित्रण प्रेमचन्द ने अपनी अनेक कहानियों में किया है। स्त्री समाज की आधी आबादी है, परन्तु जीवन की सारी पराधीनता नारी के ही भाग्य में लिखी होती है। इसका कारण यह है कि नारी भारतीय जीवन की रीढ़ होती है और रीढ़ के कमजोर होते ही समाज और परिवार का संतुलन बिगड़ने लगता है। यह सामाजिक विडंबना 'बेटों वाली विधवा' नामक कहानी में देखने को मिलता है। पं0 अयोध्यानाथ का संयुक्त परिवार है। उनके गुजरने पर उनकी पत्नी फूलमती अपने–चार बेटों और बेटी कुमुद को लेकर परिवार चलाने लगती हैं। विधवा होने के पूर्व वे घर की एक मात्र मालकिन थीं, किंतु पति के न रहने पर बेटे और बहुएँ दबंगई दिखाने लगती हैं। पं0 अयोध्यानाथ की तेरही में ही यह दबंगई शुरू हो जाती है। बेटे और बहुएँ अपने मन के अनुसार भोज करते हैं। बेटी का विवाह भी जैसे–तैसे होता है। फूलमती से वे सारे गहने भी झपट लेते हैं। अब तो फूलमती रात–दिन खटती है और बेटे–सुख की नींद सोते हैं। अंत में गंगाजल लाते समय वे फिसलकर नदी में डूब जाती हैं। स्त्री जीवन की विवशताओं और विडंबनाओं पर स्वार्थ एवं लाभ–लोभ–प्रेरित मानसिकता के चलते चले आ रहे पारिवारिक और मानवीय संबन्धों के ह्रास तथा अधःपतन पर आधारित यह प्रेमचन्द की 'बेटों वाली विधवा' नामक कहानी है जिसमें नारी की पराधीनता का जीवंत चित्र दिखने को मिलता है।[ग] इस कहानी के द्वारा लेखक ने संयुक्त परिवार के विघटन के रूप को भी दिखाया है जहाँ पति के रहने पर पूरा परिवार पत्नी के स्वामित्व के अधीन था और पति के गुजरते ही सब कुछ स्त्री की पराधीनता में बदल जाता

है। 'शांति' नामक कहानी में भी प्रेमचन्द ने नारी–जीवन की त्रासदी को व्यक्त किया है। लेखक इसमें स्त्री–जीवन की विवशताओं और विसंगतियों पर अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त करता है। शांति कहानी एक स्वाभिमानी नारी गोपा की कहानी है जो पति के गुजर जाने पर स्वाभिमान के साथ अपनी बेटी सुनीता को पालती है और बाद में धूमधाम से विवाह कर देती हैं। किन्तु सुनीता की संगति अपने पति के साथ नहीं बैठती है। वह पति के गलत रास्ते को स्वीकार न करके अपने जीवन को ही समाप्त कर लेती है। स्वाभिमानी माँ की बेटी स्वाभिमान से ही जीती है और अंत में वह अपने कारूणिक अंत को ही प्राप्त होती है। बेटी का कारूणिक अंत गोपा को झकझोरता जरूर है किन्तु गोपा भीतर से अपूर्व शांति का अनुभव करती है। वह बेटी की मौत को धैर्य से झेलती है। गोपा कहानी के 'मैं' पात्र से कहती है– 'हाँ और क्या! रोती यहाँ भी लेकिन तुमसे सच कहती हूँ, दिल से नहीं रोयी। न जाने कैसे आँसू निकल आये। मुझे तो सुन्नी की मौत से प्रसन्नता हुई। दुखिया अपनी मान–मर्यादा लिये संसार से विदा हो गयी, नहीं तो न जाने क्या–क्या देखना पड़ता। इसलिए और भी प्रसन्न हूँ कि उसने अपनी आन निभा दी। स्त्री को जीवन में प्यार न मिले, तो उसका अंत हो जाना ही अच्छा। तुमने सुन्नी की मुद्रा देखी थी, लोग कहते है, ऐसा जान पड़ता था– मुस्करा रही है।''[xi] भारतीय नारी की यह पीड़ा उसकी पराधीनता का ही रूप है। जिसमें वह दुखी और पराधीन होकर भी गर्व का अनुभव करती है। परवश होकर कष्ट झेलने से अच्छा है मृत्यु को वरण कर लेना, जहाँ शांति तो मिलेगी।

'स्वाभिमानी' नामक कहानी भी ग्रामीण परिवेश में स्त्री–जीवन की विवशताओं और बिडंबनाओं का एक आख्यान है। शिवदास के दो बेटे हैं बिरजू और मथुरा जिनका विवाह रामप्यारी और रामदुलारी से होता है। बिरजू के गुजर जाने पर रामप्यारी विधवा हो जाती है। शिवदास इस से आहत तो हुए, पर टूटे नहीं। उन्होंने भंडारे की चाभी रामप्यारी को थमा दिया। वह स्वामिनी बनकर मुखिया का दायित्व निभाने लगी कि घर खुशियों से भर उठा। समय के साथ शिवदास भी चल बसते है और मथुरा रामदुलारी एवं बच्चों के साथ परदेश चले आते हैं। रामप्यारी अकेले ही घर के नौकर जोखू के साथ खेत–खलिहान की जिम्मेदारी निभाती है। प्रेमचन्द ने कहानी को एक मनोवैज्ञानिक ढंग से खत्म किया है। कहानी के इस अंत में भी स्त्री की मानसिक पराधीनता की अभिव्यक्ति हुई है। जोखू और रामप्यारी में वार्तालाप होता है। स्वामिनी रामप्यारी जोखू से उसके विवाह के बारे में पूछती है। रामप्यारी उससे ठिठोली करती है कि वह अपनी सगाई क्यों नहीं कर लेता। ''जोखू शरमाता हुआ बोला– तुमने फिर वही बेबात की बात छेड़ दी, मालकिन! किससे सगाई कर लूँ यहाँ? मैं ऐसी मेहरिया लेकर क्या करूँगा, जो गहनों के लिए मेरी जान खाती रहे। .....प्यारी के कपोलों पर हलका–सा रंग छा गया। बोली– अच्छा, और क्या चाहते हो?

जोखू – मैं कहने लगूँगा, तो बिगड़ जावगी।

प्यारी की आँखों में लज्जा एक रेखा नजर आयी, बोली–की बात कहोगे, तो जरूर बिगडूँगी।

जोखू – तो मैं न कहूँगा।

प्यारी ने उसे पीछे की ओर ढकेलते हुए कहा– कहोगे कैसे न हीं, मैं कहला के छोडूँगी।

जोखू – मैं चाहता हूँ कि वह तुम्हारी तरह हो, ऐसी ही गंभीर हो, ऐसी ही बातचीत में चतुर हो, ऐसा ही अच्छा खाना पकाती हो, ऐसी ही किफायती हो, ऐसी ही हँस–मुख हो। बस, ऐसे औरत मिलेगी, तो करूँगा, नहीं इसी तरह पड़ा रहूँगा।

प्यारी का मुख लज्जा से आरक्त हो गया। उसने पीछे हटकर कहा– तुम बड़े नटखर हो! हँसी–हँसी में सब कुछ कह गये।''[xii] प्रेमचन्द यहीं पर कहानी का समापन करते हैं और नारी की उस पराधीनता को व्यक्त करते हैं जिसमें वह खुलकर अपने भीतरी मन की अभिलाषा को जाहिर नहीं कर पाती। कहानी के अंत पर डॉ0 शिवकुमार मिश्र की टिप्पणी है– ''कहानी अपनी व्यंजना के साथ यही समाप्त हो जाती है। स्त्री–जीवन की विवशताओं को, स्त्री के अपने चरित्र की गरिमा की पूरी तरह रक्षा करते हुए, स्त्रीत्व की पूरी मर्यादाओं

के साथ, अपनी अनेक, कहानियों में प्रेमचन्द्र ने बड़े यथार्थ संदर्भों में उभारा है। स्त्री के प्रति प्रेमचन्द के मन में कितना सम्मान था, स्त्री–जीवन की विवश्ताओं और विडंबनाओं से वे कितने आहत थे, स्त्री को उसके जीवन के विविध सन्दर्भों में पेश करते हुए उन्होंने स्त्री के प्रति अपने दृष्टिकोण, अपनी सोच को बार–बार उभारते और उजागर करने की चेष्टा की है। प्रेमचन्द के यहाँ स्त्री महज अबला होकर नहीं आई है, वह एक योद्धा के रूप में अपनी सारी कर्मठता के साथ अपने जीवन की विषमताओं, विवशताओं और विडंबनाओं से लड़ती हुईं, अपने को परिस्थितियों के अग्निचक्र में डालकर भी कुंदन की तरह निखरी हुई अस्मिता के रूप में ही हमसे ज्यादातर रूबरू हुई है। यह स्त्री के प्रति प्रेमचन्द का सम्मान है, उसके जीवन के प्रति उनके गहरे संवेदनात्मक सरोकारों का साक्ष्य है, जो इस कहानी में और ऐसी ही दूसरी तमाम कहानियों में पूरी जीवंतता के साथ उजागर हुआ है।''[xiii]

इस प्रकार प्रेमचन्द ने अपनी तमाम कहानियों में स्त्री–चरित्र की पराधीनता को चित्रित किया है। ईदगाह एक ऐसी कहानी है जिसमें बेवा अमीन की परवशता चित्रित है। ईदगाह में जबतक सबलोग हैं, तबतक सभी भाईचारे से बँधे हैं, भेदभाव से ऊपर हैं, बराबर हैं, किंतु जैसे ही नमाज खत्म होती है और लोग ईदगाह से बाहर आते हैं, भाईचारे और बराबरी की दीवार भरभराकर गिर जाती है। जिस के पास पैसे हैं वह मेले का आनन्द लेने लगता है। अमीना ने तीन पैसे देकर हामिद को अकेला भेजा है हामिद उस पैसे से चिमटा खरीदता है, क्योंकि इससे दादी का भोजन बनाते समय हाथ नहीं जलेगा। इस कहानी में नारी की उस पराधीनता का चित्रण हुआ है, जो आर्थिक कारणों से संभव हो सका है। अमीना हामिद के हाथ में चिमटा देखकर चौंक उठती है–

''यह चिमटा कहाँ था?
'मैंने मोल लिया है।'
'कै पैसे में?'
'तीन पैसे दिये।'

अमीना ने छाती पीट ली। यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पिया। लाया क्या यह चिमटा सारे मेले में तुझे और कोई चीज न मिली, जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया।

हामिद ने अपराधी भाव से कहा– ''तुम्हारी उँगलियाँ तवे से जल जाती थीं, इसलिए मैंने उसे ले लिया।''[xiv] अमीना की यह पीड़ा ऐसी है जो अपने बच्चे हामिद की परवशता के कारण है। अमीना को दुख है कि बच्चा भूखा होगा और हामिद को चिन्ता थी कि दादी का हाथ न जलने पाये। बेवा अमीना कितना दुखी होती है कि हामिद दो बजे तक बिना खाये–पिये रह गया है। धनाभाव के कारण वह तड़पकर रह जाती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार प्रेमचन्द ने अपने कथा साहित्य में नारी की विवशता और विडंबना का सटीक चित्रण किया है। नारी कहीं आर्थिक कारणों से पराधीन है तो कहीं काल के थपेड़े के कारण अनाथ और विधवा होकर पराधीनता का दंश झेलती है। कहीं दहेज प्रथा के कारण नारी की दुर्दशा होती है। निर्मला, सेवासदन आदि उपन्यास ऐसा है जहाँ नारियाँ दहेज–प्रथा की बलि–वेदी पर शहीद होती हैं। गोदान में विधवा विवाह का दंश है तो आर्थिक कारण भी स्त्री की पराधीनता के लिए जिम्मेदार है। धनिया की संपूर्ण कमाई बीस आना होरी के गोदान में चला जाता है। धनिया विवश है, फिर भी परंपरा का निर्वाह करती है और अपनी सारे दिन की कमाई दान कर देती है। दलित स्त्री सिलिया का ब्राह्मण से विवाह भी स्त्री की पराधीनता की ओर संकेत करता है, क्योंकि समाज उसे जल्दी स्वीकार नहीं करता है। प्रेमचन्द की कहानियों भी स्त्री परवशत का

उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। कफन, ठाकुर का कुआँ, बूढ़ी काकी, बेटों वाली विधवा, स्वामिनी, शांति आदि ऐसी कहानियाँ हैं जो नारी–जीवन की पराधीनता को चित्रित करती हैं।

संदर्भ सूची

[i]- प्रेमचन्द, गोदान, विश्व विजय प्रा0लि0, नई दिल्ली, पृ0 384

[ii]- प्रेमचन्द, निर्मला, विजय प्रकाशन मन्दिर, वाराणसी, पृ0 176

[iii]- प्रेमचन्द, सेवासदन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 247

[iv]- प्रेमचन्द, प्रतिज्ञा, अरुणोदय प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, पृ0 6

[v]- प्रेमचन्द, गोदान, विश्व विजय प्रा0लि0, नई दिल्ली, पृ0 125–126

[vi]- वही, पृ0 126

[vii]- डॉ0 शिवकुमार मिश्र, कहानीकार : रचनादृष्टि और रचना शिल्प, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0 53

[viii]- वही, बूढ़ी काकी, पृ0 151–152

[ix]- वही, कफन, पृ0 202–204

[x]- वही, बेटों वाली विधवा, पृ0 115

[xi]- प्रेमचन्द, मानसरोवर (शांति) भाग एक, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 92

[xii]- वही, स्वाभिमनी, पृ0 112

[xiii]- डॉ0 शिवकुमार मिश्र, कहानीकार प्रेमचन्द : रचनादृष्टि और रचनाशिल्प, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0 119

[xiv]- प्रेमचन्द, मानसरोवर (भाग एक), ईदगाह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 41